इतिहास लेखन में
राजस्थानी सम्पादित ग्रंथों की उपयोगिता

सम्पादक

डॉ० हुकमसिंह भाटी

निदेशक

राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर

(पूर्व निदेशक प्रताप शोध प्रतिष्ठान उदयपुर)



प्रकाशक

राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर

(ज. ना. व्यास विश्वविद्यालय से मान्यता प्राप्त शोध-केन्द्र)

प्रकाशक
राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर
चौपासनी शिक्षा समिति द्वारा संस्थापित



मूल्य 150 00
सन 1997



मुद्रक
भारत प्रिन्टर्स (प्रेस)
जोधपुर

विषय-सूची

आमुख

राजस्थान के शोध सस्थान हमारे सकडा वर्षो के साहित्य, सस्कृति और इतिहास की अमूल्य निधि का सजोने सवारने और इसे प्रकाश मे लाने का उल्लेखनीय काय कर रहे ह, परन्तु ऐसे प्रतिष्ठानो की उपयोगिता और उपलब्धिया के बारे मे लोगो को बहुत कम जानकारी है। प्राचीन पाण्डुलिपिया की खोज करना फिर उह ठीक मे पढकर सही सही अथ निकालना और उनका सम्पादन कर प्रकाशित करना कठिन काय है। लम्बे समय की साधना और चितन मनन करने क बाद ही यह काय हो पाता है। वस्तुत लिपि, भाषा, स्थानीय सस्कृति और समग्र इतिहास की ठोस जानकारी रखने वाला विद्वान ही ऐसा रचनात्मक काय सम्पादित कर सकता है।

यह हमारे लिए सौभाग्य की बात है कि राजस्थानी शोध सस्थान, चौपासनी मे सीमित साधनो के बावजूद भक्ति जन व लोक साहित्य के अलावा न कवल इतिहास की हजारो पाण्डुलिपिया का सग्रह हुआ है बल्कि अनेक महत्त्वपूण ग्रथ रत्न सुसम्पादित होकर प्रकाश म आये ह। प्रारम्भ से ही शोध पत्रिका 'परम्परा' के हर अक म किसी एक साथक विषय या महत्त्वपूण पाण्डुलिपि को प्रकाशित किये जाने की नीति को अगीकार किया है। इससे देश विदेश के कई विद्वान हमारे सस्थान से जुडे है और उन्होने यहा के प्राचीन चित्रा, पाण्डुलिपियो और प्रकाशनो का पूरा पूरा लाभ उठाया है।

इस वष राष्ट्रीय अभिलेखागार दिल्ली से पाण्डुलिपिया के परिरक्षण हेतु अनुदान प्राप्त हुआ तथा अनेक योजनाए राज्य और भारत सरकार के विचाराधीन है। इतना ही नही अब कालेज शिक्षा से जुड जाने के फलस्वरूप सस्थान न उच्च शिक्षा के के द्र के रूप म अपना विधिवत स्थान बना लिया है। इस प्रकार अनुसधान की सभी गतिविधिया प्रगति के पथ पर है। निदेशक की भावना के अनुरूप हम सस्थान म कुछ नये उपकरण लगाने के अतिरिक्त ठिकाना, घरानो व मदिरा की नष्ट होती पुरालेखीय सामग्री को बचाने के लिए प्रयत्नशील हैं।

इस पुस्तक म राजस्थानी सम्पादित ग्रथो की इतिहास लेखन म उपयोगिता के बार मे शोध पूण आलेख प्रकाशित किये गये है। इससे न केवल राजस्थानी भाषा के नये ग्रथा व सूत्रा का पता लगगा बल्कि इतिहास लेखन की धारा को एक नया बल मिलेगा ऐसा मेरा विश्वास है। इसके लिए सभी विद्वान साधुवाद के पात्र है। यह पुस्तक स्वत त्रता की स्वण जयती के अवसर पर राष्ट्र को समर्पित है।

खेतसिह राठौड
अध्यक्ष
चौपासनी शिक्षा समिति जोधपुर

सम्पादकीय

राजस्थान के इतिहास लेखन मे राजस्थानी भाषा के प्राचीन अर्वाचीन ग्रथो का मूलभूत आधार स्रोतो के रूप मे विशिष्ट महत्त्व रहा है। यहाँ ख्यात, बात हाल हकीकत, विगत रासो, विलास आदि राजस्थानी की ऐतिहासिक कृतियो का विपुल भण्डार है जो इस बात की ओर सकेत करता है कि यहाँ साहित्य सृजन के साथ साथ इतिहास की घटनाओ को सजोने की भी पुख्ता परम्परा रही है। हस्तलिखित ग्रथो की लिपि कुछ अस्पष्ट और दुरुह होने के कारण पढ़ने मे कठिनाई आती है। इसके अतिरिक्त शब्दो के बीच जगह नही छोडने के कारण उनकी बनावट को ध्यान मे रखते हुए बडी सावधानी से पढना पडता है फिर भाषा को समझकर उसका अर्थ निकालना पडता है। यही कारण है कि इस प्रकार के ग्रथो का ठीक से सम्पादन प्रकाशन किये जाने के बाद ही इतिहास लेखन मे उनका पूर्णरूपेण उपयोग किया जाना सम्भव होता है। प्रयास करने पर राजस्थानी गद्य की रचनाओ को तो फिर भी समझा जा सकता है पर तु राजस्थानी पद्य की कृतियो को समझना बडा कठिन है।

वस्तुत पाण्डुलिपियो का सम्पादन काय सरल नही है। यह काय समय साध्य तो है ही साथ ही लिपि और भाषा के ज्ञान के अलावा इतिहास जसे विषय का पूर्ण ज्ञान होना भी परम आवश्यक है। क्योकि सम्पादन प्रणाली मे शुद्ध पाठ छापने के अलावा पाठान्तर व शब्दार्थ देने ऐतिहासिक टिप्पणिया लिखने तथा ग्रथ के महत्त्व को भलीभांति उजागर करने के साथ ही नामानुक्रमणिकाए आदि आवश्यक परिशिष्ट जोडने का श्रम करना पडता है। इसके लिए सम्पादक का न केवल पाण्डुलिपियो का ध्यान से अध्ययन करना पडता है बल्कि अनेक दूसरे ग्रथो पर भी दृष्टि दौडानी पडती है। यही कारण है कि उसे ग्रथो के सम्पादन मे कई वर्षों तक साधना करनी पडती है।

अनेक सस्थाओ से दुर्लभ पाण्डुलिपियो का सम्पादन प्रकाशन हुआ है लेकिन इन सम्पादित ग्रथो की उपयोगिता के बारे मे शोधार्थियो को बहुत कम जानकारी है। इनमे किस प्रकार की घटनाओ का वणन हुआ है और उनके सूत्र किस प्रकार इतिहास लेखन मे उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं इसकी सही जानकारी प्रस्तुत करना हमारा मुख्य उद्देश्य रहा है।

हमने सम्पादित ग्रथो का विभाजन दो भागो मे किया है—राजस्थानी गद्य और राजस्थानी पद्य। राजस्थानी गद्य मे ख्यात ग्रथो का विशेष महत्त्व रहा है। इतिहास लेखन मे ये ख्यातें सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध हुई हैं क्योकि ख्यात लेखन का मूल उद्देश्य ही इतिहास की घटनाओ को उजागर करना रहा है। अद्यावधि प्रकाश मे आई ख्यातो मे नणसी री ख्यात सबसे प्राचीन है। इस ख्यात का सम्पादन प्रकाशन एव हिन्दी मे अनुवाद हो जाने के बावजूद भी अभी तक इतिहास लेखन मे पूर्ण रूप से उपयोग नही हुआ है। इसमे अनेक ऐसे सूत्र बिखरे पडे हैं जिनकी ओर शोधार्थियो का ध्यान नही गया है। राजस्थान के रजवाडो का इतिहास आपस मे गूथा हुआ है। जब तक पूरी ख्यात का ध्यानपूर्वक अध्ययन नहीं किया जाता शोधार्थियो को अपने विषय के सूत्र नहीं मिल सकते। मेवाड की भौगोलिक स्थिति, जैसलमेर राज्य के आय के स्रोत

विविध राजवंशो की भूमिका आदि कितने ही सूत्र ख्यात में भरे पड़े हैं। 'नणसी री ख्यात' की तरह 'मारवाड़ रा परगना री विगत' भी महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। यद्यपि राजनीतिक इतिहास लेखन में इसका कुछ उपयोग हुआ है परन्तु आर्थिक व सामाजिक पहलुओं के ऐसे अनेक सूत्र इसमें सन्निविष्ट हैं जिनसे कृषि व्यवस्था ग्रामीण उद्योग जल स्रोत, गांव की बसावट आय के साधन प्रचलित मापतौल, विभिन्न जातियों और उनका व्यवसाय सामाजिक मान्यताएं आदि पर नये सिरे से शोध कार्य किया जा सकता है।

'महाराजा मानसिंह री ख्यात' न केवल तत्कालीन समूची राजनीतिक घटनाओं का दिग्दर्शन कराती है बल्कि राज्य प्रशासन से सम्बन्ध व जातीय संगठन सामन्तों और राज्य के प्रशासन कार्यों के साथ जुड़े अधिकारियों का योगदान और सामाजिक मान्यताओं के साथ ही दूसरे राज्यों के साथ सम्बन्ध तथा अंग्रेजों की दखल आदि पहलुओं के अध्ययन हेतु भी उपयोगी है। इसी प्रकार बांकीदास की ख्यात में ऐसी कुछ विशिष्ट बातें मिलती हैं जिनका उल्लेख अन्यत्र नहीं हुआ है। इस ख्यात में प्रायः सभी राजवंशों और अनेकानेक जातियों के बारे में कुछ न कुछ नई जानकारी प्राप्त होती है। यह ख्यात इतिहास की अनेक लुप्त कड़ियों को जोड़ने में सहायक है। बांकीदास द्वारा लिखी गई सारी बातें सम्पादित ख्यात में सम्मिलित नहीं की गई हैं। अतः इस ख्यात का नये सिरे से सम्पादन किया जाना आवश्यक है। 'ख्यात देश दर्पण' बीकानेर नरेशों की मुख्य उपलब्धियों के साथ ही जागीरदारों एवं पट्टेदारों के बारे में महत्त्वपूर्ण सामग्री संजोये हुए है। इसमें नरेशों सम्बन्धी जो विवरण दिया गया है वह दयालदास की ख्यात में कुछ भिन्न है और कुछ नवीन सूत्र भी जोड़े गये हैं। पट्टेदारों की विगत में जागीर में गांव रेख व चाकरी का उल्लेख होने के कारण यह यहाँ की जागीर व्यवस्था को समझने में भी सहायक है।

जिस प्रकार मारवाड़ में ख्यातें विस्तार से लिखी गई वैसी दूसरे राज्यों में लिखी हुई नहीं मिलती हैं। 19वीं शताब्दी के अंत में लिखी गई 'जैसलमेर की ख्यात' बहुत संक्षेप में वहाँ के शासकों की गतिविधियों को उजागर करती है। वस्तुतः यह ख्यात न होकर वंशावली है। इसमें जैसलमेर की तवारीख से मिलती जुलती घटनाएं अंकित हैं। यह ख्यात विशेषतः भाटियों की शाखाओं के प्रादुर्भाव उनके ठिकानों तथा वैवाहिक सम्बन्धों की जानकारी के लिए महत्त्वपूर्ण है। हाल ही में प्रकाशित 'मोगू दा री ख्यात' न केवल वहाँ के झालाओं की उपलब्धियों को उजागर करती है बल्कि महाराणाओं और ठिकानों से सम्बन्ध भोमियों की भूमिका कुरब कायदे निर्माण काम, तीर्थ यात्राएं आखेट वर्णन आदि कितनी ही नवीन घटनाओं का इसमें वर्णन मिलता है जो नव इतिहास लेखन के लिए उपयोगी है।

ख्यात ग्रन्थों की तरह ऐतिहासिक बातें इतिहास जानने का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। मारवाड़ की कुछ ऐतिहासिक बातें परम्परा के रूप में प्रकाशित की गई थीं। ऐसी अनेक बातों का सम्पादन प्रकाशन किया जाना अभी तक शेष है। मेवाड़ में मारवाड़ की भांति ऐतिहासिक बातें लिखने की परम्परा नहीं रही है। वहाँ केवल रावल राणाजी री बात प्रकाश में आई है जो मेवाड़ के शासकों के बारे में कुछ

विशिष्ट बातो को उद्घाटित करती है। वार्ताकार ने महाराणाओ की उपलब्धियों के साथ ही राजघराने मे होने वाले षड्यन्त्रो का खुलकर वर्णन किया है और जोहर व साके आदि युद्ध अभियानो के बारे मे सटीक जानकारी दी है।

अब राजस्थानी पुरालेखीय बहियों के सम्पादन की ओर विद्वानो का ध्यान आकृष्ट हुआ है। महाराणा राजसिंह की 'पट्टा बही' मे जहाँ आय व्यय का बजट और महाराणा के व्यक्तिगत खर्च के अतिरिक्त पटटेदारो की विगत मे पटटे के गाँव, रेख, जागीर हस्तान्तरण, जब्ती, बाटा प्रणाली आदि कितने ही महत्त्वपूर्ण पहलुओ की जानकारी मिलती है वही 'परगना बही' मे खालसा और सासण के गाँवो की रेख का पता चलता है। इन दोनो बहियो को मिलाकर तत्कालीन मेवाड की प्रशासनिक व्यवस्था का भली भाँति अध्ययन किया जा सकता है। इसी तरह जोधपुर की 'हुकूमत बही' तत्कालीन मारवाड के जागीरदारो की जागीर, रेख, चाकरी जागीर वृद्धि आदि जागीर व्यवस्था को समझने मे सहायक है। जोधपुर राज्य की दस्तूर बही मे राजघराने मे आयोजित विविध समारोह, उत्सव आदि का ब्योरा जहाँ तत्कालीन रीति रिवाजो मान्यताओ और सस्कारो की जानकारी कराता है वही जसलमेर बूदी मेवाड जयपुर आदि राजघरानो के साथ मारवाड के सम्बन्धो का पता लगाने में भी यह सामग्री उपयोगी है। परन्तु इस बही की समूची सामग्री अभी तक सुसम्पादित होकर प्रकाश मे नही आई है। 'दारोगा दस्तरी बही' पुरानी नहीं है परन्तु जिस ढग से इसमें राज परिवार से जुडी घटनाओ का आँखो देखा हाल लिपिबद्ध है वह बडा ही रोचक होने के साथ ही अर्वाचीन परम्पराओ जनकल्याणकारी कार्यों और विविध आयोजनो की प्रक्रिया को समझने मे सहायक है। इस प्रकार की प्राचीन बहियों के साथ इसका तुलनात्मक अध्ययन कर रीति रिवाजो की बदलती स्थिति का आकलन किया जा सकता है।

राजस्थानी गद्य रचनाओ के साथ ही अनेकानेक पद्य रचनाए भी सुसम्पादित होकर प्रकाश में आई हैं जिनम प्राचीनता की दृष्टि से अचलदास खीची री वचनिका और 'कान्हडदे प्रबन्ध' मुख्य हैं। इनमे से प्रबन्ध के अनेक सूत्र खोजे जा सकते हैं। साथ ही ये स्वातन्त्र्य प्रेम, स्वामी भक्ति निस्वार्थ त्याग आदि सस्कृति के पहलुओ को समझने में सहायक हैं। ये ग्रन्थ न केवल खीची व सोनगरा साचोरा चौहानो की कीर्ति को ही उजागर करते हैं बल्कि उनसे जुडे अनेक योद्धाओ की भागीदारी को भी दर्शाते हैं।

खेड और मालानी का इतिहास अभी तक पूर्ण रूप से प्रकाश मे नही आया है। इसके लिए 'वीरवाण' ग्रन्थ सहायक सिद्ध हो सकता है। राठौडो के प्रारम्भिक इतिहास को जानने की दृष्टि से भी इस ग्रन्थ की विशिष्ट उपयोगिता है। मल्लीनाथ वीरमदे गोगादे और चूण्डा ने किस प्रकार अपनी सत्ता कायम करने के लिए अथक सघर्ष किया उसका सटीक वर्णन इस ग्रन्थ मे हुआ है। 'गजगुण रूपक बध' महाराजा गजसिंह के युद्ध अभियानों मारवाड मुगल सम्बन्धों, सन्धि प्रबन्ध और सामन्तो की भूमिका के अध्ययन हेतु महत्त्वपूर्ण स्रोत है। महाराजा अभयसिंह की सरबुलद खा पर चढ़ाई को लेकर रचे गये 'राजरूपक' मे जहाँ महाराजा अजीतसिंह कालीन घटनाओ का क्रमवार प्रामाणिक विवरण उपलब्ध है वही जोधपुर के शासको का मुगलों तथा दूसरे राज्यो के साथ सम्बन्ध यहाँ के शासका का योगदान, युद्ध के तौर-तरीके और

सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराओं की जानकारी के लिए भी उपयोगी है। महाराजा धर्मसिंह के इसी अभियान को लेकर रचे गये 'सूरज प्रकाश' में यद्यपि घटनाओं का इतने विस्तार और बारीकी के साथ वर्णन नहीं हुआ है तथापि तत्कालीन सामाजिक मान्यताओं व संस्कृति को समझने में यह ग्रंथ सहायक है। महावजस प्रकाश वाघनवाड़ा में महासिंह और रणबाज खां के बीच हुई लड़ाई के विवरण को दर्शाता है। इसमें भाग लेने वाले योद्धाओं के क्रिया कलापों और सेना की व्यूह रचना के बारे में जो सूत्र मिलते हैं वे सब प्रबन्ध और सामन्तों की भूमिका के अध्ययन हेतु उपयोगी हैं।

मेवाड़ में रासो काव्य लिखे जाने की पुख्ता परम्परा रही है। रायमल रासो, 'खुम्माण रासो' राणा रासो और सगत रासो इस कथन की पुष्टि करते हैं। 'सगत रासो' ग्रंथ से मेवाड़ के इतिहास पर सर्वथा नया प्रकाश पड़ा है। इसमें महाराणा प्रताप के अनुज शक्तिसिंह और उसके वंशजों की सामरिक उपलब्धियों का सटीक वर्णन हुआ है। इस प्रकार यह ग्रंथ शक्तावतों की भूमिका को समझने के साथ ही इतिहास की कई लुप्त कड़ियों को जोड़ने में भी सहायक है।

महाराणा राजसिंह कालीन मेवाड़ के इतिहास को समझने के लिए 'राज विलास' ग्रंथ अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। यह ग्रंथ मेवाड़ मुगल सम्बन्ध, सामन्तों की भूमिका और महाराणा की सामरिक उपलब्धियों के अतिरिक्त राज समुद्र झील का निर्माण कार्य, स्थापत्य कला और जनकल्याणकारी प्रवृत्ति का बोध कराता है। महाराणा भीमसिंह की प्रशस्ति में रचे गये 'भीम विलास' में उज्जैन और महोली के युद्ध के अतिरिक्त मराठों से लड़ी गई अन्य लड़ाइयों का विवरण जहाँ विस्तार से मिलता है वहीं धर्म के प्रति लोगों की आस्था, दान पुण्य, विवाह सम्बन्धी रीति रिवाज, सती प्रथा, नजराना, योद्धाओं की स्वामी भक्ति, जनसमुदाय के व्यवसाय आदि कितने ही सूत्र इसमें खोजे जा सकते हैं। सोढा पवारों की कीर्ति का गान 'सोढायण' में हुआ है। इसमें रताकोट व उमरकोट के सोढों की सामरिक उपलब्धियों के आलोक में गोधियार के जगमाल सोढा जैसे धर्म रक्षक की वीरता और शौर्य को बड़ी खूबी से दर्शाया गया है। सोढा पवारों का इतिहास अभी तक अन्धकार में है। इसे प्रकाश में लाने की प्रक्रिया में यह ग्रंथ उपयोगी सिद्ध होगा।

विद्वानों ने इन सभी ग्रंथों की विवेचना अपने अपने ढंग से की है। ये ग्रंथ न केवल इतिहास लेखन में बल्कि अप्रकाशित शिलालेखों, ताम्रपत्रों, पाण्डुलिपियों के सर्वेक्षण एवं सम्पादन कार्य को आगे बढ़ाने में भी सहायक हैं।

मैं उन सभी विद्वानों के प्रति आभार व्यक्त करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ जिन्होंने आलेख तैयार करने का बीड़ा उठाया। राजस्थानी शब्द कोश के सम्पादक डा सद्दीक मोहम्मद ने बड़ी तत्परता से प्रूफ देखने के साथ ही सम्पादन प्रक्रिया में सहयोग दिया, वे धन्यवाद के पात्र हैं। आशा है राजस्थानी साहित्य और इतिहास के अनुसंधान कार्य को आगे बढ़ाने में हमारा यह श्रम उपयोगी सिद्ध होगा।

—हुकमसिंह भाटी

मुहणोत नैणसी री ख्यात*

—डा० हुकमसिंह भाटी, जोधपुर

'मुहणोत नणसी री ख्यात' समूचे राजस्थान के इतिहास को सजोने वाला सबसे प्राचीन ग्रन्थ है। इसका सकलन जोधपुर महाराजा जसवतसिंह के दीवान और सनिक अधिकारी मुहणोत नणसी (जन्म 1610 ई०) ने 1643 1665 ई० के मध्य किया। नणसी के आत्मघात (1670 ई०) और उसके वशजो की दुदशा ने ख्यात को लम्बे समय तक गहरी समाधि म लीन रखा। जेम्स टाड को यह ख्यात सुलभ नही हुई वरना उसके द्वारा लिखा गया इतिहास और अधिक पुष्ट होता। सवप्रथम इतिहास लेखन म इसका उपयोग श्यामलदास ने किया। इसके बाद गौरी शकर हीराच द ओझा के राजपूताने के इतिहास का यह आधार ग्रन्थ बना। इसका हिन्दी म अनुवाद करने का श्रेय रामनारायण दूगड को जाता ह जबकि मूल पाठ का सम्पादन बद्रीप्रसाद साकरिया ने करके इतिहास जगत मे इसे और प्रसिद्धि दिलाई।

यह ख्यात न केवल राजस्थान बल्कि गुजरात, मालवा (मध्य प्रदेश) के विविध राजवशो और उनसे अकुरित हुई शाखाओ प्रशाखाओ की महत्त्वपूण उपलब्धियो का विवरण सजाए हुए है। राजवशो से सम्बधित अनेकानेक वशावलिया वार्तें, हाल, हकीकत विगत आदि शीषक की अनेक कृतिए इस ख्यात म सन्निविष्ट हैं जो राजनीतिक इतिहास के अलावा सामाजिक और सास्कृतिक इतिहास को समझने और प्रामाणिक इतिहास लेखन के लिए अत्य त उपयोगी है। इसम इतिहास के इतने सूत्र बिखरे हुए मिलते हैं कि हम इतिहास के किसी भी पहलू पर शोध काय कर सकते हैं। वस्तुत ख्यात को समझने के लिए पनी दृष्टि की आवश्यकता है।

इस ख्यात के सभी पहलुओ का विवेचन किया जाना मुश्किल है तथापि कुछ महत्त्वपूण राजवशो और उनसे सम्बधित घटनाओ के आलोक म यह उजागर करने का प्रयास करू गा कि प्रस्तुत ख्यात किस प्रकार इतिहास लेखन म उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

गहलोत राजवश —

इस ख्यात मे चित्तौड के गुहिल वश का प्रादुर्भाव बापा रावल से स्वीकार करते हुए उसके द्वारा मौर्यो मे राज्य हस्तगत किये जाने की घटना दी है जो इतिहास

---

* सम्पादक बद्रीप्रसाद साकरिया राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर

की कसौटी पर खरी उतरती है। बापा रावल से लगाकर रावल रतनसिंह तक की वशावली म कुछ त्रुटिए रह गई हैं फिर भी वशक्रम जोडने म यह वशावली उपयोगी सिद्ध हुई है। रावल रतनसिंह के समय अलाउद्दीन खिलजी की चढाई का विवरण इतिहास लखन के लिए उपयोगी है। राणा हमीर, राणा लाखा राणा मोकल व महाराणा कुम्भा के बारे मे सक्षिप्त जानकारी दी है। इसमें महाराणा कुम्भा कालीन कुम्भलमेर म निर्मित 100 मदिर 700 श्रीमाली ब्राह्मणो के घर इत्यादि की जानकारी विशष महत्त्व रखती है।[1]

महाराणा विक्रमादित्य और उदयसिंह के समय चित्तौड के दूसरे व तीसरे साके का केवल सक्षिप्त विवरण दिया है। इन अभियानो में वीरगति प्राप्त योद्धाओ के बार म ख्यात मौन है परन्तु आगे चलकर विभिन्न खापो का वणन दिया है उसमे यह सकेत मिलता है कि अमुक योद्धा किस युद्ध म कामा आया।

महाराणा प्रताप के समय उसक भाई जगमाल व सगर आदि किस प्रकार विमुख होकर शाही सेवा म प्रविष्ट हुए उनके बारे म सटीक विवरण दिया है। यह विवरण मेवाड मुगल सम्ब धो की जानकारी के लिए उपयोगी होने के साथ साथ प्रताप कालीन मेवाड की सेना परिस्थितियो को समझने म सहायक है।

महाराणा उदयसिंह द्वारा उदयपुर बसाये जाने सम्ब धी जो विवरण दिया है वह अत्यन्त महत्त्वपूण है। यहाँ के जलाशय कोट महल बाग बगीचे, शहर मे बसने वाली जातियों और उनके घरो की सख्या आदि सूत्र नगरीयकरण के अध्ययन हेतु सहायक हैं।[2]

मेवाड की भौगोलिक स्थिति मे यहाँ के नदी-नाला पहाडो घाटियो, जलस्रोतो खनिज सम्पदा आदिवासी एव खेतीहर जातियो फसलो, वृक्ष पौधो प्रमुख नगरो मदिरो और पडोसी राज्यो के बारे मे प्रामाणिक जानकारी दी गई है।[3] इसका दृष्टिपात करते हुए हम मेवाड की राजनीतिक और सास्कृतिक घटनाओ का सही रूप से परीक्षण कर सकते है। लेकिन भौगोलिक स्थिति के इन महत्त्वपूण II दर्भो को इतिहास लेखन मे अभी तक स्थान नही मिला है।

महाराणा अमरसिंह का मुगलो का साथ लम्बे समय तक सघष चला, उसका विस्तृत विवरण[4] इतिहास लेखन के लिए अत्य त ही उपयोगी है क्योकि मुगल सेना की हलचलो व मेवाड के योद्धाओ की भूमिका को हम भलीभाति समझ सकते हैं।

---

1 ख्यात I पृ 1 16
2 वही पृ 22 24
3 वही पृ 32 34 40 47 द्रष्टव्य—युग पुरुष महाराणा प्रताप म मेरा लख मेवाड की भौगोलिक आर्थिक स्थिति और प्रताप पृ 67 78
4 ख्यात I पृ 56 58

इसके अलावा डूगरपुर, बासवाडा और देवलिया (प्रतापगढ) के बारे मे मुख्य रूप से राजनीतिक घटनाओ का उल्लेख हुआ है[1] जो इन राज्या की राजनीतिक गतिविधियो की जानकारी के लिए उपयोगी होने के साथ साथ इन नवराज्या की निर्माण प्रक्रिया को समझने और तत्कालीन परिस्थितियों का पता लगाने म सहायक है।

महाराणा राजसिंह के वणन में औरगजेब की ओर से उक्त महाराणा को मनसब (पाच हजार) म मिले परगना की विगत[2] विशेष महत्त्व रखती है परन्तु इसका उपयोग अभी तक इतिहास लेखन म नही हुआ है।

मेवाड के महाराणाओ से मुख्यत दो शाखाए प्रस्फुटित हुई हैं। चूण्डावत व शक्तावत। मेवाड के इतिहास मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले स्वामीभक्त चूण्डावत वीरो क वशक्रम जानने और उनकी मुख्य उपलब्धिया[3] की जानकारी के लिए यह ख्यात उपयोगी है। पर तु चूण्डावता क इतिहास लेखन म इस ख्यात की उपेक्षा की गई है। इसी प्रकार शक्तावता के वशक्रम और उनके वीरोचित कार्यो का विवरण[4] ख्यात मे मिलता है। मैंने जगतरासो की सम्पादन प्रक्रिया म इसका भरपूर उपयोग किया है। अब इतिहास लेखन मे इस सामग्री का ध्यानपूर्ण अध्ययन किये जाने की आवश्यकता है।

चौहान राजवश —

चौहानो का बूदी कोटा, सिरोही जालौर साचोर, सिवाना आदि कई भू भागा पर प्रभुत्व रहा। ख्यात म इन राज्या और चौहान साम तो के बारे म विशेष जानकारी मिलती है। उदाहरण के लिए—बू दी की हकीकत म वहाँ के पहाडो जलाशया पेड पौधा, बसन वाली जातियो का विवरण प्रस्तुत करते हुए बू दी के पडोसी राज्यो (गागरूण मऊ खीची चौहान) के बारे म समुचित जानकारी दी गई है।[5] प्रजा पर लगन वाले करा का उल्लेख भी हुआ है पर तु इतिहास लेखन मे इन सूत्रा को अभी तक स्थान नही मिला है। हाडा चौहाना न बू दी के मीणा से किस प्रकार राज्य हस्तगत किया इसका सटीक वृत्ता त ख्यात म दिया गया है। बू दी के हाडा की वशावली और मुख्य हाडा शासका की उपलब्धिया का विवरण[6] बू दी के इतिहास लेखन म उपयोगी सिद्ध हुआ है।

---

1 ख्यात I पृ 88 96
2 वही पृ 52 53
3 वही पृ 66 70 द्रष्टव्य चूण्डावत वश प्रकाश स हुकमसिंह भाटी प्रताप शोध प्रतिष्ठान
4 वही पृ 26 28 द्रष्टव्य जगतरासो परिशिष्ट 2 प 572 607
5 वही पृ 113 116
6 वही पृ 97 112

सिरोही के देवडा की वशावली और राव मानसिह, राव रायसिह और राव सुरताण के बारे म इसम विस्तृत जानकारी मिलती है।[1] विशेषत राव सुरताण का महाराणा प्रताप के साथ सम्ब ध अकबर और राव सुरताण के बीच चले सघष का बारिकी से अध्ययन किये जाने हेतु यह ख्यात अत्य त महत्त्वपूर्ण है। ख्यात के अलावा म राव सुरताण देवडा की उपलब्धियों का आकलन किया जा सकता है।

देवडा के गाव पट्टा की विगत और उनकी प्रमुख शाखाओं की वशावलिया सिरोही के सामतो वग के इतिहास लेखन हेतु उपयोगी है।

इस ख्यान म जालौर के सोनगरा शासकों की वशावली के साथ ही उनके बारे मे सक्षिप्त जानकारी दी है और कान्हडदे के समय अलाउद्दीन खिलजी की चढाई का विवरण विस्तार से दिया है। यह सामग्री जालौर के इतिहास लेखन हेतु महत्त्वपूर्ण है। सोनगरा चौहानों का जालौर पर से अधिकार खत्म हो जाने के बाद कुछ समय के लिए उनका चित्तौड और फिर पाली लम्बे समय तक स्वामित्व रहा। विशेष रूप स पाली के सोनगरा अखेराज व उनके वशजो की भूमिका को समझने के लिए यह ख्यात अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई है। जोधपुर राज्य की ओर से समय समय पर इन सोनगरा चौहानो को अनेक गाव जागीर के रूप मे मिले, इसके बारे मे भी ख्यात कई महत्त्वपूर्ण सूत्र सजोए हुए है। सोनगरा चौहानो की तरह साचोरा चौहानो का विवरण भी इसम दिया गया है[3] जो इतिहास लेखन के लिए आधारभूत स्रोत के रूप म मान्य है। डा० दशरथ शर्मा ने इन चौहानो की वशावलिया के सहारे शिलालेखो की खोज और त्रुटित वशावलिया को सही करने का काय सम्पादित किया। इन चौहानो के अतिरिक्त इसम बागडिया[4] बोडा[5] कापलिया[6] और खीची[7] चौहानो के बारे में बातें और वशावलिया भी हैं जो इनके इतिहास लेखन हेतु उपयोगी है। ख्यात म उद्धृत घटनाए इन चौहानो की भूमिका और दूसरे राजवशो के साथ इनके सम्ब धो का बोध कराती हैं अर्थात् गहलोत, भाटी, राठौड आदि राजवशो का अध्ययन करने समय इस सामग्री का भी ध्यानपूर्ण विवेचन किये जाने की आवश्यकता है।

1 ख्यात I पृ 134 157
2 वही पृ 158 179
3 वही पृ 202 244 द्रष्टव्य—मेरा सोनगरा व साचोरा चौहानो का इतिहास प्रकाशक मनुर्नसिह चौहान
4 वही पृ 119
5 वही पृ 245-248
6 वही पृ 248 250
7 वही पृ 250 257

भाटी राजवश —

इस ख्यात म भाटी राजवश को ग्रत्य त प्राचीन सिद्ध करते हुए इसका सम्ब ध श्री कृष्ण से जोडा है पर तु यदुवशिया की वशावली म ग्रनेक नाम छोड दिये हैं जो श्री भागवत् पुराण मे मिलते हैं। इसम मथुरा गजनी, भटनेर, लोद्रवा ग्रौर जसलमेर के भाटिया का क्रमवद्ध विवरण प्रस्तुत करत हुए भाटियो क सघपमय जीवन ग्रौर उनकी उपलि घया को रेखाकित किया है। विजयराज चूडाला, रावल जसल, रावल सालवाहन, रावल कालण रावल लखणसेन, रावल मूलराज, रावल देवराज रावल दूदा रावल घडसी ग्रादि शासका के बारे म विस्तार से प्रकाश डाला गया है पर तु जिस ढग से इतिहास लेखन मे इस समूची सामग्री का उपयोग होना चाहिए ग्रभी तक नही हो पाया है। जसलमर के जौहर-शाको के बारे म भी ख्यात मे प्रामाणिक वृत्तात मिलता है। इसका मिलान हम जसलमेर की शिलालेखीय सामग्री से कर सकत हैं।

जसलमेर म मालरो बाव ग्रर्थात् माल पर लगने वाले कर तथा दान तुलावट ग्रर्थात् तुलाई पर सायर महसूल तथा सीमा मे होकर चलने का महसूल ग्रादि करा का विवरण प्रस्तुत करते हुए हासल के बारे म जानकारी दी है। इसके साथ साथ ही भौगोलिक स्थिति के परिप्रेक्ष्य में जलस्रोता का बोध कराते हुए गेहूँ मू ग ज्वार ग्रादि फसलो तथा पैदा होने वाली सब्जिया की जानकारी दी है।[1] यह सामग्री जसलमर की खेती बाडी ग्रौर राज्य के ग्राय स्रोतो का पता लगाने मे उपयोगी सिद्ध हो सकती है लेकिन ग्रभी तक इतिहासकारो का ध्यान ऐसे सूत्रा की ग्रोर कम गया है।

जसलमेर के शासका से भाटिया की ग्रनेक शाखाए ग्रकुरित हुइ। ख्यात मे पु गल ग्रौर विक्रमपुर के केलण भाटी[2], मारवाड के जसा उजनोत व रूपसी भाटिया[3] के बारे म विस्तृत प्रकाश पडा है। एक ग्रोर जहाँ केलण भाटिया का बीकानेर मे विशेष वचस्व रहा तो दूसरी ग्रोर जसा ग्रौर उजनोत भाटिया ने शासन प्रब ध तथा युद्ध ग्रभियाना म शौय का परिचय देते हुए मारवाड के इतिहास म विशेष भूमिका निभाई जिसके परिणाम स्वरूप उनको समय समय पर जागीरें प्राप्त हुइ। ख्यात मे बडे ही वज्ञानिक ढग से इसका चित्रण हुग्रा है। भाटिया के इतिहास लेखन के लिए ही नही बल्कि मारवाड व बीकानेर म इनकी कारगर भूमिका ग्रौर ठिकानो के निर्माण की प्रक्रिया को समझने म ख्यात के सूत्र महत्वपूण सिद्ध हागे। मैंने भाटियो के वृहत् इतिहास लेखन म ख्यात का ध्यानपूण ग्रध्ययन करने का प्रयास किया है।

---

1 ख्यात II पृ 1 84
2 वही पृ 112 144
3 वही पृ 144 201

राठौड राजवश —

ख्यात म मारवाड क राठौडा स सम्बन्धित सामग्री बिखरी हुई मिलती है। इनका मूल पुरुष राव सीहा और उसके वशज आस्थान, कान्हडदेव मल्लिनाथ जगमाल वीरमदेव, चूण्डा गोगादेव राव रिडमल राव जोधा आदि का बातें विशेष उल्लेखनीय हैं।[1] राठौड किस प्रकार गहलोतो से खेड हस्तगत कर अपना प्रभुत्व जमाने म सफल हुए तथा मल्लिनाथ और उसके वशज कसे बाडमेर पोकरण खावड आदि क्षेत्रो पर अधिकार कर मालानी क्षेत्र के अधिपति बने। फिर आगे चलकर राव चूण्डा मण्डोर पर अधिकार करने म कसे सफल हुआ तथा उसके पौत्र राव जोधा ने जोधपुर की स्थापना कर यहा राठौड राज्य की स्थाई नीव डाली इन घटनाओ का ख्यात म विस्तार स विवरण दिया है। यद्यपि ख्यात म कुछ बातें कपोल कल्पित मिलती हैं जिनकी ओर डा गौरीशकर हीराच द ओझा न हमारा ध्यान आकृष्ट कराया है तथापि इसम उद्धृत बातो के मूल सूत्र इतिहास लेखन म उपयोगी सिद्ध हुए हैं क्योकि जोधपुर राज्य की ख्यात और दयालदास की ख्यात इसके बहुत बाद मे लिखी गई हैं। इसलिए नणसी की ख्यात खेड मालानी और जोधपुर राज्य के इतिहास लेखन के लिए अधिक उपयोगी मानी गई है।

जोधपुर के राठौडो के अलावा बीकानेर[2] और मेडता[3] के राठौडो से सम्बन्धित कुछ बातें ख्यात म सकलित की गई हैं। राव बीका ने किस प्रकार बीकानेर का अलग राज्य स्थापित कर अपनी शक्ति का परिचय दिया और मडता के राव दूदा वीरमदेव और जयमल कसे एक पृथक राज्य स्थापित करन के प्रयास करत रहे पर तु राव मालदेव ने उनके सपनो को साकार नही होने दिया। इन घटनाओ का विस्तार मे विवरण मिलता है।

राठौडो ने अपने वचस्व को स्थापित करन के लिए लम्बे समय तक सघष किया और पग पग पर लडाइया लडकर मारवाड मे स्थाई राज्य स्थापित करने म वे सफल हुए। इस विषय पर अच्छी जानकारी प्राप्त होने क साथ ही युद्ध के तौर तरीके, शासन प्रब ध और नगरीयकरण आदि पहलुओ म अध्ययन हेतु इसका उपयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यह ख्यात राठौडा की वशावली[4] किशनगढ की विगत[5] बीकानेर व जोधपुर के सरदारो की पीढियां[6] और ठिकानो के वशक्रम का

---

1 ख्यात II पृ 266-343 ख्यात III पृ 1 5
2 ख्यात III पृ 13 21
3 वही पृ 38 115
4 वही पृ 177
5 वही पृ 217
6 वही पृ 223 237

बोध कराती है। इसमे पाबू राठौड जैसे लोक देवताओ के जीवन और आदर्श मूल्यो का दिग्दर्शन भी हुआ है।[1]

कच्छवाह राजवश —

ख्यात मे कच्छवाहो की वशावली आदिनारायण से राजा मानसिंह के पौत्र महासिंह (174) तक दी है तथा आगे कच्छवाहो की विगत मे रामचन्द्रजी के पुत्र कुश से कच्छवाहो का प्रादुर्भाव होना लिखा है। राजा नल के पुत्र ढोला द्वारा ग्वालियर बसाने और मारवणी के साथ विवाह करने का उल्लेख है पर तु इन शासको का समय नही दिया है। राजा भारमल राजा भगवानदास, राजा मानसिंह महासिंह आदि के बारे म केवल ववाहिक सम्बन्धो और उनकी सतति से सम्बधित जानकारी दी है। इनके वशजो को कितने गाव पटटे मे मिले तथा कौन किस अभियान में काम आया इसके बारे में ख्यात महत्त्वपूर्ण सामग्री सजोए हुए है।[2] मुख्य रूप से ये वशावलिया कच्छवाह सामन्तो के इतिहास अध्ययन हेतु उपयोगी हैं। कच्छवाह राजाओ के बारे में 'बात' शीर्षक की कोई रचना नही मिलती है। केवल वशावलियो मे उनके वशक्रम को दर्शाने का प्रयास हुआ है। यद्यपि इस राजवश के विस्तृत इतिहास की जानकारी हेतु यह ख्यात इतनी उपयोगी नही है तथापि कच्छवाहों के इतिहास सम्बन्धी कुछ रिक्त कडियो को जोडने मे यह ख्यात एक आधारभूत स्रोत के रूप म मा य है।

पवार राजवश —

इस ख्यात म पवारो की वशावली पवार पकरव से राजा उदयचन्द्र तक दी है। राजा उदयचन्द्र के पुत्र पाल व माधवदेव को क्रमश आबू और पाटण का स्वामी होना लिखा है। पवारो की बात म बाडमेर और ऊमरकोट के सोढा पवारो का विवरण दिया है। कणकोट के सांखलो की पीढिया और उनकी कुछ मुख्य उपलब्धियो का विवरण दिये[3] जाने से इतिहास लेखन के लिए उपयोगी है। महाराणा कुम्भा सांखलो का दोहिता था। इस प्रसग से सांखला और दधवाडिया चारण मेवाड मे आकर बसे। इस प्रकार के अनेक सूत्र ख्यात म उद्धृत हैं जो नव इतिहास लेखन म उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। पवारों के राठोडो भाटियो और गहलोतो के साथ कसे सम्ब ध रहे इसका उद्घाटन भी ख्यात के सूत्र करते हैं।

पारकर व ऊमरकोट के सोढा पवारो की ख्यात[4] मे वहाँ के मुख्य शासको के ववाहिक सम्बन्धों और जसलमेर के भाटियो के साथ हुए झगडो का उल्लेख हुआ है।

---

1 ख्यात III प 58 79
2 ख्यात I प 286 332
3 वही प 336 353
4 वही पृ 355 362

कोई 100 वर्ष प्राचीन मोढायण में सोढा पवारो के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है लेकिन उसकी वंशावली आलोच्य ख्यात से मेल नहीं खाती है। अभी तक सोढ़ा पवारो पर कोई पुस्तक नहीं लिखी गई है, इसकी रूपरेखा तैयार करने में ख्यात उपयोगी है।

सोलंकी —

डा. गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने शिलालेखो और ताम्रपत्रो के आधार पर सोलंकियो का प्राचीन इतिहास लिखकर 1907 ई० में प्रकाशित करवाया लेकिन अभी तक सोलंकियो का अवशिष्ट इतिहास अन्धकार में है। इस इतिहास को प्रकाश में लाने के लिए नणसी की ख्यात उपयोगी सिद्ध हो सकती है। टोडा के सोलंकियो ने चावडा से पाटण कैसे हस्तगत किया इसके बारे में समुचित जानकारी ख्यात में मिलती है। सिद्धराव सोलंकी द्वारा रुद्र महालय प्रासाद का निर्माण कराने और सिधपुर (पाटण से 12 कोस) नगर बसाने का विवरण दिया है।[1]

मेवाड में राव सुरथा सोलंकी को खेराडा (माण्डलगढ से 11 कोस पर स्थित) के 65 गाव मिले हुए थे और इन्हें माण्डलगढ की सुरक्षा का दायित्व सौंपा गया था।[2] उस समय यहाँ इनकी बडी बस्ती थी इसके अलावा राणा रायमल ने राव सुरताण सोलंकी को बदनोर का पट्टा प्रदान किया। मेवाड के इतिहास में इन सोलंकियो की भूमिका को समझने के लिए ख्यात महत्वपूर्ण है। स्वयं राणा रायमल के आदेशानुसार सोलंकियो ने मादडेचा चौहानो को परास्त कर किस प्रकार देसूरी पर कब्जा किया इसका विवरण भी मिलता है। यह सामग्री मेवाड के इतिहास में तत्कालीन सोलंकियो की भागीदारी को समझने में उपयोगी है। इसके साथ ही सोलंकियो का विस्तृत इतिहास लिखने में भी सहायक सिद्ध होगी।

उस समय मेवाड में सोलंकियो के पट्टे में 140 गाव रहे।[3] जब चूण्डावता व शक्तावता का प्रादुर्भाव नहीं हुआ तब सोलंकी भाटी पवार आदि जातियां मेवाड के इतिहास की कर्णधार रही। इस दिशा में शोध करने के लिए भी ख्यात की सामग्री महत्वपूर्ण है।

झाला —

झालो का मुख्य स्थान हलवद था। मूलराज सोलंकी (पाटण) ने महमद झाला को झालावाड के 1800 गाव प्रदान किये। कतिपय मुख्य गावो के राजस्व के बारे में जानकारी दी गई है जिससे इनकी आय का पता लगाया जा सकता है।

---

1 ख्यात I पृ 258 278
2 वही पृ 279 282
3 वही पृ 284 285

मकवाणा भाला की वंशावली प्रस्तुत करते हुए यह दर्शाया गया है कि ये भाला महाराणा सांगा के समय में मेवाड़ में आये और उन्होंने यहाँ के इतिहास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। ख्यात में यह भी संकेत मिलता है कि मानसिंह भाला जोधपुर जाकर रहा और उसे 35,000 रेख का पट्टा दिया गया।[1] यह सामग्री भाला का इतिहास लिखने हेतु उपयोगी है।

इसके अलावा इसमें जाडेजा, दहिया, भायल, चन्द्रावत और क्यामखानियों के बारे में भी महत्त्वपूर्ण जानकारी दी है। यह ख्यात जाति विशेष की इतिहास निर्माण में भागीदारी और दूसरी जातियों के साथ उनके सम्बन्धों का बोध कराती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि समग्र ख्यात का ध्यानपूर्ण अध्ययन किया जाए तो विविध घटनाओं के सन्दर्भ में शासन प्रबन्ध, शस्य प्रबन्ध, व्यापार और वाणिज्य कृषि कर्म, अकाल व सुकाल, जागीर व्यवस्था, सामंतों की भूमिका, नगरों और गाँवों की बसावट, किले व कोटड़िया, मृत्यु स्मारकों, जलाशयों का निर्माण कार्य, पुरातत्त्व अवशेषों, पहाड़ों, घाटियों, नदी नालों, सामाजिक परम्पराओं, रीति रिवाजों, लोक आस्थाओं, लोक देवताओं, ज्योतिष शास्त्र, मनोविज्ञान आदि कितने ही विषयों और पहलुओं के बारे में महत्त्वपूर्ण सूत्र मिलते हैं।

शरणागत रक्षा, वचन पालन, गौरव रक्षा, मर्यादा पालन, स्वामी भक्ति, स्वाभिमान की भावना, दानशीलता, त्याग आदि अनेक मानबिन्दुओं के उदाहरण ख्यात में भरे पड़े हैं जो यहाँ की सांस्कृतिक चेतना को समझने में सहायक हैं। इस प्रकार यह ख्यात इतिहास का एक खजाना है। इसकी यह एक बड़ी विशेषता है कि जितनी बार इसका अध्ययन करते हैं तो इसमें हमें इतिहास लेखन के नये सूत्र मिलते रहते हैं। इतिहास लेखन के अनमोल सूत्र ख्यात में बिखरे हुए पड़े हैं इसलिए सम्पूर्ण ख्यात का बारम्बार ध्यानपूर्ण अध्ययन करने की आवश्यकता है।

इस सन्दर्भ में यह भी उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अभी तक उदयभाण चांपावत की ख्यात, मूंदियाड़ की ख्यात, दयालदास की ख्यात, जोधपुर राज्य की ख्यात, 'शाहपुरा की ख्यात' आदि ग्रंथों का पूर्णरूपेण सम्पादन प्रकाशन नहीं हुआ है। ऐसे ग्रंथों का प्रकाशन किया जाना नितांत आवश्यक है तभी हम राजस्थान के इतिहास लेखन को आगे बढ़ाकर इसे नया रूप दे पायेंगे।

---

1 ख्यात II पृ 256 265

जोधपुर हुकूमत री बही*

—मोहब्बत सिंह राठौड उदयपुर

जोधपुर हुकूमत री बही ऐतिहासिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसकी मूल प्रति पचोली बृजलाल के पास थी। पचोली के पूर्वज जोधपुर के राठौड़ो के रिकार्डर थे। उनका यह रेकार्ड राज्य की तत्कालीन सूचनाओं का वास्तविक स्रोत है। यह महत्वपूर्ण बही खीवसर ठा० केसरी सिंह के सौजन्य से प्राप्त है।

बही में लिखने वाले का उल्लेख नही है बल्कि इस बही के तथ्यों के आधार पर ज्ञात होता है कि बही के सकलन में पचोली परिवार के पूर्वजों का योगदान रहा है। बही की मूल प्रति में शीर्षक का वर्णन नही है। पचोली बृजलाल के अनुसार—जोधपुर हकुमत के कानूनगो ने इसे 'जोधपुर हुकूमत री बही' कहा था। इसलिए यह शीर्षक माना गया है। यह एक सकलन पुस्तिका थी जो कि जोधपुर महाराजा के अधिकारी द्वारा उनके साथ रहकर घटनाओं का वास्तविक वर्णन किया गया है।

महाराजा जसवन्त सिंह की मृत्यु के उपरान्त लगभग 25 वर्षों तक जोधपुर मुगलो के अधीन रहा उस समय का जोधपुर रियासत मे प्रामाणिक दस्तावेज नही है। इसलिए उस समय की जानकारी के लिए यह बही महत्वपूर्ण है।

बही के प्रारम्भ मे शाहजहाँ के बीमार होने पर उनके शहजादों की आपसी सैनिक कारवाई का वर्णन है। बही में दिये गये पट्टों से ज्ञात होता है कि मारवाड राज्य में राठौड़ एव अन्य समूहो की राजनैतिक स्थिति के अध्ययन का ज्ञान होता है।[1] बही में महाराजा जसवन्त सिंह की आमदनी सम्बन्धी जो आंकड़े दिये हैं वह मारवाड एव जोधपुर राज्य की ख्यात से मिलते जुलते है।[2] बही के वर्णन से यह भी ज्ञात होता है कि जोधपुर महाराजा द्वारा मुगल दरबार मे दी जाने वाली अच्छी सेवाओं के

---

* सम्पादक प्रो सतीशचन्द्र एवं डॉ रघुवीर सिंह

1 बही पृ 16

2 मारवाड रा परगना री विगत पृ 145-46 जोधपुर राज्य री ख्यात 206

बदले उनकी आय म वृद्धि की जाती थी।[1] परन्तु असफल होने एव बादशाह के नाराज होने पर आर्थिक दण्ड भी दिया जाता था।[2] मुगल दरबार मे हिन्दू महाराजा की स्थिति आय एव सम्मान के बारे म महत्वपूर्ण वर्णन है।[3]

शाहजहाँ की बीमारी और धरमात के युद्ध सम्बन्धित राजनैतिक व सैनिक महत्वपूर्ण गतिविधियो पर ऐतिहासिक जानकारी का विस्तृत वर्णन है।[4] महाराजा जसवन्त सिंह के निर्देशन मे धरमात के युद्ध मे भाग लेने वाली सेना के वर्णन का गहन अध्ययन से ज्ञात होता है कि कुल सेना मे से बादशाही सेवा म रहने वाले सैनिको की सख्या, जागीरदारा स मँगवाई गई सेना से अधिक रखा जाता था।[5] सनिकों के नामा के वर्णन से पता चलता है कि मुगल सेना मे हिन्दू एव मुसलमान सनिको को एक साथ लडने के लिए भेजा जाता था।[6] अनुमान है कि जिससे सेना मे शक्ति सतुलन बना रहे।

महाराजा जसवन्तसिंह के सनिक अभियान की यात्रा के वर्णन से धार्मिक आस्था एव तीर्थ स्थलो की जानकारी मिलती है। यह जानकारी विशेष महत्व की है। क्याकि इस प्रकार की जानकारी दूसरे ग्रंथो मे नहीं मिलती है। युद्ध मे काम आये सैनिका की सूची से ज्ञात होता है कि सेना म न केवल राजपूत बल्कि ब्राह्मण कायस्थ, महाजन आदि फुटकर सख्या में सभी जातिया के लोग रहते थ। युद्ध मे भाग लेने वाले योद्धाओ के नाम के साथ उनके सनिक लवाजमे का विवरण है और अन्त मे काम आने वाले सैनिको की सूची भी है।

जोधपुर राज्य की ख्यात मे केवल युद्ध म काम आये योद्धाओ के नाम ही है। इस प्रकार धरमात के युद्ध सम्बन्धी यह बही अतिरिक्त जानकारी उपलब्ध कराती है।[7]

धरमात के युद्ध मे से महाराजा द्वारा जोधपुर लौटने एव उसके बाद ही मुगल प्रतिनिधियो का वर्णन किया है।[8] औरगजेब द्वारा महाराजा जसवन्तसिंह को अपने पक्ष मे करने के लिए दिये प्रलोभन एव उपहार की जानकारी से औरगजेब की

1 वही पृ 1
2 वही पृ 2
3 वही पृ 3
4 वही पृ 6
5 वही पृ 7
6 वही पृ 6 15
7 जोधपुर राज्य की ख्यात स डॉ रघुवीरसिंह पृ 216 234 बही 626
8 वही पृ 26

कूटनीति व राजनीतिक दाव पेच का पता लगता है।[1] इस तरह फारसी ग्रंथों से इसकी तुलना की जा सकती है।

औरंगजेब की शुजा के विरुद्ध चढाई में महाराजा जसवंतसिंह से मनमुटाव होने पर औरंगजेब ने जोधपुर का पट्टा रायसिंह को कर दिया।[2] परन्तु रायसिंह का जोधपुर पर अधिकार नहीं हो सका। दारा द्वारा गुजरात पर आक्रमण करने पर औरंगजेब द्वारा महाराजा जसवंतसिंह से पुनः मैत्री की गई और महाराजा को गुजरात का सूबेदार बनाकर जोधपुर उनके नाम कर दिया गया। पोकरण परगने के लिये जोधपुर व जैसलमेर के शासकों में झगड़ा होता रहता था।[3] जैसलमेर के महारावल सबलसिंह के पुत्र अमरसिंह का पोकरण पर आक्रमण एवं पोकरण पर पुनः जोधपुर राज्य का अधिकार होने का वर्णन है।

युद्ध अभियानों में जोधपुर की सेना द्वारा दुश्मनों के इलाकों में लूट पाट करने और विजय के लिये काम में लायी गई कूटनीतिक चालों का भी वर्णन है।[4] सेना में काम आने वाले पशुओं के मूल्य जिन्स के वर्णन से उनके सैनिक एवं व्यावसायिक महत्त्व का आकलन किया जा सकता है।[5] उस समय के प्रचलित करों के सम्बन्ध में कुछ महत्त्वपूर्ण सूत्र प्राप्त होते हैं।[6] सैनिक अभियान में सेना की सूची है उसमें प्रमुख योद्धाओं साथ सैनिक पैदल घुड़सवार ऊंट सवार के आंकड़े सैनिक प्रबन्ध की जानकारी के लिये महत्त्वपूर्ण है। राज परिवार के सांस्कृतिक धार्मिक एवं सामाजिक परम्परा की रीति नीति के सूत्र मिलते हैं।[7]

जोधपुर महाराजा जसवंतसिंह की मृत्यु पेशावर के पूरणमल बुन्देला बाग में 28 नवम्बर 1678 (पोस वद 10 संवत् 1735) को हुई थी।[8] उनके साथ सती होने वाली रानियों आदि की सूची दी हुई है। इससे तत्कालीन समय में समाज में सती प्रथा के प्रचलन का ज्ञान होता है।[9] महाराजा की मृत्यु के पश्चात जोधपुर राज्य में अशान्ति फैल गई। जिसके परिणामस्वरूप राज्य की प्रशासनिक आर्थिक सैनिक एवं व्यावसायिक क्रियाओं पर प्रतिकूल प्रभाव का वर्णन मिलता है।[10] व्यावसायिक

---

1 वही पृ 27 28
2 वही पृ 32 33
3 वही पृ 39
4 वही पृ 46
5 वही पृ 51 52 103
6 वही पृ 91
7 वही पृ 95 96
8 वही पृ 75
9 वही पृ 75 77
10 वही पृ 79 92 103 117 138 145

अस्थिरता, सामन्तों की स्वेच्छाचारिता एवं विश्वासघाती होने का वर्णन उनकी मनोवृत्ति समझने में सहायक है। महाराजा की मृत्यु के पश्चात् मुगल सम्राट औरंगजेब द्वारा जोधपुर राज्य को खालसा करने सम्बन्धी कारणों का बही में वर्णन किया गया है जिनमें मुख्यतः राज्य की प्रशासनिक अव्यवस्था उत्तराधिकारी का न होना और गोपनीय धन होने की सम्भावना मुख्य है।[1] इस प्रकार बही में औरंगजेब की राजपूत नीति सम्बन्धी महत्वपूर्ण तथ्य संग्रहीत हैं।

इसमें राजनैतिक, सामाजिक एवं विविध विवरण के साथ उस समय रोग निदान में काम आने वाली औषधियों सम्बन्धी जानकारी दी है।[2] ऐतिहासिक काव्य राजवंशों की वंशावलियाँ कुछ गिरह कड़ियों को जोड़ने में सहायक है।[3]

जोधपुर राज्य में जागीरदारों के पट्टों की विस्तृत जानकारी से उस समय की आर्थिक, सामाजिक व प्रशासनिक पहलुओं को समझने में सहायक है। पट्टों के गहन अध्ययन से ज्ञात होता है कि महाराजा के नाराज होने अथवा अन्य कारण से जागीरदार की रेख कम की जाती थी। महाराजा के प्रसन्न होने अथवा विशेष कारगुजारी दिखाने पर जागीरदार को बधारा के रूप में जागीर दी जाती थी।[4] पट्टे को जब्त कर लेने पर जागीरदार द्वारा पेशकश के रूप में राशि जमा कराने पर उसका पट्टा पुनः प्रदान किया जाता था।[5] यह पेशकश नकद/उपहार/पशुधन के रूप में देने का वर्णन है।[6] पेशकश सम्बन्धी समस्त अधिकार राज्य के दीवान के पास रहते थे।[7] यह भी उल्लेखनीय है कि जागीरदार को प्रदान किये गये पट्टे के भू भाग पर उसके द्वारा अधिकार नहीं कर सकने पर पट्टा निरस्त कर दिया जाता था।

किसी महत्वपूर्ण जागीरदार को उसके क्षेत्र में 'कर' वसूल करने का विशेष अधिकार प्राप्त होने सम्बन्धित जानकारी इन पट्टों से मिलती है।[8] जोधपुर राज्य में राजस्व (इजारा) को ठेके पर वसूलने सम्बन्धी सूत्र भी मिलते हैं।[9]

---

1 वही पृ 121 140 141 170
2 वही पृ 107
3 वही पृ 108 121
4 वही पृ 126
5 वही पृ 127
6 वही पृ 128
7 वही पृ 130
8 वही पृ 202
9 वही पृ 188 तुलनात्मक अध्ययन के लिये देखें महाराणा राजसिंह को पट्टा बही परिशिष्ट स डॉ हुकमसिंह भाटी

इस प्रकार हुकूमत को बही 17वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जोधपुर राज्य के सामाजिक, राजनतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथ्यो के अध्ययन हेतु उपयोगी है। मुगल राजपूत सम्बन्धो के तत्कालीन वणन से उस समय की मुगल व्यवस्था को समझने के लिये उपयोगी है। इस बही का फारसी स्रोतो से तुलनात्मक अध्ययन करने से कई नये तथ्य उजागर किये जा सकते हैं।

इसम दिय पट्टा की सूची अन्य स्रोता में कहा नहीं मिलती है इसलिये कू पावत मेड़तिया जोधा, जैतावत, उदावत सीधल उहड आदि राठौडो के अलावा भाटी और चौहानो के पटटेदारो सम्बन्धी विवरण इतिहास लेखन के लिये उपयोगी है।

महाराणा राजसिंह कालीन पट्टा-परगना बही*

—डॉ गोपाल व्यास, उदयपुर

मेवाड़ के इतिहास को जानने समझने एव प्रस्तुत करने के लिये प्राथमिक स्रोतो मे पुरातत्व और एतिह्य साहित्यिक स्रोतो का इतिहास विदो ने अभी तक प्रचुर मात्रा मे प्रयोग किया है। किन्तु पुरालेख सामग्री मे बहियों का एतिह्य विश्लेषण अभी भी शेष है। यद्यपि मेवाड़ के इतिहास पर कार्यरत विज्ञ विद्वानो में डा गोपीनाथ शर्मा ने प्रथम बार अपनी शोध[1] मे बक्षीखाना रिकोर्ड की सामग्री का प्रयोग किया था किन्तु कई स्रोत सम्भवत उनके विषय के अनुरूप नही होने से दृष्टिगत ही रह गये। इनमे "महाराणा श्री राजसिंगजी री पट्टा बही संवत् 1713" नामक मेवाड़ राज्य की प्राप्त बहियो मे प्राचीनतम बही है। शोध मे तत्पश्चात् पश्चात् 1976 ई मे अपने शोध प्रबन्ध 'मेवाड़ के सामाजिक आर्थिक जीवन के कतिपय पक्ष' पर कार्य करते हुए मुझे डॉ रविन्द्रकुमार शर्मा[3] द्वारा इस बही के प्रति ध्यान दिलाया गया था। इसी के फलस्वरूप मैंने इसके नोटस आलेखित किये और समय समय पर इस सामग्री से तीन शोध पत्र सेमीनारो मे प्रस्तुत कर इसकी महत्ता को विद्वानो के सम्मुख रखने का प्रयास किया था।[4] इस बही के सर्वप्रथम सम्पादन का कार्य स्व डा राजेन्द्रप्रकाश भटनागर द्वारा मेवाड़ का राज्य प्रबन्ध एवम् महाराणा

---

* सम्पादन डॉ हुकमसिंह भाटी हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर

1 मेवाड़ मुगल रिलेसन्स (शोध प्रबन्ध) 1952

2 बक्षीखाना रिकोर्ड बस्ता 10 राजस्थान राज्य अभिलेखागार उदयपुर में सुरक्षित एस आर शर्मा—महाराणा राजसिंह एण्ड हिज टाईम्स तथा डॉ आर पी व्यास—महाराणा राजसिंह जयपुर 1974 ई में भी इस बही का सदर्भ नही है।

3 तत्कालीन पुरालेख अधिकारी वर्तमान मे कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय मे इतिहास विभाग मे आचार्य पद पर कार्यशील है।

4 (अ) बक्षीखाना रिकोर्ड मेवाड़ के सामाजिक आर्थिक जीवन का स्रोत शोध पत्रिका 1986 अक 1 पृ 50-62

(ब) राणा राजसिंह कालीन आर्थिक तथ्य शोध पत्रिका 1988/3 पृ 42 54

(स) रेख प्रकृति प्रवृत्ति और प्रभाव शोध पत्रिका 1990/2, पृ 28 40

राजसिह कालीन दो बहिया नामक ग्रन्थ द्वारा किया गया था।[1] इसके पश्चात् डा ग्रार के सक्सेना के द्वारा "पट्टा बही ग्राफ महाराना राजसिंग, 1713 वी एस" से सचित ठाकुरा री रम री बही का सम्पादित काय प्रकाशित हुग्रा।[2] वतमान म तीसरा प्रयास डा हुकमसिंह भाटी न किया है।[3]

एतिह्य सम्पादन

सम्पादन विधा साहित्य का एक ग्रभिन्न विषय है। शास्त्रीयता की दृष्टि स उसके ग्रनेक ग्रग है। किन्तु इतिहासात्तर साहित्य या साहित्योत्तर इतिहास का सम्पादन काय इतिहास मे साहित्य सम्पादन स ग्रधिग्रहित किया गया है। विषय भाषा समय काल तथा सामग्री को ज्यो का त्यो शुद्ध शास्त्रीयकरण द्वारा प्रस्तुत किये जान तक ही ग्रधिकाश एतिह्य सम्पादन की मौलिकता रही है ग्रौर इसी कारण साहित्य म इतिहास का तो महत्व प्रस्फुटित हुग्रा पर इतिहास मे साहित्य की प्रस्तुति तथ्यात्मक व्याख्यात्मक तथा विश्लेषणात्मक नही हो सकी है। जब साहित्य की सामग्री के सम्पादन की यह स्थिति है तो पुरालेख सामग्री मुख्यत बहिया मे सम्पादन की वैज्ञानिकता ग्रसदेह ही होगी। राजस्थान राज्य ग्रभिलेखागारो म सग्रहीत बहियो के साथ साथ सस्थागत ग्रौर व्यक्तिगत ग्रभिलेखागार की बहियो भी ग्रसख्यसख्या ग्रभी तक वर्गीकरण से वचित है तो इनके सम्पादन का काय शोध साधको के ग्रभाव मे मृग मरीचिका ही है।[4] बही सम्पादन के काय को मेवाड क्षेत्र म सवप्रथम डॉ कृष्णस्वरूप गुप्ता द्वारा बनेडा ग्राकाइव्ज नामाकरण द्वारा ग्रारम्भ किया गया था। उनके शिष्यता मे मुझे यह सीखने का ग्रवसर भी प्राप्त हुग्रा कि बही सम्पादन में पाठालोचन से ग्रधिक महत्व क्षेत्र ग्रनुभूति ग्रौर ग्रनुभव का है। यह दोनो तत्व इतिहास सामग्री के साथ न्याय करने के लिये ग्रावश्यक हैं। केवल भाषा ग्रौर ग्रनुवाद के ग्राधार पर बहिया का सम्पादन उसकी सामग्री का पुनर्मावरण होगा दृष्टा त नही। इतिहास के लिये स्रोत का विवेक ग्रावश्यक है जिसे सम्पादक के कौशल द्वारा

---

1 प्रथम सस्करण 1987 ई राजरतन प्रकाशन पावपोल बाहर जोधपुर (राज) यह सम्पादन कार्य मात्र सूचनात्मक विवरण क साथ साथ मेवाड के राज्य प्रब ध को लिखने के लिये सन्द प्रयोग में लाया गया है।

2 प्रथम प्रकाशन *1989* ई सरोज प्रकाशन रविन्द्र नगर उदयपुर (राज) यह सम्पादन सूचनात्मक विवरण क साथ साथ बही की सामग्री का विश्लेषण भी करता है (पृ 113 114) किन्तु इसमें सम्पादक का मन्य उद्देश्य पट्टादारी प्रणाली हाने स (प 113 पाद टिप्पणी 1) 'समग्र-सम्पादन' की विधा से यह ग्रन्थ वचित है।

3 प्रथम ग्रन्थ महाराणा राजसिह पट्टा बही पट्टादारा री विगत तथा द्वितीय ग्रन्थ महाराणा राजसिह परगना बही प्रथम सस्करण 1995 हिमाशु प्रकाशन उदयपुर (राज)।

4 राजस्थान राज्य ग्रभिलेखागार उदयपुर में बन्द विभाग रिकॉर्ड की बहियों की यह स्थिति मेरे द्वारा प्रयुक्त किये जाने त श्राज तक बनी की बनी ही है।

उपार्जित किया जा सकता है। हम इसी सम्पादन विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में डा० हुकमसिंह भाटी द्वारा सम्पादित 'राजसिंह कालीन बहियों' की उपयोगिता को विश्लेषित कर सकते हैं।

बही में उल्लेखित सामग्री

बही के अन्तर्गत पहला भाग पटटेदारों के विवरण तथा दूसरा भाग मेवाड के परगना की आर्थिकी से सम्बन्धित है। पटटेदारों में पट्टेदार का नाम पटटे के गाव और उनकी रेख[1] सहित संवत् 1713 (1656 ई) से संवत् 1727 (1670 ई) तक के आय-व्यय का विवरण प्रस्तुत करती है।[2] 168 पृष्ठों में प्राप्त सामग्री[3] का वर्गीकरण गावों के नाम, परगना के नाम विभिन्न मद और पेढी[4] के नाम, चुंगी प्राप्ति के स्थानों के नाम चुंगी की वस्तुओं के नाम, गावों का राजस्व, नया और पुराना राजस्व, पटटेदारों के नाम पट्टा का वर्गीकरण महाजन व अन्य जातिगत नाम सहित राजसिंह कालीन कई आर्थिक व्यवहारों आदि में किया जा सकता है।[5] डा० हुकमसिंह भाटी द्वारा सम्पादित ग्रन्थ में सामग्री का वर्गीकरण और अधिक स्पष्ट किया गया है। परगनों का गठन, खालसा गावों की आय, दाण कर, मापा कर खडलाकड, व्यापार के पटटे, मुकाता जावर खान, व्यय मद रेख, जागीर व्यवस्था, बाटा प्रणाली, जागीर के हस्तातरण जागीर वृद्धि (बधारा), नकद वेतन सामाजिक व्यवस्था एव शासण (गरासिया) के गाव के बिन्दुओं में[6] इसका अध्ययन तत्कालीन समय और उसकी प्रक्रिया को स्पष्ट करने में अत्यन्त उपयोगी हो सकता है।

सम्पादित बही का स्वरूप

बही के सम्पादित दो भाग में प्रथम को 9 परिशिष्टों सहित 3 खण्ड क्रमश आय व्यय का विवरण महाराणा का व्यक्तिगत खर्चा एव पटटेदारा री विगत तथा

---

1 बही में प्रथम पृष्ठ पर ठाकरां रे (के) रेख री (की) बही लिखा गया है। रेख के अध्ययनार्थ द्रष्टव्य मेरा लेख—शोध पत्रिका वर्ष 41 अंक 2 पृ 22-44

2 डॉ राजेन्द्रप्रकाश भटनागर द्वारा सम्पादित ग्रन्थ के प्राक्कथन से उद्धृत इसमें सम्पादक के अनुसार 14 वर्ष का हिसाब है जो सत्य नहीं है अपितु मेरे द्वारा इसके अध्ययन से 6 वर्ष का हिसाब क्रमशः है (द्रष्टव्य—शोध पत्रिका वर्ष 39 अंक 3 पृ 43) हमारे इसी अध्ययन की पुष्टि डॉ हुकमसिंह भाटी द्वारा सम्पादित बही से होती है सम्पादकीय पृ XXXVII

3 इस बही के 183 पृष्ठों में से 15 पृष्ठ रिक्त हैं शोध पत्रिका 39/3 पृ 43

4 उपर्युक्त बही में इसे पुआ लिखा गया है मेवाड में परम्परागत—दफ्तर व्यक्तियों पर पर पीढ़ी दर पीढ़ी स्थापित रहते थे। अतः ठाम के रूप में पुआ का प्रयोग होता था।

5 डॉ गोपाल व्यास—राणा राजसिंह कालीन आर्थिक तथ्य शोध पत्रिका वर्ष 39 अंक 3 पृ 43

6 डॉ हुकमसिंह भाटी (स)—महाराणा राजसिंह पट्टा बही सम्पादकीय पृ VII से XXVI तथा परगना बही पृ X डॉ आर.के सक्सेना (स)—पट्टा बही ऑफ महाराणा राजसिंह द्वारा जागीर रेख एव भूमियों का अध्ययन किया गया है पृ 113 144

रोक पावे' का अथ राजपूता को नकद दिये गये, लिखा गया है जब कि 'रोक' से रोकड का आशय माना गया है।[1] कि तु यहाँ रोक से रोकना अथ है जिसका आशय साधारण राजपूत सरदारों के सीख लेने पर प्रदत्त राशि से है। अत बही सम्पादन मे शब्दो के तत्सम् और तद्भव का ध्यान रखते हुए भी कई शब्दो का तत्कालीन प्रयोग स्पष्ट नहीं हो पाया है।

बही के हिसाब मे स्थाना तरित जमा खच का भी अस्पष्ट ब्यौरा मिलता है किन्तु इससे यह विदित हो जाता है कि राजसिंह के काल की बही प्रणाली समृद्ध थी और हिसाब-किताब की कई बहिया प्रचलित थी। इनम पट्टा बही, रेख बही, परगना बही, गराश्या गाम तावा पतर (बही) आदि का विवरण हमे आलोच्य बही म ही मिल जाता है। बही उल्लेखित पट्टा प्रणाली में राज्य वृति के अनुसार खालसा, जागीर और सासण का वर्गीकरण प्राप्त होता है पर इसके साथ साथ जातिगत पट्टा वितरण मे दो वग मिलते हैं—(1) राजपूत तथा (2) राजपूतोत्तर।[2]

सारिणी—1

(राजपूत पट्टायत का राणा से रक्त दूरी का विवरण)[3]

क्रम	राणा के भाई या वंश	कुल पट्टा राशि (रेख टका मे)	अ य राजपूत	कुल पट्टा राशि (रेख टका मे)
1	चू डावत	498150	चौहाण	281600
2	सीसोदिया	—	राठोड	400700
3	राणावत	408140	पवार	113900
4	शक्तावत	322500	सोलकी	105500
5	—	—	कच्छवाह	99000
6	—	—	खीची	52300
7	—	—	भाटी	28300
8	—	—	बोडिया	7700
9	—	—	हाडा (चौ)	13000
10	—	—	सोनगरा (चौ)	29500
11	—	—	देवडा (चौ)	900
12	—	—	बहेला	18500
13	—	—	चदेल	1000
14	—	—	सांखला	800
	(4—1) = 3	12 28 790	14	11,52,700

1 सं ब (भाटी) भा 1 प 16 पाद टिप्पणी 13 प 47 पा टि 4
वस्तुत रोक का अथ रोकड से ही है रोकने स नहीं—(सम्पादक)

2 उपरोक्त पृ 19 153

3 उक्त पृ 157 191

सारिणी–2 के अनुसार राजपूतोत्तर पट्टापतो म प्रथम स्थान महाजन (वैश्य), द्वितीय स्थान मत्रासयिक एव सन्य अधिकारी तथा तृतीय स्थान ब्राह्मणो का था। प्रथम और द्वितीय वग मे शाह (लेन देन का काय करने वाले) और पचोली मसाणी मुख्य थे वहीं तृतीय वग मे पुरोहित और मीसर[1] (विवाहादि काम कराने वाले) मुख्य थे। यह तीनो वग प्रजा और राजा के मध्य की प्रमुख कडी के रूप म राज्य का मध्यम वग रहा था। पद मे राजपूतों से निम्न होते हुए भी प्रतिष्ठा और प्रभाव के रूप म समाज मे इनका विशिष्ट स्थान रहा था। धार्मिक आस्था क रूप म तत्कालीन वश्य वग मे वष्णव पथ की मा यता अधिक थी।[2] 1713 वि स की बही का विश्लेषित विवरण मेरे द्वारा राणा राजसिंह कालीन आर्थिक तथ्य' म प्रस्तुत किया जा चुका है[4] पर इस बही के वतमान सम्पादित ग्रन्थ (1995 ई) म प्रस्तुत परिशिष्ट–1 की सारिणी को इस प्रकार यक्त किया जा सकता है[5]

सारिणी—3

(अन्य पट्टापत)[6]

क्रम	जाति	प्रथवा	व्यवसाय	कुल पट्टा राशि (रेख टका मे)	अन्य विवरण
1			सुथार	250	प्रत्येक पट्टेदार को एक गाव का पट्टा
2	—		छत्रधार	—	
3	—		गदीये	500	
4	—		जरादी	500	
5	—		नाई	300 + 1000	
6	राव गोपाल		—	1000	
7	रावत रूडा		—	500	
8	रावत भीमा		—	300	
9	—		चारण परसराम	500	
10	—		नाईक बदाईस	500	
11	—		रावत हादेवास	300	
12	मुस्लिम	मलिक सौनागर मीया		12,100	कु डाल और गीरवा क्षेत्र

1 मिश्र नहीं ?

2 गोपाल व्यास—मेवाड के सामन्तशाही समाज की सामाजिक-आर्थिक स्थिति शोधपत्रिका (1981 ई) 32/1 पृ 60

3 महता एव माहेश्वरी के योग

4 शोध-पत्रिका 39/3 पृ 42–54

5 सं ब (माटी) भाग–1 पृ 199–200

6 राणा अथवा राजलोक से प्रदत्त सम्बन्धित

राजपूतोत्तर जातियों मे 3 प के क्रम मे मुस्लिम जाति आती है। उक्त सारिणी 3 स स्पष्ट है कि राणा राजसिंह के समय म मुस्लिम अधिवासन की परम्परा पट्टायत के रूप मे विद्यमान थी जिसका आरम्भ राणा प्रतापसिंह प्रथम से प्रारम्भ हो गया था[1] और इसका चर्मोत्कर्ष मेवाड राज्य में सत्रहवें उमराव के मुस्लिम सामन्त सम्मान की परिणिती मे दिखलाई देता है। मुस्लिम अधिवासन केवल खालसा क्षेत्र मे ही नही अपितु जागीर क्षेत्र मे भी विद्यमान रहा था यथा–चुहाण बाघ पहाडखानोत आदि।[2]

पट्टा के अन्तगत उल्लेखित राजस्व सम्बन्धित शब्दावली—

वसे तो बही के अन्तगत कई क्षेत्रज शब्द उल्लेखित हैं जिनका अथ और प्रयोग बही के तीना सम्पादको ने किया है। कि तु राजस्व के महत्व और मेवाड राज्य मे प्रचलन की दृष्टि से हमने जिनका निवचन किया है उनम सवप्रथम रेख के बारे मे सम्पादक ने जो तथ्य प्रस्तुत किये हैं उनसे रेख जागीरदार अथवा पटटेदार के व्यक्तिगत स्तर उसके दायित्व और जागीर मूल्य की सूचक थी। जागीरदार की रेख उसके स्तर और गाव की रेख उसकी अनुमानित आय के अनुसार आकी जाती थी। पट्टा प्रदान करने की प्रक्रिया मे पहले पटटेदारी के लिये रेख का निर्धारण किया जाता था तदुपरात पटटे का आवटन होता था।[3] किन्तु हमारे अध्ययन से[4] रेख गाव खेत की सम्पूर्ण आय का औसत थी जो समय समय पर परिवर्तित होती रहती थी। इसी का सम्मिलित योग जागीर/ व्यक्ति/जाति की रेख के रूप मे राज्य द्वारा आवटित की जाती थी। अत रेख द्वारा व्यक्ति जाति जागीर और गाव के आर्थिक स्तर का निश्चय होता था वहीं उसके बदले मे उसी के अनुसार राज्य की माग की पूर्ति का दायित्व भी वृति या धारक को निवहन करना पडता था।[5]

---

1 डॉ गोपाल व्यास—राणा प्रताप का वीर नायक हकीम खा सूर शोध पत्रिका वर्ष 45 अक 1 प 25–31

2 व सं (भाटी) सम्पादकीय पृ xviii पृ 25 29 58 107 112 122 142 और 152

3 उपरोक्त पृ xvi–xx

4 डॉ गोपाल व्यास—रेख प्रकृति प्रवृत्ति और प्रभाव शोध पत्रिका 41/2 प 36

5 डॉ सक्सेना ने रेख को वेतन का स्वरूप बतलाया है (स ब पृ 116) जो सही नहीं है बल्कि यह व्यवस्था और व्यवस्थापन का स्वरूप है जिसमें धारक का अधिकार और कर्तव्य मिलकर राज्य भक्ति का आचरण निश्चित करते हैं। राजसिंह के समय तक पटटेदारी में दासत्व की भावना नहीं थी बल्कि व्यवस्थापक और भ्रातृत्व की भावना विद्यमान थी। इसीलिये राजसिंह का शासन मेवाड़ के इतिहास में समृद्धि का युग रहा था।

पट्टा बही मे 'मुकाता' शब्द का प्रयोग हुआ है[1] जिसका अर्थ ठेका प्रणाली से है।[2] मुकाता मे राज्य एक निश्चित अवधि के लिये अनुबन्ध के अन्तर्गत अपनी आय के साधनो को किसी व्यक्ति को अग्रिम अनुमानित राशि लेकर उपयोग के लिये प्रदान कर देता था।[3] इसका उद्देश्य आर्थिक विकास के लिए आर्थिक प्रतिस्पर्धा उत्पन्न करना था किन्तु शनै शनै मेवाड राज्य का इससे नुकसान ही अधिक हुआ था।[4] इसी प्रकार 'रखवाली', वृत्ति मे वृद्धि के लिये 'वधारा पट्टा'[5] (Licence) बाटा आदि के सकेत आर्थिक प्रशासन और व्यवहार के अन्तर्गत व्यवस्था के द्योतक हैं। बही सम्पादक ने इनका विश्लेषण करने का प्रयत्न किया है जो इस सम्पादन कार्य की महत्ता के लिये आवश्यक था। आलोच्य सम्पादन कृति मे गावो के नामो का शुद्धिकरण और वर्तमान मे उनकी स्थिति का सांख्यिक ब्यौरा इस सम्पादन की मौलिकता मानी जानी चाहिये।[6]

परगना बही की सांख्यिकी—

इस बही से परगना गाँव, गाव की हिस्सदारी यथा–खालसा और गरासिया (सासणिक) व साबा पतर के गाव, भौगोलिक क्षेत्र आदि का विस्तृत ब्यौरा प्राप्त होता है। यह बही पुरानी बही की नकल के रूप मे राणा स्वरूपसिंह के आदेश से पचोली रघीराम > बरदीराम द्वारा वि स 1905 (1848 ई) मे प्रतिलिपि कराई गई थी। सम्पादक ने दोनो ही बहियो का अवलोकन कर बही का पाठान्तर किया है। किन्तु इस बही के सम्पादन की मुख्य विशेषता इसके पृष्ठ मे प्रदत्त तीन परिशिष्ट हैं जो मेवाड के तत्कालीन आर्थिक इतिहास के लिये उपयोगी सामग्री है। बही मे भौगोलिक क्षेत्र के रूप मे गिरवा, मगरा मुण्डल, उपरमाल, भोमट मदारिया मेवल, मेरवाडा, छप्पन, गाडवाड बारोट बारा (मीडर के आस पास का क्षेत्र) आदि नाम मेवाड की प्राकृतिक स्थिति को स्पष्ट करते हैं। मेवाड के तत्कालीन परगनो का विभाजन 58 की सख्या मे था जो कि जागीर क्षेत्रानुसार विभिन्न जागीरो के अन्तर्गत खालसा क्षेत्र के रूप मे व्यवस्थित किये जाते रहे होगे।

परगनो के उत्पादन की उल्लिखित सांख्यिकी की आय के अनुसार ▮ परगने प्रथम श्रेणी में, 11 परगने द्वितीय श्रेणी तथा 4 परगने तृतीय श्रेणी मे उल्लेखित किये जा सकते हैं

---

1 सं ग्र (भाटी) भा 1 पृ 5 11 13
2 डॉ गोपाल व्यास—मेवाड का सामाजिक एव आर्थिक जीवन (शो प्र) पृ 67–70
3 सं ग्र (भाटी) भा 1 पृ xii
4 व्यास—मेवाड का सा आ जीवन पृ 69–70
5 सं ग्र (भाटी) उक्त पृ 7
6 उपयुक्त भाग 2 परगना बही

सारिणी – 4

(आय आधारित परगनों का श्रणी नियत्रन)

क्रम	प्रथम श्रणी		द्वितीय श्रणी		तृतीय श्रणी	
स	परगना	कुल उत्पादन	परगना	कुल उत्पादन	परगना	कुल उत्पादन
1	माडलगढ	202500	ममगा	98700	कोवारया	9300
[illegible]	गाडवाड	172700	जोरण	94100	मरजीवी	9012
3	बदनोर	167000	कपासण	82401	कोराडया	8000
4	गीलूड	153700	तनेटी	79600	मन्देसर	8000
5	गुलहुड	144700	मोही	77300	—	—
6	पुर	123102	बेगू	68300	—	—
7	छप्पन	119200	नीमच	67800	—	—
8	बारा	114584	रतनपुर	58200	—	—
9	—	—	उठाना	57900	—	—
10	—	—	पठाणा	57500	—	—
11	—	—	मधारया	57500	—	—

उक्त सारिणी के मध्यकाक द्वारा स्पष्ट होता है कि प्रथम श्रणी मे बदनोर गीलू ड द्वितीय श्रेणी मे तनेटी गोही और तृतीय श्रणी मे कु वारिया, मदेसर परगने मेवाड के औसत उत्पादन वाले समृद्ध परगने थे। आधुनिक जिले भीलवाडा, चित्तौड तथा राजसम द मे इन तहसील क्षेत्र की कृषि का राजस्व आज भी अच्छा उपलब्ध होता है।

बही सम्पादक ने बही मे उल्लेखित गावो के आधार पर सीमा क्षेत्र मे खालसा गावो की अधिकता परगने मे पूर्णत खालसा गाव या जागीर गाव गरासिया गावो की अधिकता वाले परगने गाव की बाट व्यवस्था मन्दिरा क गाव आदि का सूचनात्मक विश्लेषण भी किया है। इसके फलस्वरूप यह बही तत्कालिक गाव गणना (Village cences) का उपयोगी आधार बन जाती है। वसे सत्रहवी शताब्दी का उत्तरकाल राजस्थान म [illegible] सेज और सांख्यिकी अभियान का उद्भव काल रहा था। परगना बही भी ऐसे प्रयास का एक हिस्सा मानी जा सकती है। बही मे उल्लेखित खालसा और गरासिया ग्राम का निर्वाचित अनुपात का विवरण

सारिणी—5

गरासिया (सासणिक) गाव का निर्वाचित अनुपात

क्रम	परगना	खालसा/पट्टा गाव उपत	गाव सख्या	गरासिया गाव उपन	गाव सख्या	अनुपात अन्तर
1	बदनोर	1 46 900	161	20,100	20	7 1
2	गोलूड	13,500	79	13,200	13	1 1
3	तलेटी	59 500	68	20 400	25	3 1
4	मोही	62,300	48	15,000	22	4 1
5	कुवारिया	9,300	8	—	—	—
6	मदेसर	8 000	17	—	—	—
7	उटाला	34,500	37	24 725	43	1 1
8	बारा	79,064	74	30,120	45	3 1
		4 13 064	492	1 23 545	168	3 1

सारिणी—5 की निर्वाचित सख्या की परगना वही के खालसा और गरासिया गावों का अनुपात अतर 4 1 के मध्यमांक पर स्थिर होता है। इस प्रस्तुति का सीधा अर्थ यह है कि समाज का धार्मिक अनुदान व्यवहार ही राज्य का धार्मिक अनुदान व्यवहार था। परलोक कल्याण के लिये किया गया काय 'दान' के रूप मे प्रतिष्ठित था, इसीलिये प्रत्येक परगने मे ऐसी दान वृत्तियाँ विद्यमान थीं जो कि समाज के एक वग की जीविका का साधन थी। गरासिया गावा म भी व्यक्तिगत और सस्थागत का विभाग विद्यमान था।

सारिणी—6

गरासिया गांव व्यक्ति/सस्थागत

क्रम	परगना	व्यक्तिगत ब्राह्मण	चारण	भाट	भोजक सेवक	अन्य	योग	सस्थागत एकलिंग	चार भुजा	गुसांई	कुलयोग
1	बदनोर	4	7	—	1	7	19	1	—	—	20
2	गीलूड	4	1	7	—	1	13	—	—	—	13
3	तलेटी	14	—	6	1	2	23	—	—	—	23
4	मोही	14	7	—	1	2	24	—	—	—	24
5	उटाला	3	4	1	1	—	09	—	1	—	10
6	बारा (मोण्डर डूगला)	28	8	8	—	—	44	—	—	1	45
		67	27	22	4	12	132	1	1	1	135

सारिणी—6 द्वारा गरासिया पट्टा के स्तरीकरण में प्रथम स्थान ब्राह्मणो का द्वितीय स्थिति चारणो की तत्पश्चात् भाटों का स्तर था। इससे स्पष्ट होता है कि राणा राजसिंह के काल में ब्राह्मण चारणो से अधिक सम्मानित और प्रभावी रहे थे।

जबकि सस्थागत गांवों में धर्मनिरपेक्षता और पंथ निरपेक्षता का उदाहरण उक्त सारिणी द्वारा स्पष्ट हो रहा है। इस प्रकार परगना बही द्वारा हमें आर्थिक उपलब्धियों का विवरण प्राप्त होता है वहाँ पट्टा बही इस बही की अध्ययन सामग्री से तुलनात्मक परिविक्षण के लिये सहायक हो सकती है। अन्ततः दोनों बहियों की आलेख-सामग्री मेवाड़ राज्य के पूर्ववर्ती और परवर्ती सदभ क्रम को क्रमशः करने के लिये मेवाड़ के इतिहास के विशिष्ट काल का तथ्यात्मक वस्तुनिष्ठ चित्र प्रस्तुत करती है।

राजसिंह की उल्लेखित बही और उसका डा भाटी द्वारा दो भागों में सम्पादन राजस्थान की सत्रहवीं शताब्दी का अध्ययन करने में अत्यन्त सहायक है। किन्तु इस सामग्री पर अभी तक सूक्ष्मतर विश्लेषण की आवश्यकता है जिसे शोधार्थी बार बार प्रयोग द्वारा ही इस बही की वैज्ञानिकता सिद्ध कर सकता है। बही के सभी सम्पादकों ने सामग्री को सूचनात्मक प्रस्तुति के रूप में ही देखा है यद्यपि डा भाटी का सम्पादन सामग्री के विश्लेषणात्मक पक्ष की परखी करता है पर उसे अब सिद्ध करने की आवश्यकता है।

बही में जहाँ राणा राजसिंह के व्यक्तिगत व्यय के दफ्तर और उसकी बही में किया गया खर्च उल्लेखित है पर राणा के जनाना और कुंवर प्रसाद के खर्च का ब्यौरा बही में कहीं भी उपलब्ध नहीं होता है। इसी प्रकार झाला राजपूतों का विवरण भी बही में उल्लेखित नहीं है जबकि सामन्तों की श्रेणी में उसका स्थान सम्मानित रहा था। वि स 1727 (1670 ई) तक राणा राजसिंह द्वारा बादशाह औरंगजेब से खैराबाद, माडलगढ़, जहाजपुर, फूलिया बनेड़ा हुरडा बदनोर आदि प्राप्त कर लिये गये थे किन्तु परगना बही में माडलगढ़ और बदनोर के अतिरिक्त किसी का उल्लेख नहीं है। शायद इसका कारण अब परगनों का राजस्व निश्चित और निरन्तर नहीं था।

बही मुगल मेवाड़ सम्बन्धों का सकेत तक प्रस्तुत नहीं करती है जैसे औरंगजेब की मित्रता और शत्रुता के परिणामों से प्रभावित राजपूत अथवा राजपूतेत्तर लोगों का आर्थिक लाभ या हानि का चित्र क्या रहा था? इसी प्रकार राजसमुद्र योजना उसका मुहूर्त आदि का ब्यौरा भी बही में नहीं है जबकि सवऋतु विलास बाग के कमठाणे (काम) का खर्च बही में बतलाया गया है। आदिवासी प्रांतों के राजस्व का उल्लेख इस बही की अन्य विशेषता है। राणा राजसिंह काल की यह बही आय व्यय की दृष्टि से आय की स्थिति को अधिक स्पष्ट करती है वहाँ व्यय की कमी। अतः यह शासन बचत की दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा था। प्रो एस आर शर्मा के इस दृष्टिकोण का भी बही समर्थन करती है कि राणा राजसिंह द्वारा लोक-कल्याण का व्यय मुगल सम्राटों की तुलना में कहीं अधिक था। सब मिलाकर यह बही राजसिंह के शासन का सशक्त आर्थिक पक्ष प्रस्तुत करने में अपना विशिष्टतम स्थान रखती है।

आर्थिक व सामाजिक इतिहास का आधार स्रोत मारवाड़ रा परगना री विगत*

—डॉ भंवर भादानी, अलीगढ़

मुहणोत नणसी (1610–1670 ई) राजस्थान के रेगिस्तानी अंचल का एक मात्र ऐसा इतिहासकार है जिसने मारवाड़ के सर्वांगीण गजेटियर की रचना कर इतिहास आयामों को नया बल प्रदान किया। इस ग्रंथ में उसने अकिंचित सी दिखने वाली सूचना को भी स्थान दिया जो उसकी दृष्टि में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी। सूचना संकलन की उसकी सजगता एक आधुनिक सांख्यिकीवेत्ता की दृष्टि के समान है।

मारवाड़ रा परगनां री विगत' सूचना संकलन के प्रति उसकी सम्पूर्ण प्रतिबद्धता को दर्शाने वाला महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि राजनतिक घटनाओं के क्रमबद्ध विवरण के साथ ही सांख्यकीय आंकड़ों का यह एक विशाल भंडार है। आर्थिक आंकड़ों के संकलन का कार्य निश्चित एक नीरस एवं बोझिल कार्य है लेकिन ग्रंथ के अध्ययन से इस बात का भान होता है कि नणसी के लिए आंकड़े संकलन का कार्य एक सरस एवं सरल कार्य था। इसका प्रमाण उसके द्वारा संयोजित एवं व्यवस्थित आंकड़े हैं। उसकी संयोजन पद्धति की यह विशेषता है कि दो हजार गांवों से भी अधिक विविध आंकड़ों को एकरूपता प्रदान करने में वह आश्चर्यजनक रूप से सफल रहा।

इस ग्रंथ के अध्ययन के पश्चात् एक सामान्य प्रश्न उठता है कि ग्रंथ की रचना के पीछे नणसी का क्या उद्देश्य था? सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि चूंकि वह मारवाड़ के आर्थिक मामलों का मंत्री (दीवान) था इसलिए अपने स्वयं के एवं अपने स्वामी के ज्ञान के लिए ऐसा करना एक अनिवार्यता थी। इसे एक सक्षम प्रशासक की सक्रियता एवं सजगता भी कहा जा सकता है। एक सक्षम प्रशासक की यह मुख्य विशेषता होती है कि वह अपने अधीन मंत्रालय को अणुतम सूचना से पूर्णतः परिचित रहे। इस दृष्टि से तो नणसी अपने उद्देश्य में पूर्ण सफल रहा।

दूसरा उद्देश्य था भावी इतिहासकारों का आधार सामग्री प्रदान करना। यह उद्देश्य दो व्यक्तियों से सम्बन्धित था। जहां तक नणसी का सम्बन्ध है उसने तो अपना काम पूरा कर दिया। दूसरे पक्ष को अपना दायित्व पूरा करना है।

---

* सम्पादक डॉ नारायणसिंह भाटी राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर

यह दायित्व नणसी द्वारा प्रदान किए गये आकड़ा की व्याख्या से सबधित है। इस अचल या क्षेत्र के सामाजिक एव आर्थिक इतिहास पर शोध करने वाला शोधार्थी इन आकडो के आधार पर एक वज्ञानिक इतिहास की सरचना करके इस उद्देश्य की पूर्ति कर सकता है। दूसरे शब्दो मे इन आकडो की व्यापक परिप्रेक्ष्य मे व्याख्या नणसी जसे इतिहासकार के प्रति सही श्रद्धाजलि है। मैंने अपने इस आलेख मे नणसी द्वारा प्रदत्त सूचनाओ के आधार पर मारवाड के इतिहास के कतिपय पक्षो के पुनर्निर्माण का एक प्रयास किया है।

I

सवप्रथम किसी भी क्षेत्र के अध्ययन के लिए उस क्षेत्र की भौगोलिक सीमा का निर्धारण अत्यन्त आवश्यक है। यह आर्थिक इतिहास के लिए बुनियादी बात है। जब तक हमे इसका पूण ज्ञान नही होता तब तक हमारे आगे के निष्कष भी स्पष्ट नही हो सकते। इसलिए इसे इतिहासलेखन का भी अपेक्ष कहा जा सकता है। भौगोलिक सीमा निश्चितिकरण क इस काय मे नणसी द्वारा सकलित सूचनाए हम सहायता प्रदान करती हैं। उनका ग्रथ विगत जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह के समय के सात परगनो के सम्पूर्ण टप्पो एव गाँवो की सूची प्रदान करता है। ब्रिटिश काल मे तयार किए गए गाँव स्तर के मानचित्रो की सहायता से हम तत्कालीन समय के राज्य की सीमा का निर्धारण कर सकते हैं। मानचित्र पर गाँवा को दर्शाकर परगना एव परगना के अन्तगत प्रत्येक टप्पा सीमाकन कर सकते हैं। मानचित्र पर इस प्रकार गाँवो को दर्शाकर हम आवासीय पटन (सेटलमेन्ट पटन) का अध्ययन कर सकते हैं। मानचित्र के अध्ययन के आधार पर यह निष्कष भी निकाला जा सकता है कि मारवाड सभाग की किस दिशा मे गाँवा का सकेन्द्रण अधिक रहा और किस तरफ कम।

गाँवो के किसी विशेष स्थान या दिशा म स्थापित होने की पृष्ठभूमि मे कई कारण होते हैं। उनम सर्वाधिक मुख्य कारण होता है पानी की उपलब्धता। इसलिए यह स्वाभाविक है कि गाँवो का सकेन्द्रण नदी के आस पास के क्षेत्रो तालाबो कुआ एव नालो के समीप सर्वाधिक होता है। नणसी अपनी सूचनाओ म इस बात का जिक्र अवश्य करता है कि गाँव किस नदी के किनारे स्थित है या फिर उसम कुओ की कितनी सख्या है आदि। नणसी द्वारा सकलित सूचनाओ के आधार पर हम विभिन्न प्रकार के सिंचाई के साधनो एव अन्य प्रकार के जलाशयो तालाबो को मानचित्र पर दर्शा सकते हैं। इसके पश्चात् दोनो प्रकार के मानचित्रो के तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा हम यह निष्कष निकाल सकते हैं कि जहाँ पानी की उपलब्धता के साधन अधिक हैं वहाँ गावों की बसावट सर्वाधिक है।

इसके पश्चात् महत्त्वपूर्ण प्रश्न जनसख्या की जानकारी से सम्बन्धित है। नणसी प्रत्यक्ष रूप से जनगणना से सम्बन्धित सूचना सकलित नही करता है। लेकिन अप्रत्यक्ष

रूप से वह हमे दो प्रकार की सूचनाए प्रदान करता है प्रथम घरो की सख्या एव द्वितीय हलो की गिनती। विगत म गांवा मे दी गई घरा की सख्या अपूर्ण है। बहुत कम गावा के लिए इस प्रकार की सूचना उपलब्ध है, इसलिए इसके आधार पर हम जनसख्या का अनुमान नही लगा सकते। लेकिन दूसरी तरफ हला की गिनती के आंकडे काफी मात्रा म उपलब्ध हैं। मारवाड की जनसख्या का अनुपात लगाने मे ये आकडे काफी उपयोगी प्रमाणित हो सकते हैं। विगत' मे कुल नौ परगना में से [illegible] परगनो के लिए हला के आकडे उपलब्ध हैं वे हैं सोभन, जतारण मावोर, सिवाना फलोदी एव पोकरण। जोधपुर, मेडता एव जालार से सम्बन्धित सूचना इसमे सचालित नही है। प्रत्येक गांव के लिए हलो की सख्या की जानकारी सकलित की गई है। सामान्यत हलो की सख्या शून्य की सख्या में दज की गई है। कभी कभी नणसी हलो की एक निश्चित सख्या न देकर एक रेंज देता है। इसस सभवत यह तात्पय हो सकता है कि इस दौर म खेती मे भिन्नता थी या कुछ निवासी अप्रवासी थे, इसलिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते रहते थे। इसलिए नणसी निम्नतम एव अधिकतम हला की सख्या दज करता है। गांवो मे हलो की गिनती सम्भवत हलो के अनुसार कर लगाने हेतु की जाती थी।

अगर हमारे पास किसी भी भौगोलिक क्षेत्र के लिए हलो की सख्या उपलब्ध है तो हम ग्रामीण जनसख्या का अनुमान लगा सकते हैं अगर हम ग्रामीण जनसख्या एव हला के मध्य अनुपात स्थापित कर सकें। इस अनुपात को प्राप्त करने के लिए हमे आधुनिक समय के स्रोतो का सहारा लेना पडेगा। 1929 30 के वष के मारवाड कि कृषि सम्बन्धी आकड हमारे लिए उपयोगी हो सकते हैं। इसक आधार पर हम अनुपात का पता लगा सकते हैं। इस प्रकार विभिन्न जिला के बारे मे ज्ञात जनसख्या हला मे अनुपात को सत्रहवी शती के परगनो की हला की सख्या पर लागू कर सकते हैं। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि क्या हम बीसवी शताब्दी के तीसरे दशक के अनुपात को सत्रहवी शती पर लागू कर सकते हैं? इसके लिए हमे दो प्रकार के अनुमान लगाने पडेंगे प्रथम कृषीय उत्पादना के तरीका म 1930 तक कोई परिवतन नहीं आया इसलिए हलों के चलाने के लिए उतनी ही सख्या मे लोगो की आवश्यकता थी जितनी कि सत्रहवीं शती मे थी, हाँ द्वितीय कृषि एव गैर कृषि जनसख्या का अनुपात भी वही था। इसमे भी कोई परिवतन नही आया था। दोनों ही अनुमान अतार्किक नही कहे जा सकते क्योकि मारवाड मे 1930 से पूव किसी प्रकार की आधुनिक कृषि तकनिकी का विकास नही हुआ था एव न ही ग्रामीण क्षेत्र म आधुनिक उद्योगो की स्थापना हुई थी जिससे कि गर कृषीय जनसख्या मे वृद्धि होती।

इस प्रकार अब हम मारवाड की ग्रामीण जनसख्या का अनुमान लगा सकत हैं। इसके पश्चात् हम शहरी जनसख्या का अनुमान भी लगा सकते हैं। शहरी जनसख्या के अनुमान के लिए हम नणसी द्वारा सकलित शहरो के घरो की गणना को आधार बना सकते हैं। परगना हैडक्वाटरो के घरो की गणना अत्यन्त व्यापक है। यहाँ

तक कि कुछ अपवादों को छोड़कर निम्न जाति के घरों की भी गणना की गई है। इसका तात्पर्य यह है कि हम प्रति घर 4-5 व्यक्ति मान कर घरों की संख्या से गुणा करके शहरी जनसंख्या का पता लगा सकते हैं।

इस प्रकार ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या के योग के द्वारा हम सम्पूर्ण मारवाड़ की सत्रहवीं शती की जनसंख्या का पता लगा सकते हैं। इसी के साथ हम ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या के अनुपात को भी स्थापित कर सकते हैं। एक बार जनसंख्या का अनुमान लगा लेने पर हमें इस क्षेत्र के आर्थिक इतिहास के अन्य पक्षों पर आगे बढ़ने में सहायता मिल सकती है। अब हम जनसंख्या एवं आर्थिक गतिविधियों के मध्य सम्बन्धों का विस्तार से अध्ययन कर सकते हैं।

जनसंख्या निर्धारण के पश्चात् खेती के विस्तार की जानकारी अत्यन्त आवश्यक है। दोनों के मध्य गहरा सम्बन्ध है। किस क्षेत्र में कितनी भूमि में खेती होती थी एवं कितना क्षेत्र कृषि योग्य नहीं था इस बात का ज्ञान आवश्यक है। इसके अनुमान हेतु नैणसी हमें दो प्रकार के साक्ष्य उपलब्ध करवाते हैं प्रथम हलों की गिनती एवं द्वितीय आराजी के आंकड़े। हलों के आधार पर खेती योग्य भूमि का अनुमान इस आधार पर लगाया जा सकता है कि नैणसी स्वयं एक स्थान पर यह लिखते हैं कि हल के पीछे पचास बीघा भूमि होती है। हम कुल हलों की संख्या को पचास से गुणा करके कुल खेती योग्य या जोती गई भूमि का अनुमान लगा सकते हैं। लेकिन इस अनुमान को मानने में हमारे सम्मुख एक मुश्किल उपस्थित होती है और वह यह कि हम तत्कालीन बीघा के माप का ज्ञान नहीं है अगर हमें किसी समकालीन स्रोत से इस बात का ज्ञान हो सके तो हम सम्पूर्ण कृषि क्षेत्र का पता लगा सकते हैं।

लेकिन दूसरे प्रकार के आंकड़े आराजी अर्थात् भू मापन के आंकड़े हैं जो अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। नैणसी परगना मेड़ता के आराजी आंकड़ों का संकलन करता है। ये आंकड़े प्रत्येक गांव स्तर तक उपलब्ध हैं। ये आंकड़े उसके अपने समय के हैं इसलिए बीघा एवं डपनरी में हैं क्योंकि उस समय यही बीघा प्रचलन में था। इन आंकड़ों के द्वारा हमें परगना मेड़ता के कुल रकबे एवं वास्तविक जोती गई भूमि का पता चलता है। इनके गहन अध्ययन के द्वारा हम जनसंख्या एवं वास्तविक जोती गई भूमि के मध्य सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं। उदाहरणार्थ इस परगने में जोती गई भूमि का कुल भूमि से अनुपात काफी अधिक आता है। इसका तात्पर्य यह है कि इस परगने में हल जोतने वाले हाथों की संख्या काफी अधिक थी अर्थात् ग्रामीण जनसंख्या काफी थी।

इसी प्रकार हम मारवाड़ के विभिन्न परगनों एवं टप्पा क्षेत्रों से होने वाली अनुमानित एवं वास्तविक आय का पता लगा सकते हैं। इस प्रकार के अनुमान के लिए नैणसी हमें रेख (अनुमानित आय) एवं हासिल के आंकड़े उपलब्ध करवाता है। 'रेख' से तात्पर्य किसी भी क्षेत्र की अनुमानित आय से है। मारवाड़ के शासक

अपने अधीन प्रत्येक गाँव की आय अनुमान का आकलन करते थे। 'हासिल' से तात्पर्य वास्तविक राजस्व संग्रह की राशि से है। ये दोनों प्रकार के आंकड़े 'विगत' में विपुल मात्रा में उपलब्ध हैं।

रेख के इन आंकड़ों की सहायता से हम मारवाड़ के परगना एवं टप्पा स्तर तक से होने वाली आय का पता लगा सकते हैं। इसके लिए सर्वप्रथम हम मानचित्रीय वर्ग मील में क्षेत्रफल को ज्ञात करना होगा। यह हम एक आधुनिक संयत्र प्लानीमीटर की सहायता से कर सकते हैं। इस प्रकार ज्ञात विभिन्न क्षेत्रों के क्षेत्रफल को हम रेख' (जो कि रुपयों में अंकित है) से विभाजित करके प्रति वर्ग मील रुपए में अनुमानित आय का पता लगा सकते हैं। इसी पद्धति के द्वारा हम प्रति वर्ग मील हासिल की भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार इन आंकड़ों के माध्यम से हम यह पता लगा सकते हैं कि मारवाड़ का कौनसा क्षेत्र कृषि उत्पादन की दृष्टि से काफी समृद्ध था एवं कौन सा पिछड़ा। इन दोनों स्थितियों के लिए उत्तरदायी कारणों का भी पता लगाया जा सकता है। सिंचाई के साधनों का मानचित्र पर दर्शा कर हम इन दोनों स्थितियों को व्याख्यायित कर सकते हैं। जिन क्षेत्रों में कुँओं एवं नदियों का वर्चस्व था वे क्षेत्र अधिक उपजाऊ थे इसीलिए इन क्षेत्रों की प्रति वर्ग मील आय का अधिक होना स्वाभाविक था एवं जहाँ ये साधन उपलब्ध नहीं थे वहाँ अनुमानित आय का कम होना स्वाभाविक था। इसी प्रकार हम जनसंख्या एवं आय सकेंद्रण का भी अध्ययन कर सकते हैं।

इन उपर्युक्त बिन्दुओं के अतिरिक्त हम शहरी दस्तकारी उद्योग की भी स्थिति का अध्ययन कर सकते हैं। विगत' मारवाड़ के विभिन्न शहरों में दस्तकारी उद्योगों में लगे दस्तकारों के घरों की संख्या अंकित करती है। यह हमें दो प्रकार की सूचनाएं उपलब्ध कराती है—प्रथम व्यावसायिक समूहों में घरों की संख्या एवं द्वितीय, व्यावसायिक समूहों पर लगने वाले करों की दर एवं वसूल की गई राशि। इन आंकड़ों की व्याख्या के द्वारा हम शहरी दस्तकारी उद्योग के स्वरूप एवं विस्तार का अध्ययन कर सकते हैं।

नैणसी शहरों में निवास कर रहे विभिन्न दस्तकारों के नाम एवं उनके घरों की संख्या दर्ज करता है। हम इन घरों की संख्या को प्रति घर 4.5 व्यक्ति मान कर विभिन्न दस्तकारों में लगे लोगों की संख्या का पता लगा सकते हैं। इससे यह भी पता लगाया जा सकता है कि कौन सा दस्तकारी उद्योग ऐसा था जिसका विस्तार सर्वाधिक हुआ। इन आंकड़ों से यह भी ज्ञात होता है कि वस्त्र उद्योग काफी समृद्ध उद्योग था एवं जनसंख्या का सर्वाधिक अनुपात इस उद्योग से सबद्ध था। जैसा कि सर्वविदित है कि सत्रहवीं शताब्दी में भारतीय वस्त्र उद्योग का विश्व व्यापार पर वर्चस्व था लेकिन अंग्रेजों के आगमन के पश्चात् शनैः शनैः यह उद्योग बर्बाद हो

गया । इसके कारणो की जाच हम नणसी द्वारा सकलित आंकडो एव 1891 ई की व्यावसायिक जनगणना की पारस्परिक तुलना के द्वारा कर सकते हैं ।

किसी भी क्षेत्र के आर्थिक इतिहास लेखन के लिए उपयुक्त बिन्दु महत्वपूर्ण हैं । नणसी द्वारा रचित विगत हमे इन बिन्दुओ के अध्ययन के लिए सामग्री उपलब्ध करवाती है । इसम सकलित सूचनाओ के आधार पर हम जागीर व्यवस्था, व्यापार-वाणिज्य एव इसी प्रकार के अन्य विषयों का अध्ययन कर सकते हैं ।

II

नणसी की विगत राजनतिक एव सामाजिक इतिहास-लेखन का भी एक आधार दस्तावेज है । वह मारवाड मे राठोडा के आगमन से पूव एव उसके पश्चात् के सम्पूण घटना चक्रों का विस्तृत ब्योरा प्रस्तुत करता है जो इस क्षेत्र के राजनैतिक इतिहास के अध्ययन के लिए अत्य त महत्त्वपूण है । इसके अतिरिक्त सम्पूण परगनो के व्यक्तिगत इतिहास की विकास यात्रा को भी वह रेखांकित करता है । मुगल राठौड सम्बन्धा पर सकलित सूचनाए मारवाड के पक्ष एव दृष्टि को दर्शाने वाली हैं ।

विगत मे सकलित सूचनाओ के आधार पर गाँव मे निवास करने वाली मुख्य जातियो का अध्ययन किया जा सकता है । इस अध्ययन से यह पता लगाया जा सकता है कि मारवाड के किस क्षेत्र मे किस जाति विशेष का वचस्व था । एक क्षेत्र विशेष किस जाति के जागीरदार के अधीन था एव उस क्षत्र का मोमिया किस जाति का था । अगर उपयुक्त सम्पूण सूचनाओ को एक साथ मिला कर अध्ययन करें तो अत्यन्त महत्वपूण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं । इस प्रकार के अध्ययन के द्वारा जातियो के पारस्परिक गठबन्धन का पता लगाया जा सकता है । ये ही वे कारण थे जो राज्य की राजनीति मे जातियों के स्थान एव स्तर को निर्धारित करते थे । इस प्रकार के अध्ययन राजनतिक-सामाजिक समीकरणो को समझने मे हमे सहायता प्रदान करते हैं ।

मोमिया एव उनके अधीन रहने वाली कृषक एव गर कृषक जातियो के पारस्परिक सम्ब धों के अध्ययन के लिए विगत एक अमूल्य दस्तावेज है । मोमिया एव वेठीया या वेठीया के मध्य पारस्परिक सम्ब धा का आधार क्या था ? मोमिया अपने कृषि एव गर कृषि कार्यों के लिए वेठीया से जो काय लेता था उसके बदले मे उसे क्या देता था ? वेठीया का काय पुश्त दर पुश्त चलता था या नहीं । ये ऐसे प्रश्न हैं जो मध्यकालीन सामाजिक इतिहास के महत्वपूण पक्ष हैं जिनका अध्ययन विगत के आधार पर किया जा सकता है ।

धार्मिक अनुदानों पर निभर करने वाला एक वग या जो राज्य द्वारा प्रदत्त भूमि अनुदान पर जीवनयापन करता था । इस वग में मुख्यत ब्राह्मण चारण भाट एव जोगी सम्मिलित थ । विगत म स्थान स्थान पर यह दज किया गया है कि किस

महाराजा ने किसलिय इन वर्गों को ये गाँव दान में दिए थे। इन कारणों का अध्ययन राजाओं की सामाजिक प्रतिबद्धता को उजागर करेंगे। साथ ही हम इन धार्मिक वर्गों की सामाजिक भूमिका का भी व्यापक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण कर सकते हैं।

उपयु क्त विषयों के अतिरिक्त भी ऐसे अन्य विषय हैं जो सामाजिक इतिहास की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं एव इसमें नैणसी की विगत काफी सीमा तक सहायक हो सकती है। यह अध्ययन सर्वांगीण अध्ययन नहीं है बल्कि इसमें कुछ बिन्दुओं को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है लेकिन यह निर्विवाद सत्य है कि नैणसी कृत 'विगत' सामाजिक आर्थिक इतिहास लेखन का एक आधार स्रोत है। सत्रहवीं शती के मारवाड़ के इस महान् इतिहासकार को सही श्रद्धांजलि उसके द्वारा संकलित सूचनाओं के विशाल भण्डार के उपयोग एव उनकी विश्लेषणात्मक व्याख्या के द्वारा ही दी जा सकती है।

मेवाड रावल-राणाजी री बात* ऐतिहासिक मूल्यांकन

—डा राजेन्द्रनाथ पुरोहित, उदयपुर

मेवाड म सूयवंशी शासकों को ससार मे सबसे प्राचीन राजवंश कहलाने का गौरव प्राप्त है। भारत म मेवाड के अतिरिक्त अन्य कोई राज्य नही जिसने निरन्तर 1300 वर्षों तक एक ही भूमि पर स्वतन्त्र शासक के रूप में राज्य किया हो। इस गौरवशाली परम्परा क पीछे यहां के पराक्रमी तथा यशस्वी शासकों की अपनी मातृ भूमि के लिये बलिदान तथा समर्पित सेवाओं का प्रतिफल है। राजस्थान के इतिहास लेखन के काय म पिछले 350 वर्षों से कई विद्वानो ने अपना योगदान दिया किन्तु इतिहास की आधारभूत सामग्री का प्रकाश म लाने की ओर ध्यान नही दिया गया फलत कई ऐतिहासिक भ्रांतियाँ अस्तित्व म आयी जिन्होंने शोधार्थियों को दिशा विहिन कर दिया।

प्रताप शोध प्रतिष्ठान के पूव निदेशक डा हुकमसिंह भाटी का साधुवाद देना चाहूंगा जिन्होंने मेवाड के इतिहास की अप्रकाशित मूल सामग्री को प्रकाश मे लाने का बीडा उठाया। उन्होंने 'माहवजस प्रकाश सीसोद वंशावली तथा रावल राणा जी री बात आदि रचनाओ के अतिरिक्त पटटे परवाने आदि पुरालेखीय सामग्री प्रकाश म लाने का स्तुत्य काय किया। इन रचनाओं क प्रकाशन से शोध जगत् को ऐतिहासिक तथ्यों के उद्घाटन म सहायता मिली है। मेवाड म ऐतिहासिक काव्य ग्रन्थों जैसे सगतरासो राजविलास भीमविलास आदि पर काय हुआ है किन्तु ऐतिहासिक गद्य रचनाओ पर बहुत कम शोध काय हुआ है। इस सन्दभ मे मेवाड रावल राणा जी री बात' ग्रन्थ एक महत्त्वपूण रचना है जिसका ऐतिहासिक मूल्यांकन करना आलेख का उद्देश्य है।

उक्त ग्रन्थ राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की उदयपुर शाखा के हिन्दी राजस्थानी संग्रह के अन्तगत अवस्थित है। ग्रन्थ की भाषा मेवाडी राजस्थानी तथा लिपि देवनागरी है। ग्रन्थ म पुष्पिका अनुपलब्ध होने से इसके रचयिता तथा रचनाकाल अज्ञात है किन्तु ग्रन्थ में महाराणा जयसिंह (1680 1698 ई) के शासनकाल तक का विवरण उपलब्ध होने से अनुमानित यही समय इसका रचनाकाल है। ग्रन्थ की लिपि बडे अक्षरो में होने से सुवाच्य है। ग्रन्थ में मेवाड़ के गुहिलवंशी रावल तथा सीसोदवंशी राणा' शासकों का इतिहास होने से इसका शीर्षक रावल राणा री बात' हुआ। रचना मे उल्लेखित ऐतिहासिक घटनाओ तथा पात्रों का क्रमबद्ध इतिहास होने से इसे एक ऐतिहासिक रचना का स्थान प्राप्त है।

---

* सम्पादक डॉ हुकमसिंह भाटी प्रताप शोध प्रतिष्ठान उदयपुर

ग्रन्थ के प्रारम्भ म राजा विजयभूप से बापा रावल तक के शासको का विवरण पौराणिक गाथाओ पर आधारित होने से अतिशयोक्तिपूर्ण है किन्तु बाद के शासको म महाराणा हमीर (1326 1364 ई) मे प्रामाणिक सामग्री हमे प्राप्त होती है। ग्रन्थ के अध्ययन से ऐसा विदित होता है कि लेखक ने समसामयिक ऐतिहासिक सामग्री, सीसोद वशावली, अमरकाव्यम् राजप्रशस्ति काव्यम्, आदि का अध्ययन किया है, अत तत्र घटनाओ की तिथियां भी सही मिलती हैं राजनीतिक घटनाओ का क्रमबद्ध विवरण भी प्राप्त होता है। चित्तोड के प्रथम साके (1303 ई) मे रावल रतनसिंह की अपने 12 पुत्रो तथा 5 भाइयो सहित मृत्यु हो जाने के बाद मेवाड की रावल शाखा का अत हुआ, तत्पश्चात् सीसोदा के हमीर ने पुन अपने बाहुबल से चित्तोड विजय कर राणा' शाखा की स्थापना की। ग्रन्थकार ने हमीर द्वारा 'मुजा बालेचा का वध करने की घटना का विशद् विवरण प्रस्तुत करते हुए हमीर के शौर्य एव पराक्रम की प्रशसा की है। राणा अजयसिंह के पुत्र क्षेमसिंह तथा सज्जनसिंह का मेवाड छोड दक्षिण में जाने का उल्लेख किया है। ऐसी मा यता है कि छत्रपति शिवाजी मेवाड के इन्ही राजकुमारो के वशज थे। ग्रन्थ मे राणा लाखा, मोकल तथा कुम्भा के काल म मेवाड मारवाड सम्ब धों पर विस्तृत विवरण प्राप्त होता है। रिडमल की पुत्री हसाबाई का लाखा से विवाह पितृभक्त चूण्डा द्वारा मोकल के पक्ष मे गद्दी का त्याग, मोकल की चाचा मेरा द्वारा हत्या राठोड रिडमल द्वारा चाचा मेरा का वध कर प्रतिशोध लेना तथा कु भा को राज्यासीन करना, रिडमल तथा राघवदेव के मतभेद तथा राघवदेव की हत्या, मेवाड राज्य पर मारवाड गुट का बढता दबाव, चूण्डा का मेवाड म पुन आगमन, राठौडो से प्रतिशोध लेकर मडोवर पर अधिकार तथा राजमाता हसाबाई व मनुराग पर (मारवाड) मडोर पुन जोधा को प्राप्त होना आदि घटनाओ का विवरण देते हुए ग्रन्थकार ने तत्कालीन राजनीतिक स्थिति का विशद् वर्णन किया है। ग्र थ मे 'होली के फागोत्सव के अवसर पर रिडमल द्वारा कु भा का वध करने के षडयन्त्र का उल्लेख है।

चूण्डा के त्याग के पुरस्कार स्वरूप उसे "दसेस मेवाड रा मह कमाड चित्तोड रा भाहरू विरुद प्राप्त हुआ। राणा सागा री बात' प्रकरण मे राणा रायमल के जीवनकाल में उत्पन्न उत्तराधिकार युद्ध का वर्णन करते हुए महाराणा के पुत्र पृथ्वीराज, जयमल तथा सागा के मध्य उत्पन्न वैमनस्य का प्रमुख कारण एव ज्योतिषी की भविष्यवाणी को बताया, इसी भविष्यवाणी के फलस्वरूप पृथ्वीराज तथा जयमल को अपने जीवन से हाथ धोना पडा तथा सागा का उत्तराधिकारी हेतु माग निष्कटक हो गया। किन्तु सागा के शासनकाल के युद्धो तथा उपलब्धियो का उल्लेख ग्र थ मे नहीं किया गया है। सागा का अत, कमचन्द पवार द्वारा कालपी मे उसे विष दिये जाने के फलस्वरूप होना बताया गया है। विक्रमादित्य के प्रकरण में चित्तोड के दूसरे साके का विस्तृत वर्णन किया गया है, कि तु ग्र थकार ने बहादुरशाह के स्थान पर मालवे के शासक बाजबहादुर का उल्लेख किया है जो भ्रान्तिवश प्रतीत होता है। राणा उदयसिंह की बात म तत्कालीन राजनीतिक घटनाओ का क्रमबद्ध विवरण प्राप्त होता है। वि० सं० 1624 में चित्तोड के दूसरे साके के बाद महाराणा का चार मास तक राजपीपला मे निवास तत्पश्चात् गिरवा म आकर 'उदयपुर नगर' बसाने का

उल्लेख है, जिसका प्रमाणीकरण अमरकाव्य वशावली' से होता है। वि स 1629 मे गोगुन्दा में महाराणा उदयसिंह का स्वगवास होना उल्लेखित है, जा समसामयिक रचनाओ के अनुसार सही है।

राणा प्रताप के प्रकरण अतगत ग्र थकार ने राणा का राज्याभिषक कुभलगढ म होना बताया है। उदयसागर के तट पर राजा मानसिंह के सम्मान मे प्रताप द्वारा आयोजित भोज का विषद वणन करते हुए ग्र थकार मानसिंह तथा प्रताप के मध्य सवाद प्रतिसवाद को हल्दीघाटी युद्ध का प्रमुख कारण बताता है। इस घटना की पुष्टि भी मेवाड के समसामयिक ऐतिहासिक काव्यो 'राजप्रशस्ति अमरकाव्यम् आदि से होती है। उक्त घटना तत्कालीन परिवेश का एक आकस्मिक कारण था जिसे नकारा नही जा सकता। जगमाल को गद्दी से हटाकर प्रताप को गद्दीनशीन करने मे मेवाड के सामतवग की महत्ती भूमिका दर्शाई गई है। मुगल थानो का वणन करते हुए ग्रन्थकार गोगुन्दा मानसिंह पानरवा अमीशाह उदयपुर मोहब्बत खा तथा चित्तौड मोहब्बत खा का उल्लेख करता है यही नाम 'सीसोद वशावली' मे भी प्राप्त होते हैं। राणा अमरसिंह के सन्दभ म दीवेर के थानेदार सुल्तानखा का सहार उसके (अमरसिंह) द्वारा अपने शासनकाल म किया गया बताया है किन्तु वास्तव म यह घटना प्रताप के शासनकाल तथा अमरसिंह के युवराज काल म घटित हुई। महाराणा अमरसिंह ने उदयपुर मे अमर महल तथा बडीपाल का निर्माण करवाया। महाराणा जगतसिंह से महाराणा जयसिंह के काल मे घटित राजनीतिक घटनाओं का विवरण श्यामलदास कृत वीर विनोद तथा ओझा कृत उदयपुर राज्य का इतिहास से प्रमाणित होता है। महाराणा जयसिंह एव अमरसिंह के मध्य उत्पन्न मतभेद का वणन करते हुए ग्रन्थकार महाराणा जयसिंह द्वारा धाणराव पहुचकर गोपीनाथ मेडतिया तथा दुर्गादास के सहयोग से पुन राज्य प्राप्ति का उल्लेख करता है इस सफलता के पीछे गोपीनाथ मेडतिया की माता की प्रमुख भूमिका दर्शाई गई है जो ग्रन्थ की एक अतिरिक्त सूचना है। मेवाड के महाराणाओ के निर्माण काय के सन्दभ में महाराणा जगतसिंह द्वारा जगन्नायराम के मन्दिर का निर्माण तथा वि० स० 1708 मे इसकी प्रतिष्ठा महाराणा राजसिंह द्वारा राजसमन्द, बडी का तालाब (जनासागर) तथा देबारीद्वार का निर्माण तथा महाराणा जयसिंह द्वारा वि० स० 1749 मे जयसमन्द के प्रतिष्ठा उत्सव के दिन तुलादान एव पुरोहित को 'पचलावल महादान, तथा 5000/- रुपये लागत के गाव दान मे दिये जाने का वणन प्राप्त होता है। राजनीतिक षडयन्त्रों का स्पष्ट वणन किये जाने पर वस्तु स्थिति को समझने के लिये यह ग्रन्थ उपयोगी है।

उपयु क्त ऐतिहासिक विवरण के अतिरिक्त इस रचना से हम राजपूत सस्कृति का जीवत चित्र दृष्टिगोचर होता है जिसके अन्तगत दरबारी वेशभूषा खान पान आभूषण त्योहार तथा दरबारी शिष्टाचार का प्रत्येक घटना के साथ सुन्दर वणन किया गया है। यह वणन ग्रन्थ की सास्कृतिक निधि है।

अत मेवाड के इतिहास में रावल राणाजी री बात रचना का प्रमुख स्थान है। अत इतिहास लेखन में इसका उपयोग किया जाना आवश्यक है।

इतिहास लेखन में महाराजा मानसिंह री ख्यात* की उपयोगिता

—डॉ उषाकंवर राठौड, जोधपुर

राजस्थानी भाषा के सम्पादित ग्रन्थ इतिहास लेखन मे उपयोगी सिद्ध हो सकते है यदि उस सम्पूर्ण सामग्री का उपयोग इतिहास लेखन की दृष्टि से किया जाय। इस दृष्टि से राजस्थान मे विविध प्रकार की ख्यातें लिखी गई है और उनकी सख्या हजारो मे हैं। राजस्थान के इतिहास लेखन मे ख्यातें एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। कुछ ख्यातो का लेखन तत्कालीन समय में ही हुआ है और ख्यातकार स्वय इन राजनीतिक घटनाओ का साक्षी रहा है इसलिए वे अन्य सामग्री से अधिक प्रामाणिक हैं। 'महाराजा मानसिंह री ख्यात' भी ऐसी ही ख्याता म स एक है। यह ख्यात खिडिया भाईदान द्वारा लिखित[1] एक ऐतिहासिक दस्तावेज है जिसमे महाराजा मानसिंह के समय का वृत्तान्त मिलता है।

महाराजा मानसिंह मारवाड के प्रसिद्ध शासक विख्यात कवि एव अपने समय के नीति निपुण शासक मान जाते हैं। महाराजा मानसिंह का समय लगभग 60 वर्षों का रहा है। इस ग्रन्थ म उनक जीवन का समय सवत् 1839 मिती माह 11 तृतीया गुरुवार तथा मृत्यु समय सवत् 1900 भादवा सुद 11 शुक्रवार अकित है।[2] इसके अतिरिक्त इस ख्यात मे उनके जीवन मे घटित घटनाओ का उल्लेख प्रामाणिकता के साथ किया गया है तथा इन घटनाओ की पुष्टि क लिए राजा के रुक्कों तथा कुछ अन्य समसामयिक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक पत्रों को भी प्रामाणिक रूप मे प्रस्तुत किया गया है। महाराजा मानसिंह की ख्यात में वर्णित विविध प्रमुख घटनाओ का अध्ययन किया जाय तो तत्कालीन परिस्थितियो का जो स्पष्ट चित्र हमारे समक्ष आता है उसे निम्न बिन्दुओ के आधार पर प्रस्तुत किया जा सकता है—

राजनीतिक घटनाए—महाराजा मानसिंह का सम्पूर्ण जीवन अनेक प्रकार की कठिनाइयो से आग्रस्त रहा किन्तु इन्होंने अपना रास्ता आत्मशक्तिवान एक कुशल राजनीतिज्ञ की भाति बनाया। इस ख्यात में महाराजा मानसिंह एव उनके चचेरे भाई भीमसिंह के गद्दीनशीनी के विवाद से लेकर महाराजा तख्तसिंह के जोधपुर आगमन तक की राजनीतिक घटनाक्रम का विस्तृत एव प्रामाणिक वर्णन मिलता है।

---

* सम्पादक डॉ नारायणसिंह भाटी राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृ 240

2 वही पृ 3

इस ख्यात का प्रारम्भ ही राजगद्दी के उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर हुए विवाद से हुआ है। इसके अ तगत महाराजा भीमसिंह द्वारा स्वय गद्दी के मालिक बनने एव महाराजा मानसिंह द्वारा जोधपुर से कूच करके जालौर गढ मे शरण लेने की घटना प्रमुख रूप से आई है।[1] इसके अतिरिक्त इस ख्यात से यह भी स्पष्ट होता है कि युग मे "जो राजनीतिक घटनाक्रम चलते थे उनमे रियासत के प्रमुख जागीरदारो और मुत्सद्दियों की भूमिका के साथ महाराजाओ की पासवाना की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती थी। पासवान गुलाबराय ने अपने प्रभाव से जालौर मे अनेक ओहदेदारो की नियुक्तिया करवाई थी[2] तथा उसका राज्यकाय मे भी काफी हस्तक्षेप रहता था।

महाराजा मानसिंह की कायपद्धति तथा उनके व्यक्तित्व का सही विवेचन इस ख्यात मे मिलता है। जिन राजनीतिक परिस्थितियो मे से होकर महाराजा मानसिंह को गुजरना पड़ा था उससे उनका "यक्तित्व और अधिक उभर कर हमारे समक्ष आया है। चू कि इस ख्यात का मुख्य के द्र बि दु महाराजा मानसिंह ही थे अत राजनीतिक घटनाए भी उनके ही चारो ओर चक्कर काटती परि"लक्षित होती हैं।

महाराजा मानसिंह अत्य त कुटनीतिज्ञ शासक थे। उनकी रियासत के अतिरिक्त पिंडारिया मुसलमानो तथा अग्रजो के साथ भी प्रभावपूण स्थिति थी पर तु उनके ही लोगो द्वारा धोखा देने के कारण उ हें निर तर सघर्षों का सामना करना पड़ा। अनेक जागीरदारो ने अग्रजो से मिलकर महाराजा मानसिंह के अधिकार कम करवा दिये तथा उनके पुत्र को उनके प्रति विद्रोही बना दिया। रियासत मे अनेक विद्रोह हुए लेकिन महाराजा विचलित नहीं हुए और अपनी राजनीतिक सूझ बूझ से सम्पूण राजनीतिक समस्याओ का समाधान कर दिखाया। इन सघषपूण दिनो मे महाराजा मानसिंह को अनेक प्रकार के अनुभव हुए। जि होने सकट के समय उनका साथ दिया उनको महाराजा ने सम्मानित किया और जागीरें ईनायत की[3] तथा धोखा और बगावत करने वालो को जहर के प्याले पिलाकर मार डाला।[4] उ होने अपनी रियासत म देशभक्त कवियो, सगीतकारो और कारीगरो को ही सम्मान तथा राज्याश्रय नही दिया अपितु जसव तराय होल्कर[5] तथा नागपुर के भोंसला[6] को भी शरण देकर क्षत्रियोचित धम का निर्वाह किया। महाराजा मानसिंह का

---

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृ 3 4
2 वही पृ 18 21
3 वही पृ 71 74
4 वही पृ 131
5 वही पृ 30
6 वही पृ 147

व्यक्तित्व विरोधाभासों से भरा हुआ लगता है। एक तरफ वे अत्यन्त कठोर लगते तो दूसरी ओर अत्यन्त सरल और चतुर राजनीतिज्ञ दिखाई देते थे।

महाराजा मानसिंह के पड़ौसी राज्यों से भी अच्छे सम्बन्ध थे। जैसाकि महाराजा मानसिंह के गद्दीनशीनी के समय बीकानेर, किशनगढ़, जयपुर एवं उदयपुर राज्यों से भेजे गये उपहारों से स्पष्ट है।[1] परन्तु आगे चलकर महाराणा भीमसिंह की पुत्री कृष्णाकुमारी को लेकर सम्बन्धों में कटुता आ गई।[2] महाराजा मानसिंह ने जोधपुर के महाराजा तथा अपने भाई भीमसिंह की मांग कृष्णाकुमारी का विवाह दूसरे राजकुल में करना सम्पूर्ण राजकुल की प्रतिष्ठा के प्रतिकूल समझा। मारवाड़ के छोटे बड़े जागीरदारों एवं अन्य लोगों को महाराजा मानसिंह ने अपने प्रभुत्व के बल पर युद्ध के लिए आमन्त्रित किया लेकिन पोकरण ठाकुर सवाईसिंह ने इन मतभेदों को और अधिक भड़काने का काम किया। इस ख्यात में इन युद्धों एवं ठाकुर सवाईसिंह की भूमिका का विस्तार से उल्लेख मिलता है।

महाराजा मानसिंह कुशल प्रशासक भी थे इसलिए वे किसी विद्रोह को बर्दाश्त नहीं करते थे। सिरोही के राव उदयभाण ने महाराजा मानसिंह के उस प्रस्ताव को मानने से इन्कार कर दिया जिसके अनुसार महाराजा मानसिंह अपनी सेना को कुछ समय के लिए सिरोही में रखना चाहते थे। सिरोही के राव द्वारा यह प्रस्ताव नहीं मानने पर महाराजा मानसिंह ने विशाल सेना सिरोही पर भेजी और सवत् 1861 में सिरोही पर महाराजा का अधिकार हो गया।[3] इसी प्रकार घाणेराव के ठाकुर मेड़तिया दुरजनसिंह द्वारा महाराजा मानसिंह का हुकम न मानने पर सेना भेजकर सवत् 1852 में घाणेराव को अपने अधीन कर घाणेराव, नारलाई को खालसे कर दिया।[4] नीबाज, चडावल बासणी आदि के जागीरदारों को सबक सिखाने के लिए उनके साथ भी वैसा ही व्यवहार किया।[5] इस ख्यात में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जिसके आधार पर महाराजा मानसिंह के वर्चस्व का परिचय प्राप्त होता है।

महाराजा मानसिंह अत्यन्त स्वाभिमानी और देशभक्त शासक थे। उन्हें अंग्रेजों के अलावा पिंडारियों और मीरखां का भी मारवाड़ रियासत में दखल देना अच्छा नहीं लगता था। यद्यपि अपनी कमजोर स्थिति के कारण वे इनका खुला विरोध भी नहीं कर पाते थे। इस कारण महाराजा मानसिंह का अंग्रेजों से शीत-युद्ध मृत्यु पर्यन्त चलता रहा। अंग्रेजों ने अजमेर को स्थाई केन्द्र बनाकर तत्कालीन राजपूताने

---

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृ 31
2 वही पृ 40-42
3 वही पृ 31 32
4 वही पृ [illegible]
5 वही पृ 140

जब्त कर ली। इसी प्रकार मीरखां को बुलाकर महाराजा ने षड्‌यन्त्र रचकर सवाईसिंह को मौत के घाट उतार दिया।[1]

महाराजा और जागीरदारों के बीच संघर्ष होने से अंग्रेजों को रियासती कार्यों में दखल देने का अवसर मिल गया। रियासत में जागीरदारों के बढ़ते हुए असन्तोष का लाभ उठाकर अंग्रेजों ने एक ओर महाराजा मानसिंह पर अपना दबाव बढ़ाया तो दूसरी ओर जागीरदारों से भी रकम वसूल कर उनको भी अपने अधीन रखने का प्रयास किया। संवत् 1880 में जब आसणी, आऊवा, चण्डावल और नीबाज के जागीरदारों ने अजमेर जाकर अपने पट्टा बाबत शिकायत की[2] तब अंग्रेजों ने उनका पक्ष लेते हुए अपनी ओर मिला लिया। इस ख्यात में ऐसे और भी अनेक प्रसंग मिलते हैं।

इस ख्यात में हमें यह जानकारी भी मिलती है कि महाराजा मानसिंह के शासनकाल में जागीरदार असन्तुष्ट थे। अधिकांश जागीरदारों ने अशोभनीय षड्‌यन्त्र रचकर तथा विश्वासपात्र मुत्सद्दियों ने शत्रुओं से साठ गांठ कर महाराजा मानसिंह का पथ कण्टकाकीर्ण कर दिया था। यदि राज्य की आन्तरिक व्यवस्था उनके अनुकूल होती और सामन्त सरदार उनका पूरा पूरा साथ देते तो मारवाड़ का नक्शा कुछ और ही होता।

इस ख्यात से महाराजा मानसिंह तथा सामन्तों के आपसी सम्बन्धों एवं जागीरदारों की अनिश्चित मनोदशा का तो पता लगता ही है साथ ही मानसिंह द्वारा अपने पक्ष के जागीरदारों चाकरों आदि को पुरस्कृत कर जो पट्टे, रेख, पदवियां आदि दीं उनका विवरण भी प्राप्त होता है जो नव इतिहास लेखन हेतु उपयोगी है।

नाथों के साथ सम्बन्ध—नाथ मत शैव धर्म का निर्गुणी रूप है जिसके अनेक धार्मिक स्थान मारवाड़ में सकड़ों वर्षों से स्थापित हैं। यद्यपि महाराजा मानसिंह के पूर्व के शासक वल्लभ कुल सम्प्रदाय में दीक्षित थे और महाराजा मानसिंह भी नाथ धर्म के अनुयायी नहीं थे।[3] परन्तु जिस घटना ने उन्हें नाथ धर्म का अनुयायी बनाया उसका विस्तार से विवरण इस ख्यात में मिलता है। महाराजा मानसिंह जालोरगढ़ में अपने प्रतिद्वन्द्वी महाराजा भीमसिंह की सेना के दीर्घकालीन घेरे से अत्यधिक भय विपन्न होकर जब आत्मसमर्पण करने का निश्चय कर रहे थे तब आयस देवनाथ ने उन्हें मंगल भाव से आश्वस्त करते हुए राजसिंहासन प्राप्त करने की जो

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृ 75 78
2 वही पृ 140
3 महाराजा मानसिंह व्यक्तित्व एवं कृतित्व डॉ रामप्रसाद दाधीच पृ 33

भविष्यवाणी की वह सत्य निकली ।[1] इस घटना ने महाराजा मानसिंह की देवनाथ में अटूट आस्था पैदा कर दी। उन्होंने राजगद्दी पर आसीन होते ही देवनाथ को अपना गुरु बनाया। जब देवनाथ को जोधपुर बुलाया गया तो स्वय उनकी अगवानी करने के लिए एक कोस तक उनके सामने गये ।[2]

महाराजा मानसिंह ने नाथो की सुविधा का हर समय ख्याल रखा। सूरसागर मे देवनाथ आयस के आवास की सुव्यवस्था भी की गई[3] तथा उनकी आज्ञा तथा सलाह से महाराजा मानसिंह राजकाज चलाने लगे। आयस देवनाथ के अन्य भाइयो को भी एक एक मन्दिर देकर उनके भी ठिकाणे बाध दिये ।[4] इसके अतिरिक्त देवनाथ के निवास हेतु महामन्दिर का भव्य निर्माण करवाना,[5] उसकी सुव्यवस्था एव भावी वृद्धि के लिए पर्याप्त प्रबन्ध करना तथा महामन्दिर के साथ अन्य नाथ मन्दिरो एव उनके महतों की व्यवस्था के लिए वित्तीय प्रावधान रखना आदि अनेकानेक सुविधाए प्रदान कर महाराजा मानसिंह ने नाथो पर असीम अनुकम्पा एव श्रद्धा का परिचय दिया।

आयस देवनाथ महाराजा मानसिंह के लिए सवस्व थे तथा मारवाड के प्रशासन की धुरी थे। उनसे राजनीतिक और प्रशासनिक मामलों मे भी परामर्श लिया जाता था। सवत् 1865 मे जोधपुर तथा बीकानेर के मध्य और जोधपुर जयपुर के बीच जो सधिया हुई[6] वे आयस देवनाथ के प्रयत्नों से हुई। इनके ही पथ प्रदर्शन से सिंघवी इन्द्रराज राज्य का प्रशासन चलाता था। रियासत के प्रमुख पदा पर नियुक्तिया करने तथा उन्हें जागीरें प्रदान करने मे इन नाथो का प्रभाव कार्य करता था। यहाँ तक कि महाराजा और उनके परिवार के आपसी निर्णयो को भी वे प्रभावित करते थे। महाराजा मानसिंह के पुत्र छत्रसिंह को युवराज की पदवी दिलाने मे भीमनाथ जी का भी हाथ था।[7] कुछ ऐसे प्रसग भी इस ख्यात में मिलते हैं जब अग्रेजों से सन्धि करते समय भी नाथों ने अपना प्रभाव दिखाया।

नाथो और वल्लभ कुल सम्प्रदाय के बीच जो धार्मिक सघर्ष चला था उसमे भी महाराजा मानसिंह ने नाथो का पक्ष लिया। वल्लभ सम्प्रदाय के मन्दिरों की भूमि तथा गाव तक जब्त कर लिये[8] तो दूसरी ओर नाथो को अनेक गाव और जमीन

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृ 3-4
2 वही पृ 23
3 वही पृ 23
4 वही पृ 29
5 वही पृ 38
6 वही पृ 81 83
7 वही पृ 107
8 वही पृ 29

ईनायत की गई। महाराजा मानसिंह की आयस देवनाथ के प्रति श्रद्धा को सभी ने स्वीकार किया परन्तु उनके राजनीतिक प्रभुत्व के प्रति जो असन्तोष धीरे धीरे पनपा उसकी परिणति उनकी हत्या से हुई। महाराजा मानसिंह ने आयस देवनाथ की किले पर ही जय मदिर के निकट गोशाला में समाधि की व्यवस्था की।[1]

महाराजा मानसिंह के कारण मारवाड के धार्मिक जीवन म नाथ सम्प्रदाय को वही प्रधानता मिल गई थी जो उत्तर भारत म 13वीं एव 14वी शताब्दी मे नाथ सम्प्रदाय को प्राप्त थी। उन्होने महामन्दिर को अनेक अधिकार प्रदान कर सबसत्ता सम्पन्न बना दिया था। यद्यपि महामन्दिर धार्मिक स्थल था किन्तु मारवाड की सत्ता का सचालन प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से वहीं से होता था। नाथो ने राजाज्ञा से अपनी एक सेना भी बना ली थी जिसके कारण उपद्रवो की अनक घटनाए भी घटित हुइ। महामन्दिर को शरण स्थल का भी अधिकार प्रदान कर दिया गया था जहा कोई भी शरण लेने के बाद अपने आपको सुरक्षित महसूस करता था। नागपुर के भोसलो को नाथो ने महामन्दिर म शरण दी।[2] इस बात से अग्रेज नाराज हुए। महाराजा मानसिंह ने नाथो का पक्ष लेते हुए उन्हें यह कहकर समझाया कि धार्मिक स्थल पर फौज भेजना उचित नही है। वास्तव में महाराजा मानसिंह की नाथो के प्रति अटूट श्रद्धा थी। इस ख्यात म ऐसे अनेक उदाहरण उपल ध है जिनके आधार पर महाराजा मानसिंह की नाथ भक्ति का परिचय मिलता है।

महाराजा मानसिंह के समय नाथो को आर्थिक रूप से भी पूर्ण सहायता दी जाती थी और उनकी धार्मिक यात्राओ के लिए राजकीय व्यवस्था की जाती थी। लाडूनाथ की सवत् 1885 की गिरनार तीर्थयात्रा मे रियासत की ओर से व्यवस्था की गई।[3] इसी प्रकार आयस देवनाथ के पिता महेशनाथ के भण्डारे[4] एव उसके सुपुत्र लाडूनाथ के जन्म-उत्सव[5] पर जो धनराशि खच हुई उसका भार भी रियासत ने वहन किया। मारवाड के सभी परगनो मे श्रीनाथजी का मन्दिर बनाने मे काफी खर्चा लगा। इस प्रकार महाराजा मानसिंह ने राज्य का काफी धन इन नाथो पर खच कर दिया।

नाथो के कारण महाराजा मानसिंह को अनेक कष्ट भी सहने पड। नाथो के प्रति उनकी अन्धानुभक्ति ने ही मारवाड के अनेक जागीरदारो और अग्रेजो को उनके विरुद्ध कर दिया। परन्तु महाराजा मानसिंह ने उनकी परवाह न करते हुए नाथो

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृ 104
2 वही पृ 147
3 वही पृ 148
4 वही पृ 39
5 वही पृ 87

का हर वक्त ध्यान रखा। अंग्रेजों के साथ दुतरफी शर्तों में भी महाराजा ने नाथों की मर्यादा एवं आजीविका को सुरक्षित बनाये रखा।[1] रियासत के सम्पूर्ण राज्य कार्य में 'श्री जलन्धरनाथजी' अथवा 'जय जलन्धरनाथ' से राजाज्ञा, रुक्के, पट्टे परवाने एवं पत्र आदि प्रसारित होने लगे। महाराजा मानसिंह ने अपने परमप्रिय सम्प्रदाय को एक सुदृढ़ धर्म संघ का रूप दे दिया। राजधानी जोधपुर नाथ नगर हो गया और मानसिंह स्वयं 'माननाथ' हो गये।

महाराजा मानसिंह की नाथों के प्रति असीम श्रद्धा का एवं उनके शासनकाल में नाथों के अन्य क्रियाकलापों का वास्तविक चित्रण इस ख्यात में हुआ है जबकि मारवाड़ के अन्य इतिहास ग्रंथों में नाथों से सम्बन्धित विवेचन बहुत कम उपलब्ध होता है।

केन्द्रीय शक्ति के साथ सम्बन्ध—महाराजा मानसिंह के समय अंग्रेजों ने देशी रियासतों के काम काज में धीरे धीरे हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया था। इसके अतिरिक्त पिंडारियों एवं मीरखां जैसी बाह्य शक्तियों ने अपनी सेना का केन्द्र बनाकर मारवाड़ रियासत में दखल देना शुरू कर दिया था।

केन्द्रीय सत्ता अंग्रेजों का सर्वाधिक प्रभाव था। यद्यपि उपर्युक्त बाह्य शक्तियों के कारण भी महाराजा मानसिंह की राज्य व्यवस्था अव्यवस्थित बनी रही थी। अंग्रेजों ने तो अजमेर को केन्द्र बनाकर रियासत की राज्य व्यवस्था में हर समय दखल देने का प्रयास किया। उनका महाराजा मानसिंह के प्रति किस तरह का व्यवहार रहा तथा दोनों के बीच जो घटनाएं घटित हुई उन सबका विस्तारपूर्वक एवं प्रामाणिक विवेचन इस ख्यात में उपलब्ध होता है। जब संवत् 1880 में आसोप आऊवा चडावल और नींबाज के जागीरदार अपने पट्टा बाबत शिकायत लेकर अजमेर गये तब बड़े साहब बहादुर ने उन्हें महाराजा मानसिंह के पास यह कहकर भेजा कि महाराजा साहब हमारी तरफ से भेजे जाने वाला का कुछ नहीं कहेंगे। इतना ही नहीं महाराजा द्वारा पकड़े गये दू पावन हरीसिंह आदि दूसरे सरदारों को अंग्रेजों ने कैद से निकलवा दिया।[2] महाराजा पर अंग्रेजों का प्रभाव निरन्तर बढ़ता गया। उन्होंने अनेक ऐसी संधियां करने को विवश कर दिया जिससे महाराजा का शासन व्यवस्था पर प्रभाव कम हो गया। इनकी दुर्नीति और षड्यन्त्रों ने महाराजा मानसिंह को काफी कमजोर बना दिया।

अंग्रेजों की सत्ता का निरन्तर प्रसार होने लगा था। उन्होंने महाराजकुमार छत्रसिंह के माध्यम से कम कनमी शर्तें रखकर सर्वप्रथम अपना प्रभाव प्रारम्भ किया।[3]

---

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृ 177
2 वही पृ 140
3 वही पृ 117 119

इस समझौते को 'ग्रहनामा' नाम दिया गया जिसके अनुसार कहा गया कि जोधपुर रियासत की रक्षा की सम्पूर्ण जिम्मेदारी अंग्रेजो की होगी। महाराजा और उनकी संतान कम्पनी बहादुर की सरकार की बदगी हिफाजत करेगी। महाराजा किसी से झगड़ा नहीं करेंगे और झगड़ा होता है तो उसका निस्तारण अंग्रेजो की योजना के अनुसार होगा। ऐसी अनेक शर्तों के माध्यम से अंग्रेजों ने महाराजा मानसिंह को धीरे धीरे राज्य सत्ता से दूर करने का प्रयास किया। जब महाराजा मानसिंह ने अपमानजनक इन शर्तों को मानने से इन्कार कर दिया तब अंग्रेज उनसे नाराज रहने लगे तथा अपने यापको सम्पन्न करने के लिए महाराजा मानसिंह से बहुत बड़ी रकम ऐंठना शुरू कर दिया। वि० स० 1889 म अंग्रेजो को सवा म 1500 घोड़े भेजने तय हुए थे। रियासत की ओर से घोड़े भेजे गए तब अंग्रेजो ने पसन्द नहीं आने पर उन घोड़ों को वापस भेज दिया तथा उनके बदले एक लाख पन्द्रह हजार रुपये लेना निश्चित किया।[1] ऐसे कई उदाहरण इस ख्यात म मिलते हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि केन्द्रसत्ता अंग्रेज ने महाराजा मानसिंह को आर्थिक रूप से भी कमजोर करने के प्रयास किये।

अंग्रेजों का काफी प्रभुत्व स्थापित हो गया था। सवत् 1895 में कर्नल सदरलैण्ड जोधपुर आया और महाराजा पर दबाव डालकर अंग्रेजो की इच्छानुसार राज्य चलाने को कहा। महाराजा के आंशिक रूप से ही मानने पर सदरलैण्ड नाराज होकर चला गया। अंग्रेजो की नाराजगी और स्थिति की नाजुकता को देखते हुए महाराजा ने चढ़ी हुई रकम के पेटे अनेक स्वर्ण आभूषण आदि अजमेर भेजे। अंग्रेजो का दखल इतना अधिक बढ़ गया था कि अन्ततोगत्वा महाराजा मानसिंह को किला खाली कर उनको सौंपना पड़ा। यद्यपि बाद म किला उन्हें वापस मिल गया परन्तु अंग्रेजो की हुकूमत का दफ्तर सूरसागर में लगने लगा। उन्होने यहाँ अपने पोलिटिकल एजेण्ट भी नियुक्त कर रखे थे। इतना ही नहीं अंग्रेजो द्वारा जागीरदारो के पट्टो म आवश्यक दुरस्ती की गई तथा राज्य की आमदनी व खर्च की सही जानकारी भी राज्य के रेकार्ड से पोलिटिकल एजेण्ट ने प्राप्त की। इस प्रकार अंग्रेजों का वर्चस्व रियासती कार्यों में अन्त तक बना रहा।

इस ख्यात से यह विदित होता है कि महाराजा मानसिंह की शासन व्यवस्था में गिरावट एव उनका जीवन सघर्षपूर्ण होने का मुख्य कारण केन्द्रीय सत्ता अंग्रेजों का हस्तक्षेप था। गोरखा से मित्रता भी महाराजा मानसिंह के लिए बाद म अप्रत्याशित आघात का उपहार लाई। इसकी पुष्टि भी इस ख्यात मे कई उदाहरणो से हुई है। इसके अतिरिक्त अंग्रेजो की आज्ञानुसार 'दफ्तर के दरोगे' द्वारा जो खापवार पट्टायत

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृष्ठ 160
2 वही पृ 168

एवं जमा खर्च की विगत आदि का नक्शा बनाकर दिया,[1] उसमें भी अनेक ऐतिहासिक सामग्री के सूत्र उपलब्ध होते हैं। अतः महाराजा मानसिंह और अंग्रेजों के सम्बन्धों को समझने में यह ख्यात महत्वपूर्ण है।

शासन प्रबन्ध—महाराजा मानसिंह ने अपने पूर्वजों की शासन प्रणाली का काफी कुछ अनुसरण किया। प्रशासन सम्बन्धी कार्य चलाने के लिए अनेक पदाधिकारी होते थे। राजा राज्य का सर्वोच्च था। वह राज्य के समस्त अधिकारियों को नियुक्त अथवा पदच्युत कर सकता था परन्तु राज्य के सभी कार्यों में अपने उच्च अधिकारियों से परामर्श कर लिया करता था। यद्यपि उनकी बात मानने के लिए राजा बाध्य नहीं था, परन्तु उचित होने पर बहुधा उनकी बात स्वीकार कर लिया करता था।

शासन व्यवस्था में 'प्रधान' का पद सबसे बड़ा माना जाता था तथा पद की चाकरी के एवज में महाराजा की ओर से जागीर का बड़ा पट्टा दिया जाता था। महाराजा मानसिंह के गद्दीनशीनी के बाद सवाईसिंह चांपावत को प्रधानगी का सिरोपाव हाथी और मोकरण का पट्टा दिया गया। बाद में संवत् 1875 में सालमसिंह को प्रधानगी दी गई।[2] इनकी भूमिका को समझने के लिए ख्यात सहायक है।

प्रशासनिक कार्यों के लिए 'दीवान' का पद भी था। महाराजा मानसिंह के समय 'दीवान' के पद पर अनेक लोगों ने काम किया। ख्यात में गंगाराम भंडारी ग्यानमल मोहणोत, इन्द्रराज सिंघवी फतेराज सिंघवी लक्ष्मीचंद मुलराज सिंघवी आदि के नाम मिलते हैं।[3] इसके अतिरिक्त दीवान कार्य के दायित्व को निभाने हेतु अन्य अधिकारियों के नाम भी ख्यात में उपलब्ध हैं जो कि दीवान की भूमिका को समझने के लिए उपयोगी है। वैसे दीवान समस्त शासन प्रबन्ध से सम्बन्धित कार्यों के लिए उत्तरदायी होता था। इसके अतिरिक्त मारवाड़ के विभिन्न परगनों में 'हाकमों' की नियुक्ति की जाती थी। हाकमों को यद्यपि महाराजा स्वयं नियुक्त करता था परन्तु दीवान का उन पर पूरा नियन्त्रण रहता था।

महाराजा मानसिंह के शासनकाल में जोधपुर दुर्ग में रसोईघर तथा कपड़ा के भण्डार थे जहाँ दरोगा तथा मुसरफों के पद निर्धारित थे। जनानी ड्योढ़ी में भी 'दरोगा' को नियुक्त किया जाता था। सम्पूर्ण राज्य का कार्य मुसाहिबों की सलाह से किया जाता था। संवत् 1877 में सिंघवी फतेराजजी धायभाई कचरदासजी भाटी गजसिंहजी, धांधल गोरधनजी एवं नाजर ईमरतरामजी पाँच मुसाहिब थे,

---

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृ 187 209
2 वही पृ 10 127 218
3 वही पृ 10 35 72 136 152 162 219

जिनका नामोल्लेख इस ख्यात में हुआ है।[1] रियासत का काय पाँचो ही मुसाहिब एक राय से एकता रखकर किया करते थे। कि तु कभी कभी इन मुसाहिबों के बीच मतभेद होने पर राज काय मे बाधाए खडी हुआ करती थी और दो वग खडे हो जाते थे।

जोधपुर राज्य मे शा ■ और व्यवस्था बनाये रखने के लिए 'दफ्तर का दरोगा नामक अधिकारी होता था। किले की सुरक्षा का भार 'किलेदार' पर होता था। किले के सारे सामान की देखरेख करना उसका प्रमुख कत्त"य था। के ■ की राजनीति से सतक रहने के लिए वकील को भी नियुक्त किया जाता था। इसके अतिरिक्त अन्य कई छोटे बडे प ो का उल्लेख भी इस ख्यात मे हुआ है—जसे बख्शी कामदार दोढीदार तालकदार आदि।

इस ख्यात मे आये विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि महाराजा मानसिंह के समय प्रशासन राजस्व और फौज के विभाग पूणतया एक दूसरे से अलग नहीं थे। फिर भी इतने सघषपूण वातावरण के बावजूद भी प्रशासन के सभी विभागो का समुचित प्रब ध कर महाराजा मानसिंह ने एक सुदृढ शासन स्थापित किया।

महाराजा मानसिंह की ख्यात से उस युग की सम्पूण जानकारी राजस्थानी भाषा के सरल गद्य से प्राप्त होती है। इस ख्यात मे वष माह और तिथिया देकर घटनाओ को प्रमाण पुष्ट बनाया गया है। यह सम्पूण तिथिवृत भारतीय काल क्रम के अनुसार है इसलिए अधिक प्रामाणिक भी है। कई बार तिथियों के घटने एव बढने से समय का अ तर आता है वह ईस्वी सन् के द्वारा प्रमाण पुष्ट नहीं किया जा सकता।

यह ख्यात महाराजा मानसिंह के शासन काल की उपयु क्त ऐतिहासिक सामग्री के अतिरिक्त राज्य "यवस्था स य सगठन अय त"न समाज व्यवस्था धार्मिक एव सास्कृतिक वातावरण, जातीय सगठन रीति रिवाज परम्पराए तीज त्यौहारो मेलो एव स्थापत्य कला का भी ज्ञान कराती है। उस समय की धम व्यवस्था सगुण निगु ण सम्प्रदाय और उनके स्थान आवागमन के साधन रहन सहन एव खान पान आदि का वृत्ता त भी इस ख्यात म मिलता है।

स"प मे यह ख्यात महाराजा मानसिंह के शासनकाल की सम्पूण जानकारी के सदभ मे विशिष्ट ऐतिहासिक स्रोत है। इस ख्यात मे सत्यता के साथ क्रमबद्ध प्रमाण पुष्ट सामग्री दी गई है। विशेषत यह ख्यात समसामयिक होने के कारण इतिहास लेखन की दृष्टि से अत्य"त उपयोगी एव महत्वपूण है।

---

1 महाराजा मानसिंह री ख्यात पृ 138
डॉ पद्मजा शर्मा ने इस ख्यात का इतिहास लेखन में भरपूर उपयोग किया है (सपादक)

बाकीदास री ख्यात*

—भवानीसिंह पातावत, जोधपुर

राजस्थान के इतिहास लेखन में यहाँ की ख्यातो का विशेष महत्त्व रहा है। अधिकांशत सामग्री या तो समकालीन ऐतिहासिक काव्यो से अथवा तत्कालीन ख्यातो से ही मिलती है। ख्यातें कुछ तो किसी व्यक्ति विशेष अथवा ठिकाने से सम्बन्धित इतिहास की जानकारी देने वाली होती हैं और कुछ समग्र रूप से तत्कालीन और पूर्वकालीन सामग्री का समेटते हुए ऐतिहासिक आधार को प्रमाणित करती हैं। इस श्रेणी की ख्यातें अवश्य ही अपेक्षाकृत अधिक उपयोगी होती हैं।

महाकवि बाकीदास की इतिहास विषयक कृति 'बाकीदास री ख्यात' राजस्थानी गद्य म लिखी हुई है। बाकीदास जोधपुर के विद्वान् कवि नरेश मानसिंहजी के राजकवि थे तथा सस्कृत, प्राकृत हिन्दी, फारसी, ब्रज और राजस्थानी आदि अनेक भाषाओ के ज्ञाता और नामी इतिहासवेत्ता थे। ख्यात म सर्वप्रथम बाकीदास ने राजपूता री बाता म राजपूतो की प्रत्येक शाखा को उनके मूल स्थान से मिलान करने का प्रयास किया है, जो ऐतिहासिक दृष्टि से उपयोगी है। ख्यातकार ने कुछ शाखाओ की कुल देवियो का भी उल्लेख किया है।

'राठोडा री बाता म राठोडो की प्रत्येक खाप की कुछ विशिष्ट बातें इसमे मिलती हैं जो इतिहास लेखन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। वशावली मे राव सीहा से लेकर महाराजा बखतसिंह तक का वृत्तात है। जिसमें प्रमुख युद्ध ववाहिक सम्बन्ध मुख्य उपलब्धियाँ आदि का वणन है जो इतिहास की लुप्त कडियो को जोडने म सहायक है। इस ख्यात में राव मालदेव के समय की विजयो तथा घटनाओ का वर्णन विस्तार से किया गया है। जैसे—भाटी साकर सूरावत जब अजमेर मे किलेदार था तब वहाँ युद्ध के समय उसके सेवको ने उसे उस युद्ध मे बचा लिया था, पर तु जब बादशाह ने जोधपुर के गढ पर चढाई की तो उस समय वह लडकर गढ पर ही काम आया। गढ मे उसकी छतरी बनी हुई है।[1]

सवत् 1613 म जब हाजी खा से राणा उदयसिंह का युद्ध हुआ तब राव मालदेव ने अपने सरदारो को हाजी खा की रगाथ भेजा जिनमे प्रमुख सरदारो के नाम खाप और घोडो का वर्णन यथा प्रसग उल्लिखित हुआ है[2] जो सवथा नवीन जानकारी है और नव इतिहास लेखन में सहायक सिद्ध हो सकती है।

---

* सम्पादक नरोत्तमदास स्वामी राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर

1 बाकीदास री ख्यात प 4

2 वही, प 14

1618 में सरफुद्दीन की चढ़ाई के समय सातलिया गाव में लड़ाई हुई उसमे मालदेव के जो सरदार काम आये उनका नाम तथा खांप अंकित है।[1] इसके पश्चात् शासकों के जीवन मे घटित घटनाओ का वृत्तांत, उनके अन्त पुर तथा राजाओ की सततियो का विगतवार वर्णन हुआ है। इसमें अनेक ऐसी घटनाओ का उल्लेख मिलता है जो अन्य ख्यातों मे नही मिलता है। सतियों की विगत, रानियों द्वारा मन्दिर तथा तालाब आदि बनवाने की तिथियों का ऐतिहासिक वर्णन उल्लेखनीय है जो उनके धार्मिक अनुराग एव जनकल्याणकारी काय के प्रति रुचि को प्रकट करता है। सवत् 1602 में राव मालदेवजी द्वारा डूगरसिंह से फलोदी लेने का भी उल्लेख है।

बाकीदास ने राजाओ की रानियो, कु वर कवरियो का ब्योरा भी दिया है,[2] इससे राजघरानों के आपस में ववाहिक सम्बन्धो पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। सवत् 1618 मे लोहावट में राव चन्द्रसेन व उदयसिंह के बीच युद्ध हुआ। इस युद्ध मे कौन-कौन से सरदार काम आये,[3] इनका नाम सहित वृत्तात इस ख्यात मे उल्लेखनीय है।

इसी प्रकार सवत् 1668 मे एक शौयपूर्ण घटना का उल्लेख केवल 'बाकीदास री ख्यात' में ही मिलता है। जब जोधपुर के महाराजा सूरसिंहजी दक्षिण मे थे तो उनके साथ महाराजा के प्रधान भाटी गोयददास (लवेरा) का पुत्र जोगणीदास भी था। सयोग से शाही सेना मे कछवाह मानसिंह के एक उमराव के हाथी ने उन्मत्त होकर घोडे की पीठ पर बठे हुए भाटी जोगणीदास को सूड से उठाकर जमीन पर पटकते हुए दाता से बींध दिया। उस स्थिति मे भी शूरवीर भाटी जोगणीदास ने अपनी कटारी से हाथी के मस्तक पर प्रहार किया।[4] उस आत्मबलि वीर की प्रशसा मे तत्कालीन कवियो ने डिंगल गीत लिखे परन्तु बाकीदास के अतिरिक्त किसी इतिहासकार ने इस घटना को उल्लिखित नहीं किया। यह घटना भी नव इतिहास लेखन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

ख्यात में सिंघल राठौडो के अलावा महेचा जतावत कू पावत चापावत करणोत आदि प्रमुख राठौडो के सामतो सरदारो का वर्णन आया है[5] जो उनकी भूमिका को समझने मे सहायक है। मेडतिया राठौडो का भी वर्णन बहुत ही सटीक हुआ है। इसम उनके रण कौशल, स्वामीधर्म व तत्कालीन परिस्थितियो मे उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका को व्यापक रूप से उजागर करने का प्रयास किया गया है।[6]

1 बाकीदास री ख्यात पृ 17
2 वही पृ 18
3 वही पृ 20
4 वही पृ 25
5 वही पृ 48
6 वही पृ 59

संवत् 1614 में अजमेर से कासम खां ने जैतारण पर चढ़ाई की, जिसमें रतनसिंह ऊदावत सहित 35 योद्धा काम आये।[1] बापू गाँव का चांपावत जोगीदास बड़ा ही वीर एवं साहसी हुआ। जब फलोदी किले पर महाराजा बखतसिंह की फौज ने आक्रमण किया तब वह वीर महाराजा रामसिंह के पक्ष में फलोदी किले में कई महीनों तक लड़ा। अन्त में किले के द्वार खोलकर वहीं लड़कर काम आया।[2] ऐसे कई सूत्र ख्यात में मिलते हैं जो नव इतिहास लेखन में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

ख्यात में बीकानेर के राठोड़ों की वंशावली राव बीका से लेकर सूरतसिंह तक दी गई है। बीकानेर का गढ़ महाराजा रायसिंह के द्वारा निर्मित किये जाने का उल्लेख है। गढ़ में कुल कितने द्वार एवं बुर्ज हैं इस उल्लेख के साथ ही गढ़ की बारिकी से सारी विशेषताओं का सांगोपांग विवेचन किया गया है।[3] ख्यातकार ने बीकानेर के घेरे के समय महाराजा जोरावरसिंह के साथ जिन सरदारों व मुत्सद्दियों ने धोखा किया उनका नाम खांप सहित उल्लेखित किया है। बीकानेर के घेरे के बाद बनाड़ (जोधपुर) में महाराजा जोरावरसिंह जयपुर नरेश सवाई जयसिंह से मिले थे, तब उनके साथ जो सरदार, सामंत एवं मुत्सद्दी थे, उनके नामों का भी उल्लेख किया गया है।[4]

ख्यात में किशनगढ़ के राठौड़ों का भी यथा-तथ्य उल्लेख हुआ है जो ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसी क्रम में ईडर आमझरा, रतलाम आदि की वंशावलियां दी गई हैं। रतलाम के राठोड़ रतनसिंह महेशदासोत के पुत्रों के नामों का भी उल्लेख हुआ है।

'गहलोतां री बातां' में गहलोतों की 24 शाखाओं का सर्वप्रथम उल्लेख इस ख्यात में हुआ है। चित्रांग मोरी द्वारा चित्तोड़ का किला बनवाना एवं बप्पा रावल का मोरीयों से चित्तौड़ लेने का प्रसंग[5] भी ऐतिहासिक दृष्टि से उपयोगी है। ख्यात में राणाओं की वंशावली राणा महप से लेकर राणा भीमसिंह तक विस्तृत रूप में दी गई है।[6]

अकबर द्वारा चित्तौड़ विजय के उपरान्त उसके हाथियों, सनिकों एवं अस्त्र शस्त्रों का उल्लेखनीय वर्णन हुआ है। चित्तौड़ में इस समय के साके में 350 स्त्रियों ने

---

1 बांकीदास री ख्यात पृ 68
2 वही पृ 70
3 वही पृ 76
4 वही पृ 78
5 वही पृ 86
6 वही पृ 87

जोहर किया था। इस इतिहास प्रसिद्ध घटना का वणन मसूवी हुआ है। इस युद्ध म दोना पक्षा की सेनाओ मे काम आने वाले योद्धाओ का भी उल्लेख हुआ है।[1]

हल्दी घाटी और जसलमेर अभियान का वणन कुछ नवीन सूचनाए देता है। युद्ध में काम आये योद्धाओ की जानकारी उपयोगी है।[2]

सवत् 1732 (माह सुद 15) को राणा राजसिह द्वारा राजसागर की प्रतिष्ठा की गई।[3] तत्पश्चात् ख्यात मे मेवाड के प्रमुख सरदारा म बनेडा बेदळो कोठारिया, सलूबर देगू बीजोलिया, देवगढ कानोड भीडर आदि की वशावलिया व उनके वैवाहिक सम्बन्धो अन्त पुर एव सततियो का वणन किया गया है।

यादवा री वाता म यादवो एव भाटियो की वशावली दी है।[4] फिर जसल द्वारा जसलमेर बसाने का उल्लेख हुआ है। रावल मूलराज के समय जसलमेर के घेरा लगा उस समय भाटी योद्धाओ के रण कौशल का ख्यात म यथा तथ्य वणन किया गया है।[5] ख्यात म एक जगह साके का भी वणन किया गया है, परन्तु उसकी तिथि नही दी है।

सवत् 1654 मे गोपालदास जमलोत व जसलमेर के भाटिया के बीच युद्ध हुआ इस युद्ध म गोपालदास के काम आने का उल्लेख है।[6]

ख्यात मे जसलमेर गढ की स्थापत्य कला का भी विवरण उल्लिखित है। प्रत्येक राजा के समय क्या-क्या निर्माण काय हुए[7] उनका नाम सहित वणन एतिहासिकता को प्रमाणित करता है।

ख्यात म भाटियो के विभिन्न ठिकाना का वणन किया गया है जिनम बरसलपुर खेजडला लवेरा बीकमकोर एव बालरवा व माणकसाव के जैसा भाटियो की वशावली मुख्य है।

तत्पश्चात् ख्यात म कछवाहा की वशावली उनके द्वारा लड गय प्रमुख युद्धा का उल्लेख किया गया है।[8] इसी तरह इन्दा पडियार मोलवी, वाघला मायावत, पवार, सांखला सोढा आदि क्षत्रिया की वशावली व युद्ध अभियाना का उल्लेख हुआ है। यह वृत्तांत उनकी उपलब्धिया को समझने मे सहायक है।

---

1 बांकीदास री ख्यात पृ 91 92
2 वही पृ 92 93
3 वही पृ 97
4 वही पृ 109
5 वही पृ 110
6 वही पृ 112
7 वही पृ 115
8 वही पृ 123

'चौहाना री बातां' मे उनकी 24 खापो का उल्लेख है।[1] हम्मीरदेव व अलाउद्दीन के बीच हुए रणथम्भोर के युद्ध का वर्णन करने के साथ ही हम्मीरदेव के उस युद्ध म काम आने का उल्लेख हुआ है।[2] इसी तरह अचलदास खीची और माण्डव के बादशाह महमूद बेगडा के बीच सवत् 1482 मे हुए युद्ध एव गागरोनगढ म साका किये जान का उल्लेख भी हुआ है।[3]

अलाउद्दीन की चढ़ाई के समय सोनगरा का हड्‌डे ने जालौर में साका किया। उसी उपरा त का हडदे ने विपत्तिकाल मे जिन जिन ठिकाना से सैनिक सहायता हेतु योद्धाओ को बुलाया था[4] उन ठिकानो का वणर ख्यात म तथ्यात्मक ढग से हुआ है।

ख्यात के अ त म विभिन्न जातियो की वशावलिया दी गई हैं जिनमे क्षत्रियो के अलावा जाट, मराठा, पिंडारी सिख, जोगी, अग्रेज, बेरागी जन साधु, ओसवाल ब्राह्मण, चारण, मुसलमान आदि मुख्य हैं। इनके बारे म कतिपय विशिष्ट बातें ख्यात में मिलती हैं जो अन्यत्र दुलभ हैं।

इस प्रकार बाकीदास ने छोटे छोटे नोटस (टिप्पणिया) के रूप म ऐतिहासिक बातें याददाश्त के लिए अपनी ख्यात म लिखी हैं। उन्होने अपने जीवन काल म करीब 3,000 हजार बातें सग्रहीत कीं। ख्यात म उन्हाने राजपूताने के प्रत्येक राज्य के राजाओ, सरदारो, मुत्सद्दिया आदि के सम्ब ध की एव विशिष्ट व्यक्तिया के साथ रहने वाले साधारण व्यक्तिया तक की बातो को उल्लेखित किया है। जिनका अन्यत्र मिलना कठिन है। राजाओ कु वरो के ननिहाल आदि का भी परिचय दिया है। अनेक राजाओ के जन्म और मृत्यु के सवत् मास, पक्ष तिथि आदि का भी उल्लेख किया है।[5]

। ख्यात म राजपूत जातियो की प्रत्येक खाप का सागोपाग वर्णन किया गया है जो खापवार इतिहास लिखने म सहायक सामग्री के रूप म उपयोगी सिद्ध हो सकती है। सक्षेप मे बाकीदास री ख्यात' को आधार बना कर अभी तक अज्ञात रहे राजस्थान के अनेक ऐतिहासिक वृत्तात प्रकाश म लाये जाने आवश्यक है। इस प्रकार विशेष अनुसधान की आवश्यकता है।

---

1 बांकीदास री ख्यात पृ 141
2 वही पृ 142
3 वही पृ 143
4 वही पृ 150
5 राजस्थान के ख्यातकार व उनके ग्रथा का तिथिक्रम—डॉ हुकमसिंह भाटी

ख्यात देशदर्पण*

—डॉ गिरजाशंकर शर्मा, बीकानेर

सिढायच दयालदास राजस्थान में ख्यात परम्परा के अन्तिम ख्यातकार कहे जा सकते हैं। उनके द्वारा विरचित तीन ग्रन्थ बीकानेर रै राठोडा री ख्यात', 'ख्यात देशदपण व 'आर्याख्यान कल्पद्रुम पिछले सात आठ दशको से राजस्थान के इतिहास लेखन मे ऐतिहासिक स्रोत के रूप मे प्रयुक्त होते रहे हैं। किन्तु उनका उपयोग अध्येताओ के एक वग विशेष तक ही सीमित रहा। सन् 1948 मे अनूप सस्कृत पुस्तकालय स्थित दयालदास की प्रमुख कृति 'बीकानेर रै राठोडा री ख्यात', जिसे दयालदास री ख्यात के रूप मे भी जाना जाता है को स्व डॉ दशरथ शर्मा से सम्पादित करवाकर प्रकाशित कर दिया गया तब से उनकी यह कृति आम अध्येता के पहुच मे आ गई और राजस्थान के इतिहास लेखन मे उसका उपयोग भी अत्यधिक मात्रा मे हुआ व हो रहा है। किन्तु उसकी दूसरी कृति ख्यात देशदपण जिसे राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर ने सन् 1989 मे सम्पादित कर प्रकाशित करवा दिया को पूव दयालदास री ख्यात की भाँति अध्येता वग ने महत्त्व नहीं दिया। कि तु ज्यो-ज्यों इस ग्र थ की कुछ विशेषताओ की जानकारी अध्येता जगत को हो रही है उसी के अनुरूप उसका उपयोग भी इतिहास लेखन में बढता जा रहा है। इस आलेख में हम ख्यात देशदपण ग्रन्थ की विशेषताओ के साथ उसका मूल्याकन प्रस्तुत कर रहे हैं।

अध्येता वग में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब दयालदास ने 'बीकानेर रै राठोडा री ख्यात नामक विस्तृत ग्रन्थ लिख दिया तब उसे ख्यात देशदपण जसा लघु ख्यात ग्रन्थ लिखने की आवश्यकता क्यों हुई? तथ्यो के अभाव में इस सम्बन्ध में स्पष्ट धारणा बना पाना तो सम्भव नहीं है किन्तु यह बात सही है कि दयालदास अनेक तथ्य अपनी 'दयालदास री ख्यात मे न लिख सका उनका उल्लेख ख्यात देशदपण मे किया है। साथ ही पूव ग्रन्थ मे महाराजा रतनसिंह के शासन के अन्तिम समय (सन् 1851) तक की घटनाओं का उल्लेख हुआ है किन्तु वहीं देशदपण महाराजा सरदारसिंह के शासन की भी महत्वपूण घटनाओ का उल्लेख हुआ है। उक्त दोनो तथ्यो पर ध्यान देने से नये ग्रन्थ की रचना की बात समझी जा सकती है।

ख्यात देशदपण का कृतिकार सिढायच दयालदास को यह सौभाग्य प्राप्त था कि उसने (सन् 1828 से 1887 ई तक) बीकानेर राज्य के तीन शासकों क्रमश

---

* सम्पादक डॉ गिरजाशंकर शर्मा राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर 1989

महाराजा रतनसिंह, महाराजा सरदारसिंह व महाराजा डूंगरसिंह के शासन को न केवल एक राजकवि व कूटनीतिक के रूप में देखा अपितु इसे भोगा भी था। इन तीनों ही शासकों का वह समय था जब भारत की अंग्रेजी सत्ता बीकानेर राज्य के आंतरिक व बाहरी मामलों में निरन्तर हस्तक्षेप कर रही थी। यह समस्त घटनाक्रम दयालदास के सामने घटा था। इसके साथ बीकानेर राज्य की समस्त पुरालेखीय ऐतिहासिक सामग्री भी उसकी पहुँच में थी। अतः 'देशदपण' में पूर्व में लिखी बातों ख्यातों और वंशावलियों के उद्धरणों से रचित मध्यकालीन घटनाओं को छोड़कर शेष अधिकांश घटनाएं दयालदास द्वारा अभिलेखों से परखी, साक्षात् देखी व सुनी हुई थीं। फलस्वरूप दयालदास कृत 'ख्यात देशदपण' का महत्व स्वतः ही बढ़ जाता है।

वर्तमान 'ख्यात देशदपण' की केवल दो प्रतियां ही देखने को मिलती हैं। पहली प्रति अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर में सुरक्षित है तो दूसरी बीकानेर स्थित राजस्थान राज्य अभिलेखागार में उपलब्ध है। इन दोनों प्रतियों में मूल प्रति कौनसी है कहना संभव नहीं है। 'ख्यात देशदपण' की उक्त दोनों ही प्रतियां बीकानेर राज्य के प्रसिद्ध मुत्सद्दी घराने के वेद महता जसवन्तसिंह के आदेश से दयालदास द्वारा रचित है। दोनों ही प्रतियों में दयालदास के बोलने एवं रिद्धकरण नामक व्यक्ति के द्वारा ख्यात के लिपिबद्ध किये जाने का उल्लेख है। दोनों ही प्रतियां सन् 1871 ई. में लिखी जानी प्रारम्भ हुई थीं और इनमें तिथि क्रम विक्रम संवत्सर में है तो कहीं ईस्वी सन् का प्रयोग हुआ है। इन प्रतियों में पहले राजनीतिक खण्ड को छोड़ दूसरा खण्ड प्रायशः समान रूप में लिखा हुआ है। इसी प्रकार इनकी भाषा टकसाली राजस्थानी है।

दोनों प्रतियों में उपरोक्त समानता के अतिरिक्त कुछ अन्तर भी है। अनूप संस्कृत पुस्तकालय की प्रति में पहले खण्ड में बीकानेर राज्य के राजनीतिक इतिहास का विवरण 'दयालदास री ख्यात' की भांति महाराजा रतनसिंह (1851 ई.) तक उपलब्ध है जबकि राजस्थान राज्य अभिलेखागार वाली प्रति में राठोड़ों की उत्पत्ति से लगाकर महाराजा सरदारसिंह के शासन काल की 23 नवम्बर सन् 1861 ई. तक की जानकारी दी हुई है। एक बड़ा अन्तर यह भी है कि अनूप संस्कृत पुस्तकालय की प्रति में विक्रम संवत् 1901 से 1902 की घटनाओं का उल्लेख है किन्तु अभिलेखागार की प्रति में विक्रम संवत् 1901 से 1907 की राजनीतिक घटनाओं को लिखना छोड़ दिया है। एक बात और ध्यान देने योग्य है कि अभिलेखागार की प्रति में जहाँ स्थान-स्थान पर तिथियों के स्थान रिक्त छोड़ दिये गये हैं वहीं अनूप संस्कृत पुस्तकालय की प्रति में उनकी पूर्ति की हुई मिलती है। इसी प्रकार अनूप संस्कृत पुस्तकालय की प्रति में दयालदास ने राठोड़ों की जो वंशावली दी है वह महाराजा डूंगरसिंह तक दी है जबकि दूसरी प्रति में ऐसा नहीं है।

ख्यात देशदपण जसा कि पूव मे बतलाया गया था दयालदास ने दो भागो में बाँट कर लिखा। पहले भाग म राठौडा की उत्पत्ति से लगाकर महाराजा सरदारसिंह के शासनकाल की 23 नवम्बर 1861 तक की राजनीतिक घटनाओ को स्थान दिया गया है। राठौडा की उत्पत्ति बीकानेर स्थापना से पूव मारवाड की राजनीतिक स्थिति विक्रम सवत् 1545 से पूव बीकानेर सभाग मे जाट खापो मे मध्य वचस्व के लिये युद्ध एव राव बीका की राजनीतिक जोड तोड व बीकानेर राज्य की स्थापना का रोचक वणन किया गया है। राव बीका के उत्तराधिकारियो का मुगल बादशाह की सेवा म रहना और उसकी ओर से युद्धा म भाग लेने के साथ राज्य के आन्तरिक मामलो मे दीवानो द्वारा उलट फर व रणीवासो की भूमिका भी उल्लेखनीय है। बीकानेर राज्य के जोधपुर राज्य से बिगडते सम्ब ध और आपसी झगडा के साथ बीकानेर शासको के वैवाहिक सम्ब धा की इस खण्ड म विस्तार से चर्चा की गई है। मुगल सत्ता के कमजोर पडने पर मराठा काल व उसके पश्चात् अग्रजी सत्ता का बीकानेर राज्य पर आ तरिक मामला मे हस्तक्षेप प्रशासन मे समय समय पर किये गये परिवतन आदि का विवरण भी मिलता है। ख्यात देशदपण' के राजनीतिक विवरण म मुगल बादशाह अकबर व बीकानेर के शासक राजा रायसिंह के मध्य मतभेदो का वणन अन्य ग्रन्था से परे हटकर अलग ढग से प्रस्तुत किया गया है। सन् 1857 के विप्लव मे महाराजा सरदारसिंह की भूमिका भी इस ग्र थ की विशिष्ट सूचना है।

दयालदास ने ख्यात परम्परा से अलग हटकर ख्यात देशदपण' के दूसरे भाग मे बीकानेर रे पट्टा री विगत के नाम से जो विवरण प्रस्तुत किया है उससे ख्यात देश पण' का महत्त्व काफी बढ गया है। इस खण्ड से बीकानेर की साम ती व्यवस्था एव उसके विकास की महत्वपूण जानकारी उपलब्ध होती है। जसाकि इसके नाम से ही लक्षित होता है इसमे बीकानेर राज्य के उन गावो की विस्तृत सूची आ जाती है जो उसके जागीर क्षेत्र म आते थे। ये गाव बीकानेर राज्य के राठौड शासको के भाई-बाधवो से लकर राज्य के सभी प्रकार के जागीरदारो को प्रदत्त थे। पट्टे के गाँवों की दूसरी सूची म सबसे पहल उन गाँवो का उल्लेख आया है जो राज्य के मदिरो की देखभाल एव व्यवस्था के निमित्त दिय हुए थे। इन गाँवो की आय मदिरो के निमित्त खच होती थी। इन गाँवा के अतिरिक्त राज्य के ब्राह्मणो चारणो और भाटो को दिये गये सासण के गाँवा का विवरण भी मिलता है। उसके बाद राज्य के जागीरदारो के राज्य दरबार मे उनके कुरब के अनुसार गाँवो की सूची है। सबसे पहले राज्य के सीरायत ठिकाने महाजन के ठाकुर रतनसिंघोत की सूची है। गाँवो की इस सूची का महत्त्व इससे और अधिक बढ जाता है जब हम उसमे गाँवों का वर्गीकरण राठौडा और अन्य जाति की राजपूत खापों के अनुसार पाते हैं। प्रत्येक गाँव के ठाकुर का नाम उसकी जागीर म आये विभिन्न गाँवों के नाम जागीरदारो की प्रत्येक खाप का इतिहास गाँवों की पदावार गाँवा मे घरों तथा जनसख्या की

सम्यक जानकारी इस सूची मे उपलब्ध है। इसी के साथ जागीरदारो के लिये निर्धारित रेख का विवरण मिलता है। राज्य के पटटेदारो के पट्टा मे समय समय पर परिवर्तन एव वृद्धि का तिथि अनुसार उल्लेख व राज्य के जागीरदारो और शासक के मध्य उठे विवादो की जानकारी भी उपलब्ध है।

'ख्यात देशदपण' का स्वत त्र रूप से मूल्याकन किया जाये तो कहा जा सकता है कि वि सवत् 1545 मे बीकानेर राज्य की स्थापना से लेकर उन्नीसवी सदी के लगभग छः दशको का क्रमबद्ध अगर कोई इतिहास लिखा गया है तो वह दयालदास कृत देशदपण' ही है। यद्यपि दयालदास चारण जाति से सम्बन्धित होने के कारण चारणी लेखन की परम्परा को छोडना नही चाहता था फिर भी उसने इतिहास लेखन मे आधुनिक मानदण्डो को स्वीकारने मे कोताही नही बरती। दयालदास ने इस ग्रन्थ के मध्यकालीन एव उसके पूव के इतिहास लेखन मे शाही फरमानो के साथ पूर्व में लिखी बातो ख्यातो व वशावलियो आदि का उपयोग किया। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि दयालदास को एक ऐसे राज्य का इतिहास लिखना था जिसका वह स्वय भी एक छोटा पात्र था। ऐसे म इतिहास लेखन मे गरिमा बनाये रखना आसान नहीं होता। कि तु दयालदास ने ख्यात देशदपण मे जहाँ तक सम्भव हुआ पूव सामग्री का अध्ययन कर राज्य में उपलब्ध पुरालेखागारीय अभिलेखो यथा पटटे परवाने, फरमान, खरीतो आदि को घटनाओ का आधार बनाकर उसका मूल्याकन प्रस्तुत किया। इसके बावजूद यह बात सही है कि दयालदास ने तिथि क्रम निर्धारित करते समय एक से अधिक स्रोतो से मिलान नही किया, फलस्वरूप 'देशदपण मे तिथिक्रम मे कुछ त्रुटिया रह गई हैं।

'ख्यात देशदपण' में बीकानेर रे पट्टा री विगत उपलब्ध होने से आधुनिक शोध म इस ग्र थ का महत्व काफी बढ गया है। यद्यपि दयालदास से पूव भी राजस्थान में अनेक ग्र थ रचे गये थे जिनमे राज्य विशष के पट्टेदारो और उनके गाँवो की विस्तृत व्याख्या हुई है। कि तु बीकानेर राज्य के सम्ब ध मे ऐसी सूचना देकर देशदपण' ग्र थ के महत्व को बढा दिया। यह सही है कि दयालदास न अपने इस ग्र थ मे राज्य के सामाजिक और आर्थिक जीवन पर अलग से कोई चर्चा नही की थी। कि तु देशदपण' के इस दूसरे खण्ड से अध्येतागण उक्त दोनों प्रकार की सूचना प्राप्त कर सकते हैं।

जैसलमेर री ख्यात*

—डा टी के माथुर, अजमेर
हिंदी रूपांतर समुद्रसिंह जोधा

भूमिका ऐतिहासिक परम्परा

इतिहास लेखन कला तथा प्रमाण सामग्री संसार भर म बदलते रूपा म विविध व्याख्याओं के विषय रहे हैं। फिर भी कोई आसानी से इतिहास लेखन को एक प्रकार से अधिकतम व्यक्तियों की अधिकतम आवश्यकता और भलाई के लिए ज्ञान का पूर्णत्व कह सकता है जो आने वाली पीढियो के लिए उत्तरदाय व वसीयत तथा लेख प्रमाण का अपूर्व अवसर हो। यह इस प्रकार मानव समाज और युगा युगो के मानवीय व्यवहार आदर्श के विकास और बुद्धि का अन्तभूत विवरण है। राजस्थान अथवा राजपूत राज्यो का इतिहास ऐसे प्रमाणो से भरा है, जो उपयुक्त सिद्धांत की क्षमता को प्रमाणित कर सके। प्रारम्भिक मौखिक परम्परा अथवा कथित शब्द इतिहास के आधार के प्रधान हेतु थ। मौखिक परम्परा की यथार्थता शब्द, वर्ण और उच्चारण के मूल स्वरूप की सुरक्षा का जिम्मा मूल हस्तलिपि की प्रतिलिपि की सच्चाई पारम्परिक कथाएं और गीत इतिहास द्वारा प्राकृत संस्कृत और राजस्थानी के समेकित शिलालेखा से पूर्णता पूरित किए गए। ये लेख युगीन सामाजिक आर्थिक तथा धार्मिक इतिहास के प्रामाणिक स्रोत हैं। परिवार और आश्रम सम्बंधी विवरण जो चोपडो और बहियो म रखे जाते थ, ऐतिहासिक परम्परा का दूसरा आधार बने।

इस्लाम के आगमन ने पेशेवर इतिहासकारो द्वारा इतिहास लेखन के विचार का सूत्रपात किया। मुस्लिम दरबार अति प्रतिभा सम्पन्न विद्वानो द्वारा जो इतिहास लेखन कला म सिद्धहस्त थे भरे रहते थे। स्वयं मसीहा और उत्तर भारत के खलीफाओं सुल्तानो और अमीरो की जीवनियां और उपलब्धियां को दक्षतापूर्वक सूचीबद्ध कर सुव्यवस्थित रूप म प्रस्तुत किया। प्रारम्भ म य ग्रंथ अरबी म कुरान शरीफ और विद्वाना की भाषा म भी लिखे गए। इस प्रकार ग्यारहवी शताब्दी स यह सिलसिला भारत म आया जिससे वशावली एव क्षेत्रीय इतिहास स्वलिखित जीवनियां और संस्मरण इतिहास के प्रतिमान बन गए। राजपूत राज्यो म इतिहास लेखन उसी क्रम में नहीं आया। इतिहास लेखन चारण समाज द्वारा लिखित सामग्री का पर्याय बन गया जो महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्यो पर बल न देकर अपनी भाषा को गद्य म

---

* सम्पादक डॉ नारायणसिंह भाटी राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी

डाल कर जन समाज के सामाजिक, सास्कृतिक, धार्मिक जीवन की अभिव्यक्ति की ओर ध्यान नहीं देते थे। ख्यात लेखन इसी प्रकार का लेखन है जिसके द्वारा राजपूत शासकों की तीव्र रुचि वशानुक्रमित इतिहास लिखवाने की ओर बढी।

जैसलमेर री ख्यात—

ऐतिहासिक साहित्य और शिलालेखो के क्षेत्र म जैसलमेर अद्वितीय साधन सम्पन्न है। छठी शताब्दी से वतमान काल तक के शिलालेख जैसलमेर मे उपलब्ध हैं। यहाँ के राजाओ और जैन समाज द्वारा साहित्यिक गतिविधियो को प्रोत्साहित किया गया। पारम्परिक ज्ञान भण्डारो के दुलभ ग्रन्थों को प्रकाश मे लाने तथा शिलालेखो के उत्खनन म सहयोग देने वाली मण्डली म श्री अगरचद नाहटा, एस आर भण्डारकर, डॉ बूलर और हमन जेकोबी जसे राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय अध्येताओ ने भाग लिया। श्री लक्ष्मीचद (1891 ई) की एतिहासिक तवारीख जैसलमेर' इसके पूव ही सदर्भित थी। 'जैसलमेर री ख्यात तथा अल्पनात भोमजी की ख्यात' में भी यही साहित्य परम्परा दृष्टिगोचर होती है।

'जैसलमेर री ख्यात रावल वैरीसाल के शासनकाल वि स 1921 (1864 ई) तक का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करती है। इसका सकलन एव निर्माण सन् 1860 तक होने के प्रमाण हैं। दीवान नथमल ने अपनी तवारीख मे मेहता अजीत को एक उच्च पदाधिकारी एव ख्याति प्राप्त विद्वान बताया है। मेहता अजीत ने ही सम्भवत 'जैसलमेर री ख्यात' का सकलन किया होगा।[1] राजस्थानी शोध सस्थान चौपासनी, जोधपुर म एक प्रति विद्यमान है जिसे सक्षिप्त रूप मे सन् 1981 मे स्व डॉ नारायणसिंह भाटी पूव निदेशक ने प्रकाशित की। ख्यात को उस समय तक के प्राप्त साहित्य साधनो तथा शिलालेखो के आधार पर गभीर वज्ञानिक अनुसधान के आधार की मुहर प्राप्त है। एसा लगता है कि अजीत मेहता की पहुँच पुस्तकालयो तथा राज्य के कागजातो तक थी। अन्य राजपूत राज्यों के अभिलख आधारित इतिहासो मे वारम्बार सदभ बताते है कि उस वृहद् स्रोत एव साधन प्राप्त थे। इस कृति का महत्व शिलालेखो की सहायक साधन सामग्री मे ही नहीं है, उसी की समकालीन उपस्थित कृति 'भोमजी की ख्यात मे प्राप्त समान तथ्यो की सत्यता भी प्रमाणित करती है। इस ख्यात की प्रासगिकता पूव मध्यकालीन जैसलमेर के इतिहास में जो यादव साम्राज्य की स्थापना स प्रारम्भ होता है, अधिक है।

यद्यपि लेखक ने भूगोल को अधिक महत्त्व नही दिया किन्तु लेखक भाटियों के प्रारम्भिक इतिहास का विश्लेषण करते समय सुदृढ धरातल पर स्थित जान पडता है। ख्यात इस तथ्य को उजागर करती है कि भाटी पौराणिक यादव शासक श्रीकृष्ण के

1 डॉ हुकमसिंह भाटी राजस्थान के ख्यातकार और उनके ग्रंथों का निर्माण पृ 25

पुत्र प्रद्युम्न के वशज थे।[1] ख्यात हमे यह भी सूचित करती है कि यादवो ने मथुरा से पजाब सिंध राजस्थान और गुजरात के क्षेत्रो म गमन किया। यादव वशी बलवद्ध (बाळजी) के पजाब म प्रभाव और पराक्रम का विवरण ख्यात प्रस्तुत करती है जिसने सम्पूर्ण पजाब मे और गजनी के परे तक अपने आपको स्थापित कर लिया था जिसे बाद मे इस्लाम के उत्थान और प्रभाव के कारण छोडना पडा।[2]

बलन्द के पुत्र भट्टी (भाटी) की उपलब्धियो का वर्णन ख्यात मे विस्तार पूर्वक किया गया है।[3] भटनेर और भटिण्डा की स्थापना का भी विस्तृत विवरण है। ख्यात भाटी साम्राज्य के साम्राज्यवादी रचना और विस्तार को प्रभावित करने वाली भौगोलिक राजनीति के तथ्यो पर बल देती है। भाटियो की भी राजधानियां मथुरा काशी प्रयाग वड गजनी भट मटनेर दुगम देरावर लोद्रवा और जसलमेर का उल्लेख किया गया है जिसका सत्यापन दस्तावेजो से भी किया गया है। ये बाद की तनोट बीक्मकोट और मारोठ राजधानियां के अलावा हैं।

देवराज (वि स 800 850) का ख्यात मे अलग से उल्लेख किया है। भाटी साम्राज्य का विस्तार परमारो से छीनकर लोद्रवा का सयोजन तथा उसको राजधानी बनाना और रावल शाखा का प्रारम्भ देवराज की उपलब्धियां था।[4]

गजनवी के सुल्तान से भाटी राजाओ के सम्बन्धो के विषय म मतभेदो का शात करने के लिए हम ख्यात के लेखक के आभारी है। हिन्दू शाही के राजा जयपाल की पेशावर के निकट 27 नवम्बर सन् 1001 ई को एकाकीहार के बाद ही विजयी महमूद ने उत्तर पश्चिम के सर्वाधिक शक्तिशाली लोद्रवा और सिन्धु नदी के बीच का क्षेत्र जीत लिया। लोद्रवा के शासक के बारे म मतभेद है। बच्छराज बच्छ भज, विजिराज आदि कई नाम बताए जाते हैं पर सम्भवत राजा वत्सराज था। ख्यात हमे विश्वास दिलाती है कि भाटियो के अधीन अग्रिम चौकी भेरा गजनी के लिए गम्भीर भय था जो कभी मुसलमानो की अधीनता क पूर्व तक भाटी सत्ता का केन्द्र था। भेरा पश्चिम के व्यापारिक मार्गों पर शासन करता था और जयपाल के सत्ता स्थल वहीद के गिरने के बाद उत्तर भारत पर तुर्की हमला के विरुद्ध दुर्ग प्राचीर था। आश्चर्य की बात है कि सोमनाथ जाते समय सन् 1024 ई म सुल्तान महमूद द्वारा लोद्रवा पर आक्रमण के विषय मे ख्यात लेखक ने अपेक्षित ध्यान नही दिया है जबकि अन्य लेखको ने इसे उजागर किया है। महमूद द्वारा भाटियो पर किए गए बाद के हमलो की प्रत्यक्ष व्याख्या ख्यात म की गई है। मुहम्मद गोरी द्वारा

---

1 ख्यात पृ 20
2 ख्यात पृ 30-31
3 ख्यात पृ 31
4 ख्यात पृ 40

बारहवीं शताब्दी के तृतीय चरण में किए गए बाद के आक्रमणों तथा विजयराज और जसलदेव के बीच युद्ध तथा जसलमेर राजधानी की स्थापना के विषय में भी यही कहा जा सकता है।

ख्यात ने जसलमेर इतिहास के शेष मध्यकालीन युग तथा वर्तमान युग के साथ न्याय नहीं किया है। महारावल जतसिंह (क्रमशः सन् 1308 से 10 ई. तथा सन् 1314 से 15 ई.) के समय अल्लाउद्दीन खिलजी के आक्रमणों को भी अपेक्षित महत्व नहीं दिया है। फिरोज तुगलक जो जैसलमेर के साथ मित्र भाव की घोषणा करता था उसी के सेनानी बगाल के हाजी इलियास समशुद्दीन (सन् 1353 ई.) के विरुद्ध घड़सिंह के युद्धों के विषय में भी यही हुआ है। अकबर बादशाह राजपूतों के साथ अपनी नूतन शासन नीति पर चल रहा था, तब रावल हरराज के साथ समझौते का उपयुक्त उल्लेख नहीं है। जबकि अन्य ग्रंथों में जैसे—भाटी वंशप्रशस्ति भाटीनामा, तवारीख राज जैसलमेर तथा फारसी इतिहासकारों ने जैसलमेर के मैत्री सम्बन्धों के विषय में काफी लिखा है।

ख्यात विविध प्रकार की जानकारी के साधन के रूप में काफी उपयोगी है। ख्यात का अध्ययन न केवल तिथि क्रम निर्धारण में सहायता करता है बल्कि जैसलमेर राजाओं के अन्य राजपूत राजाओं के साथ वैवाहिक सम्बन्धों और उनके प्रभाव पर यथेष्ट प्रकाश डालता है। ये सम्बन्ध स्पष्टतः जसलमेर को राजनैतिक रूप से शक्तिशाली बनाने के लिए निर्मित किए गए। इस प्रकार रावल जतसिंह जो वि. स. 1332 के आस पास सिंहासनारूढ हुआ, उसने नौ विवाह किए। उसने राठौड़ा सोलंकियों चौहानों और यहाँ तक कि गुजरात के शासक परिवारों की पुत्रियों से विवाह किए।[1] राजनैतिक विवाह भौगोलिक राजनैतिक कारणों से प्रभावित जान पड़ते हैं।

उस समय जबकि अकबर राजपूत राज्यों के प्रति मित्रता की नीति अपना रहा था उसके समकालीनों में से जसलमेर का एक शासक था रावल हरराज जो सन् 1561 ई. में सिंहासनारूढ हुआ। वैवाहिक सम्बन्धों से वह राजपूताने के सभी प्रधान घरानों से जुड़ गया था जैसे—बीकानेर उदयपुर मेड़ता आदि।[2] इन सम्बन्धों से उसकी स्थिति इतनी सुरक्षित हो गई कि बादशाह अकबर ने नागौर के शाही दरबार में सम्मिलित होने के लिए उसके पास अपने व्यक्तिगत दूत को भेजा। इस प्रकार राजसी विवाहों का राजनैतिक अभिप्राय बहुत कुछ अंग्रेजों के आने तक उनका प्रभुत्व स्थापित होने के साथ ही कम हो गया।

1 ख्यात पृ 52
2 ख्यात पृ 72

राजघराना की स्त्रियो म सती होने का रिवाज प्रचलित होना भी विवाह की परम्परा से जुडा हुआ था। अभी हाल ही म 'चारण साहित्य सम्ब धी विचार गोष्ठी म डा० ्यास द्वारा पठित पत्र म जसलमेर म प्रचलित सती प्रथा के सम्ब ध म रोचक विचार प्रकट किए थे। यह देखा गया कि यह प्रथा जसलमेर म प्रारम्भिक काल से प्रचलित थी तथा इस्लाम के आगमन स भी अधिक प्रभावित नहीं हुइ। शताब्दियो से यह प्रथा प्रचलित थी। लेकिन तेरहवी ताब्दी मे सस्था के रूप मे बन गई।

इस प्रकार महारावल घडसिंह जो सन् 1362 ई मे दिवगत हुआ उसकी पाँच पत्नियाँ जाहियानी रतनादे देवादी सन्द्रादे और विमला देवी। उनमे से प्रथम चार घडसिंह की चिता म जलकर सती हो गइ तथा विमला देवी एक वष बाद उत्तराधिकारी कसरसिंह क जसलमर शासक बनन के पश्चात् सती हुई।[1]

रावल लक्ष्मण (सन् 1397 से 1429 ई) और उनके उत्तराधिकारी रावल बरीसिंह (सन् 1429 स 1449 ई) विवाह के जरिये घनिष्ठता से जुडे हुए थे। उनके देहावसान पर उनकी पत्निया (पहले की दो और दूसरे की चार) सती हुइ।[2]

यह प्रथा अन्य राजाओ, रावल चाचोजी रावल देवीदास रावल हरराज इत्यादि के साथ भी प्रचलित रही। राजा के देहावसान पर अ य स्त्रियो के सती होने के भी प्रमाण विद्यमान हैं। कौन सती हो इस सम्ब ध मे निणय किस आधार पर किया जाता था यह एक रोचक अध्ययन का विषय हो सकता है। यह प्रथा अग्रेजो के आने के बाद ब द हो गई जो स्वाभाविक रूप से ही नाराज होते थ।

ख्यात एक रोचक पठनीय कृति होने के साथ इतिहास लेखन म उपयोगी सिद्ध हो सकता है। लेखक ने जसलमेर के राजाओ का केन्द्रीय सत्ता स सम्बन्धो पर प्रकाश डाला है। ख्यात मे राज्यो के आपसी सम्ब धो तथा सामाजिक प्रथाओ पर काफी प्रकाश डाला गया है।

---

1 ख्यात प 58
2 ख्यात प 64

जोधपुर राज्य की दस्तूर बही एव दारोगा-दस्तरी बही

—भवरलाल सुथार, जोधपुर

इतिहास लेखन की परम्परा मे मद्यावधि कई बदलाव आय, हर पडाव पर एक नई अवधारणा अवतरित हुई। इन्ही अवधारणाओ के आधार पर इतिहास लेखन काय को गत्यात्मकता मिली और शोध काय अविराम चलता रहा। भारतीय इतिहास लेखन की बात करें तो हमारे सामन यह तथ्य उभर कर आता है कि प्राचीनकाल के इतिहास में जहाँ सास्कृतिक सामाजिक धार्मिक एव आर्थिक अध्ययन प्रस्तुत हुए वही हम मध्यकालोपरान इतिहास लेखन की धारा मे एक परिवतन देखते हैं। इतिहास लखन का मुख्य विषय शासक व उनकी उपलब्धियो पर आधारित रहा। शासक द्वारा लडे गय युद्धों और विजित प्रदेशों सूबा के वणन को प्रधानता मिली और इतिहासकारो की दृष्टि उन सूबा प्रदशा की सास्कृतिक विरासत पर बहुत कम पडी यही कारण रहा कि आज हम सास्कृतिक एव आर्थिक इतिहास का अभाव अनुभव हो रहा है। राजस्थान के इतिहास लेखन के साथ भी कमोवेश यही स्थिति उत्पन्न हुई और इतिहास लेखन के आधारभूत स्रोतो से हम राजनैतिक तथ्यों पर शोध अध्ययन अधिक करते रहे।

यहा के विभिन्न ग्रथागारो मे सरक्षित सुरक्षित पाण्डुलिपिया मे ख्यात बात पट्टा परवाना रुक्का आदि का राजनतिक दृष्टि से महत्व स्वीकारते हुए इनका अन्वेषण बहुलता से करने लगे। इन्ही सग्रहो का अभिन्न अग विविध विषयक बहिया का अध्ययन भी हुआ है परन्तु आशानुरूप नही। इन बहियो के अध्ययन से यह जानकारी मिलती है कि इनम इन्द्राज विवरण तथ्यात्मक एव प्रामाणिक माना जा सकता है। सास्कृतिक इतिहास लेखन म यह सामग्री बहुत उपयोगी सिद्ध होने के साथ ही आर्थिक एव सामाजिक इतिहास लखन मे भी सहायक सिद्ध हो सकती है। ये बहिया तत्कालीन व्यवस्था की प्रत्यक्षदर्शी होती हैं क्योकि बहुधा लखक उसका समकालीन होता है यानी कि उस समय का आँखों देखा हाल प्रस्तुत करने की क्षमता भी इन बहिया म है। मारवाड राज्य से सम्बन्धित दो बहियाँ सास्कृतिक, सामाजिक एव आर्थिक इतिहास लेखन मे उपयोगी हैं इनका अध्ययन प्रस्तुत कर इतिहास लेखन में इनकी उपयोगिता सिद्ध करने का प्रयास किया जा रहा है।

जोधपुर राज्य की दस्तूर बही[1]

जसा कि नाम स ही स्पष्ट है कि इस बही मे जोधपुर राज्य से सम्बन्धित दस्तूरा (रीति रिवाजा) का वणन है। इस बही की सामग्री देखन से ज्ञात होता है कि इसमे

1 सम्पादक-डा विक्रमसिंह राठौड प्रकाशक राजस्थानी शोध सस्थान चौपासनी जोधपुर 1994

मारवाड मे आयोजित होने वाले विभि न मेलो उत्सवो राजकीय समारोह एव यहाँ प्रचलित विविध रीति रिवाजो, परम्पराओं सस्कारो नेग आदि का विवरण तिथि सहित मिलता है। इस बही के अध्ययन से हम मारवाड के सास्कृतिक जीवन की झाकी मिलती है। यहाँ प्रचलित रीति रिवाज समूहगत आचार विचार और मान्यताओ को प्रकट करते हैं। इनका मूल्यांकन करके यदि कोई अध्येता अध्ययन करे तो उस समूह विशेष की सामाजिक आर्थिक धार्मिक ऐतिहासिक एव सास्कृतिक पक्ष की कई बातें नये सदर्भो के साथ सामने आयेंगी। इन्हीं रीति रिवाजो के अध्ययन मे जन साधारण की जीवन शैली खान पान रहन सहन पहनावा लेन देन आदि के बारे म जानकारी प्राप्त होती है।

सामाजिक आर्थिक व धार्मिक पक्षो से सम्बन्ध रखने वाले इन रीति रिवाजो के उद्देश्य शोधकर्ता अपने अपने ढग से खोज सकते हैं और उनको समूह व किसी पक्ष विशेष से भी अपने ढग से जोड सकते हैं परन्तु रीति रिवाजो का जो जुडाव मानव के व्यावहारिक जीवन से है उससे उनका महत्व स्वत उजागर हो जाता है। एक प्रकार स इनम समाज का समग्र सास्कृतिक जीवन झलकता है। इन्हीं बातो को आवेष्ठित किये जोधपुर राज्य की दस्तूर बही की उपयोगिता का आकलन किया जाय तो सास्कृतिक इतिहास लेखन के क्षेत्र मे विशेषत मारवाड से सम्बन्धित अध्ययन प्रस्तुत करने म काफी सुविधा होगी। बही का सम्पूर्ण विवरण जोधपुर राजघराने म प्रचलित नानाविध प्रथाओ एव मा यताओ का होने के कारण एक प्रकार से पश्चिमी राजस्थान की सस्कृति के अध्ययन म सहायक सिद्ध हो सकता है।

जोधपुर राजघराने मे मनाये जाने वाले पारिवारिक राजनीतिक उत्सव जिनकी यहाँ के समाज में स्पष्ट झलक दृष्टिगोचर होती है यथा भारतीय समाज म षोडश सस्कारो के बिना मनुष्य सुसस्कारित नहीं माना जाता और न मनुष्य जीवन को पूर्णता ही प्राप्त होती है। इन षोडश सस्कारो मे ज म पूव से लेकर उत्तरक्रियाओ के सस्कारो का बडा महत्व है और प्रस्तुत बही मे अधरणी अ नप्रासन, दसोटण *जातकम मासवा विवाह आदि प्रसगो का उल्लेख बहुतायत से हुआ है।* इनसे सम्बन्धित इतिहास लेखन के अध्येताओ और समाजशास्त्रियो के लिए समान रूप से यह उपयोगी सामग्री मूल साधन स्रोत के रूप मे काम मे ली जा सकती है। बही म विवाह विवरणो म विवाह विधि सहित इसमे हुए खच एव नेग व लाग का उल्लेख *भी यथास्थान हुआ है। विवाह के प्रकारो म एक ऐसे विवाह का वणन भी हमे* मिलता है जिसम किसी व्यक्ति विशेष का देश हित या समाज हित म व्यस्तता के कारण स्वय वर के रूप मे विवाहोत्सव म उपस्थित नहीं हो पाने की स्थिति मे उसका प्रतीक स्वरूप खाडा (तलवार) भेजकर उसके साथ फेरे हुए और तत्कालीन समाज ने भी ऐसे विवाह को मा यता प्रदान की। महाराजा गजसिंह प्रथम का

1　जोधपुर राज्य की दस्तूर बही पृष्ठ 82

खोडा विवाह वि स 1679 मार्गशीर्ष बद 2 को कछवाहा जगरूप की पुत्री कल्याणदे से हुआ, उस समय महाराजा स्वय अकबराबाद आगरा मे थे।[1] इस विवाह से सम्बंधित समस्त रीति रिवाजो का वर्णन भी हुआ है और उस अवसर पर हुए नेगादि के लेन देन का उल्लेख भी है।[2]

विवाहोत्सव म पूर्व आयोजित रीतियों म यहाँ प्रचलित उकरडी पूजन' भी एक है, जिसकी जानकारी आज के समाज म नगण्य सी हो गई है। बही मे वर्णित है कि इस प्रक्रिया म कौन सम्मिलित हुए और किस प्रकार इसकी पूर्णता हुई। किस व्यक्ति विशेष न क्या भूमिका निभाई यह भी उल्लेखित है।[3]

तत्कालीन बहुविवाह प्रथा की भी हमे जानकारी प्राप्त होती है और साथ ही यह भी ज्ञात होता है कि किस रानी को रानीपद प्रदान किया जाता था। महाराजा जसवतसिंह की हाडी रानी का जब रानीपद ईनायत किया गया, तब कैसा आयोजन हुआ। हाडी रानी के नाम स प्रसिद्ध रही यह रानी बूँदी के हाडा छत्रुशाल की पुत्री जसवत देवी और इनका विवाह वि स 1674 द्वितीय सावन सुदि 8 को हुआ।[4] इस प्रकार के आयोजना मे उस समय की सामाजिक व्यवस्था पर प्रकाश पडता है जो सामाजिक इतिहास लेखन म काम लिया जा सकता है।

धर्म प्रधान व्यवस्था का पक्षधर समाज विविध धार्मिक अनुष्ठानों का आयोजक रहा है और इन आयोजनो के मूल मे किसी देवी देवता की आराधना स्तुति एव उन्हें प्रसन्न करने की भावना समाहित होती है। ये आयोजन समाज मे समादृत हैं। इन आयोजनो का वर्णन तो बही म यत्र तत्र हुआ ही है साथ ही उन धर्म स्थानो की उत्पत्ति आदि का उल्लेख भी हुआ है। मण्डोर का आदि तीर्थ के रूप मे स्थापित करने का विवरण बही म दर्ज है।[5]

इसके अतिरिक्त जोधपुर के आसपास अवस्थित विभिन्न धर्म स्थानो एव तीर्थ स्थलो का उल्लेख बही में हुआ है।

जोधपुर दुर्ग स्थित विभिन्न देवालयो,[6] शहर के प्राचीन व तत्कालीन निर्मित मंदिरों[7] एव आसपास के दर्शनीय स्थलों का उल्लेख भी बही में कई स्थानो पर हुआ है। इस प्रकार के विवरण का कला एव सस्कृति की दृष्टि से भी काफी

---

1 जोधपुर राज्य की दस्तूर बही पृ 82
2 वही पृ 83
3 वही पृ 63
4 वही पृ 102
5 वही पृ 109
6 वही पृ 111
7 वही पृ 112

महत्व है और ऐसे इतिहास लेखन मे यह सामग्री उपयोग मे लाई जा सकती है। इसके अलावा जोधपुर शहर एव राज्य मे अवस्थित जन मन्दिरो[1] का उल्लेख भी इस बही की विशेषता कहा जा सकता है। इन मन्दिरो के निर्माता एव निर्माण तिथियो का हवाला भी दर्ज हुआ है जो निश्चित रूप मे अध्येताओ के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध होगा। भीनमाल का नामकरण आबू पवत स्थित विविध देवालयो तथा राज्य के हर गाव म स्थित प्रसिद्ध स्थानो का वणन हुआ है। दुग स्थित मन्दिरो मे पूजनीय देवी देवताओ की मूर्तियो का वणन उनकी प्रतिष्ठा करवाने वाले सहित हुआ है।[2]

राजपरिवार द्वारा निभाई जाने वाली औपचारिकताओ के सम्बध म भी महत्वपूण जानकारी इस बही से प्राप्त होती है। सरदार मुत्सद्दी उमराव वगरा दुग मे आते थे तब उन्हें किन औपचारिकताओ का निर्वाह करना पडता था। अन्य राज्यो के शासक आदि यहाँ आते थे उनके पद प्रतिष्ठा एव स्तर के अनुसार मान सम्मान दिया जाता था, यहाँ का शासक उनकी अगवानी करने एक निश्चित सीमा तक जाता था।[3] इन बातो के उल्लेख से हमे दरबारी औपचारिकताओं का जहाँ दिग्दशन होता है वहीं अन्य प्रा तो से आमे लोगो के स्तर की जानकारी भी मिलती है।

बही मे दज नेगचार की निश्चित रकम का उल्लेख आर्थिक इतिहास लेखन को उपयोगी सामग्री कहा जा सकता है। सक्षेप मे जोधपुर राज्य की दस्तूर बही का सम्पादन जहाँ इस प्रदेश की सास्कृतिक छवि को हमारे सम्मुख करने म सहायक होगा वहीं बदलते हुए सास्कृतिक मूल्यो एव समय समय पर पडने वाले प्रभावो को समझने के लिए इतिहासवेत्ताओ के साथ समाजशास्त्रियो के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

दारोगा दस्तरी बही[4]

महाराजा उम्मेदसिंह के शासनकाल के अंतिम वर्षों मे लिखी गई इस दस्तरी बही म 12 अप्रेल 1946 स 3 जुलाई 1947 तक राज परिवार से जुडी घटनाओ का दनदिन विवरण है। बही मे इन्द्राज यह विवरण कई दृष्टियो से महत्वपूर्ण और उपयोगी माना जा सकता है और इतिहास लेखन व अध्ययन म भी काम आ सकता है। इस बही में इन्द्राज विवरण तिथिक्रम से होने से इसकी प्रामाणिकता सिद्ध है। इसके अतिरिक्त इस प्रकार दस्तरी बही लिखने के निश्चित नियम होते थे उन्हीं की अनुपालना करत हुए यह विवरण दज हुआ है। वास्तव मे यह एक 'दस्तरी बही है,

---

1 जोधपुर राज्य की दस्तूर बही पृ 113–114
2 वही पृ 115
3 वही पृ 129
4 सम्पादक—कु महेन्द्रसिंह नगर महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश जोधपुर 1996

इसके साथ जुडा 'दारोगा' श-द तत्कालीन दस्तरी महकमे के प्रधान अधिकारी का परिचायक है। ऐसी वहियो म विवरण महकमे का क्लक दज करता था, परन्तु उसे पहले सचिव स्तर का अधिकारी प्रमाणित करता और उसके बाद प्रधान अधिकारी भी उसकी तस्दीक करता फिर कहीं जाकर वह घटना वही म लिपिबद्ध होती। चू कि तत्कालीन सक्षम अधिकारी यहाँ प्रचलित विविध दस्तूरा के बारे म जानकारी एकत्र करता और राजपरिवार को जब कभी इस प्रकार की जानकारी प्राप्त करनी होती तो वह उस अधिकारी से हासिल करता। कहने का तात्पय यह है कि वही म वर्णित घटनाक्रम प्रामाणिक माने जाते हैं और उन पर अकित तिथियाँ भी सदेह की सीमा म नहीं आतीं। इसलिए इस सामग्री का इतिहास लेखन मे उपयोग करें तो काफी महत्वपूण सिद्ध हो सकती है।

आलोच्य वही मे राजपरिवार की प्रत्येक घटना का विवरण तो है ही साथ ही साथ विभिन्न आयोजनो का भी वणन महुतायत से हुआ है। पव त्योहार, मेले उत्सव रीति रिवाज कुरब कायदे नजर निछरावल के वणन द्वारा हमें तत्कालीन रीति नीति की जानकारी प्राप्त होती है। महाराजा द्वारा समय समय पर ईनायत की गई जागीरें ओहदे व ताजीमो का वणन भी यथास्थान हुआ है। यह सारा वृत्तात तिथिवार दज होने से इतिहास अनुसधानकर्त्ताओ के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है। यहाँ महत्त्वपूण तथ्य यह भी है कि मारवाड राज्य द्वारा प्रदत्त ये जागीरें अतिम मानी जाती हैं, इसके तुर त बाद देश स्वतत्र हो गया और इन जागीरो को यथावत् रखा गया हाँ कुछेक ओहदो आदि मे परिवतन जरूर हुआ।

राजस्थानी सस्कृति के अभिन्न अग उत्सवो पर भाति भाति के आयोजन होते रहे हैं इन आयोजनो मे दशहरे के अवसर पर रावण दहन के लिए जाते महाराजा के लवाजमे का वणन इस वही म विस्तार से हुआ है।[1] इस प्रकार के वणन से हम ज्ञात होता है कि यह आयोजन किस स्तर का होता और जनसामा य की इसमें क्या भूमिका होती तथा इन अवसरा पर किन प्रक्रियाओ एव विधियो को अपनाया जाता। ऐसे आयोजनो मे राजस्थानी सस्कृति की झलक स्पष्ट दिखती है।

राजस्थान का होली पव अपने आप मे कई विशिष्टताओ को समाहित किये हुए है। होली के अवसर पर इस होली से पूव ज मे बालक का ढू ढ सस्कार होता है यह परम्परा सिफ यहीं प्रचलित है। आज इस सस्कार ने सस्कारो की श्रेणी म मा यता प्राप्त कर ली है। महाराजा की क या भवर बाई की ढूढ का वणन दस्तरी वही मे हुआ है।[2] इसके अतिरिक्त कई ऐसे राजस्थानी सास्कृतिक विशिष्टताओ से ओतप्रोत आयोजनो का इस दस्तरी बही में विवरण दज है।

---

1 दारोगा दस्तरी बही पृष्ठ 50
2 वही पृ 1

यह काल अग्रेज साम्राज्य के सूय के अस्ताचल का था अंग्रेज प्रभावित सस्कृति का यहाँ प्रचलन कहाँ तक हुआ इसकी स्पष्ट जानकारी इस काल म आयोजित समारोहो से मिलती है। एटहोम और काक्टेल' पार्टियो के आयोजन तो बही म कई जगह हुए हैं। इस प्रकार के आयोजनो के पीछे किसी प्रकार का राजनीतिक उद्देश्य निहित होता है तो इसकी तरफ भी बही म दज विवरण इशारा करता है। इसलिए ऐसे आयोजनो क विवरण के अध्ययन से ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होना सम्भव है।

जनकल्याणकारी और शिक्षोपयोगी समारोहो का आयोजन भी इस काल मे हुआ, इसका विवरण बही म दज है। जोधपुर मे शिक्षा के क्षेत्र मे अग्रणी सस्था सरदार स्कूल के गोल्डन जुबली समारोह का वणन बही मे विस्तार से हुआ है। इस आयोजन मे क्या कायक्रम हुए और कौन कौन विशिष्ट जन इस समारोह म उपस्थित थे, का वणन भी हमे प्राप्त होना है।[1] स्वय शासक का इसमें उपस्थित होना तत्कालीन व्यवस्था को एक नई दिशा प्रदान करता है। इससे पूव ऐसे आयोजनो मे शासक की साक्षात् उपस्थिति नगण्य रही है।

इस काल म परम्परा से हटकर कुछ नये समाराहो के आयोजन का श्रीगणश हुआ। ऐसे आयोजनो म जनता की सहभागिता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। उद्घाटन विमोचन समारोहो मे महाराजा स्वय ने उपस्थित होकर उन्हें प्रोत्साहित किया। प्रजातान्त्रिक व्यवस्था की ओर बढते राष्ट्र का इससे सम्बल मिला। जोधपुर में राजस्थान स्टाक एसोसिएशन की स्थापना कुचामण की हवेली म हुई जिसका ताळो खोलण रौ दस्तूर (उद्घाटन) पर स्वय महाराजा उम्मेदसिंह महाराजकुमार के साथ उपस्थित हुए और मच पर खडे होकर उद्बोधन दिया।[2] इस प्रसग से नया तथ्य उभर कर आता है कि अब तक महाराजा जनता के सम्मुख खड होकर भाषण नही देते थे परन्तु स्वतत्रता प्राप्ति की ओर अग्रसर राष्ट्र का दशन इस घटना से होता है। वतमान मे सिनेमा मनोरजन का सुलभ साधन माना जाता है। महाराज प्रेमसिंह ने अपने बगले पर सिनेमा हाल का निर्माण प्रारम्भ करवाया था जिसका नीव का दस्तूर महाराजकुमार हनुवतसिंह ने 23 अप्रेल 1947 को किया।[3] बाद म यह सिनेमा नही बना। अथ व्यवस्था का प्रमुख आधार बक की एक नई शाखा का श्रीगणेश हुआ जिसका उद्घाटन 30 सितम्बर 1946 को महाराजकुमार हिम्मतसिंह ने किया।[4] मरुधरा की मन्दाकिनी व सत शिरोमणि मीरा बाई के जन्म के 400 वष पूरे होने पर स्टेडियम में एक प्रदशनी का आयोजन किया गया। इस प्रदशनी का

1 दारोगा दफ्तरी बही पृ 54
2 वही पृ 22
3 वही पृ 238
4 वही पृ 143

उद्घाटन महाराज हरिसिंह ने किया एवं राज परिवार ने इसका अवलोकन भी किया।[1]

इस प्रकार के आयोजनों के अध्ययन से इतिहास लेखन में महत्वपूर्ण योगदान मिल सकता है। आर्थिक एवं सांस्कृतिक इतिहास के ये महत्वपूर्ण अंग हैं और साथ ही इन आयोजनों से हमें इस बात की जानकारी भी प्राप्त होती है कि राजतंत्रीय व्यवस्था में परिवर्तन की शुरूआत हो गयी थी। स्वतंत्र भारत में प्रजातांत्रिक व्यवस्था का पूर्वाभ्यास कहें तो अनुचित नहीं होगा।

इस बही की एक विशेषता यह है कि इसमें महाराजा उम्मेदसिंह के देहावसान पर अंतिम-संस्कार प्रक्रिया का आँखों देखा हाल वर्णित है।[2] इसके अध्ययन से जो नवीन तथ्य उजागर होता है वह यह कि किसी शासक की मृत्यु पर जहाँ उसका उत्तराधिकारी पुत्र शवयात्रा में सम्मिलित नहीं होता था, वहीं महाराजा उम्मेदसिंह की मृत्योपरांत इन सारी मर्यादाओं का उल्लंघन कर महाराजा हनुवतसिंह ने एक पुत्र के दायित्व का निर्वाह किया। षोडश-संस्कारों की पूर्ति करते इस संस्कार का बही में अच्छा वर्णन है और इसमें किस प्रकार के रीति रिवाजों तथा मान्यताओं की अनुपालना हुई, का वर्णन भी पठनीय है। संस्कारजन्य मान्यताओं से आबद्ध सामाजिक व्यवस्था का दिग्दर्शन कराने वाला यह वर्णन सांस्कृतिक सामाजिक इतिहास लेखन में काफी सहायता प्रदान करने वाला है।

प्रस्तुत बही में दर्ज विवरण के अध्ययन से कई ऐसी घटनाओं की जानकारी होती है जो यहाँ के बदलते राजनैतिक परिवेश को उजागर करती हैं। राजशाही व्यवस्था के अंतिम दस्तावेज के रूप में इस बही की सामग्री को प्रामाणिक माना जा सकता है। विभिन्न अवसरों पर निभाई जाने वाली रीतियां नजर निछरावल लाग बाग व नेगादि दस्तूर मारवाड़ की तत्कालीन आर्थिक स्थिति का दर्शाते हैं। परिशिष्ट में बही में उल्लिखित नामों का संक्षिप्त परिचय देकर सम्पादक ने ग्रंथ की उपादेयता को बढ़ाया है। महाराजा उम्मेदसिंह के जीवन की कुछेक प्रमुख घटनाओं का विवरण भी बही में प्रस्तुत हुआ है। राज परिवार के सदस्यों की गरिमा एवं सामान्य जनता की हैसियत का विवरण जन साधारण की भागीदारी को समझने में सहायक है।

सारांशतः आज जबकि इतिहास लेखन की धारा में परिवर्तन आया है और इतिहासकारों के अभिमत के अनुसार सामाजिक सांस्कृतिक एवं आर्थिक इतिहास-लेखन पर अधिक बल दिया जाना चाहिए। इस कार्य की क्रियान्विति में इस प्रकार की बहियों की सामग्री का समग्र अध्ययन किया जाना समीचीन होगा और इन्हें इतिहास लेखन के साधन स्रोत के रूप में देखा जाना आवश्यक है।

---

1 दारोगा दफ्तरी बही पृ 239
2 वही पृ 239

मेवाड-मारवाड इतिहास लेखन में 'गोगूदा री ख्यात'* की उपयोगिता

—विक्रमसिंह भाटी, जोधपुर

इतिहास जानने के साधनों में ख्यात ग्रंथों का विशेष महत्व रहा है क्योंकि ख्यात में जीवन-घटनाओं व युद्ध अभियानों का ही नहीं सामाजिक व सांस्कृतिक पहलुओं का विस्तार से विवरण मिलता है। इसलिए इतिहास लेखन में श्यामलदास, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा आदि इतिहासकारों ने ख्यातों का उपयोग एक आधार भूत स्रोत के रूप में किया है।

17 वीं शताब्दी से ख्यात लेखन परम्परा का प्रादुर्भाव हुआ और यहां मारवाड़ में अनेक ख्यातें लिखी गई जैसे—मुहणोत नणसी री ख्यात, जोधपुर राज्य री ख्यात, महाराजा मानसिंह री ख्यात, मूंदीयाड़ री ख्यात। परन्तु मेवाड़ में ख्यात लेखन की परम्परा 19 वीं शताब्दी के अंत में प्रारंभ हुई।

19 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जब मेवाड़ व मारवाड़ आदि राज्यों के इतिहास लेखन का कार्य प्रारंभ किया गया उस समय राज्य के निर्देशानुसार ठिकानेदारों ने अपने अपने ठिकाने का इतिहास प्रेषित किया जो कि ख्यात व 'तवारीख' के नाम से जाना गया। इनमें गोगूदा की ख्यात महत्वपूर्ण है।

प्रस्तुत ख्यात में न केवल गोगूदा के झाला राज राणाओं की मुख्य उपलब्धियों, राजनीतिक गतिविधियों और उनकी संतति का वर्णन दिया है बल्कि भौगोलिक स्थिति, भवन निर्माण कार्य, सामाजिक मान्यताएं और जन कल्याण सम्बन्धी कार्यों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। अनेक घटनाओं की पुष्टि हेतु पट्टे-परवानों की प्रतिलिपियाँ दर्ज की हैं। मेवाड़ में झालों का प्रवेश 16 वीं शताब्दी के प्रथम दशक में हुआ। हलवद के राजा राजसिंह के दो पुत्र अज्जा व सज्जा मेवाड़ के महाराणा रायमल के पास आकर रहे। इनको क्रमश: बड़ी सादड़ी व देलवाड़ा के उमराव होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। देलवाड़ा के राजराणा मानसिंह के पौत्र कान्हसिंह को गोगूदा की जागीर मिली। इस प्रकार झालों के ये तीन ठिकाने प्रथम श्रेणी के रहे।

ख्यात के अनुसार महाराणा कर्णसिंह की ओर से संवत् 1676 में सायरा, रोहड़ो आदि 24 गाँव कान्हसिंह को मिले। उसकी पट्टे की प्रतिलिपि ख्यात में दी है। गोगूंदा पर ईडरिया राठौड़ों का अधिकार था। कान्हसिंह ने संवत 1685 में राठौड़ों

---

* सम्पादक डॉ हुकमसिंह भाटी, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर

पर आक्रमण कर गोगू दा हस्तगत किया। इस पर महाराणा जगतसिंह ने गोगू दा का पट्टा का हसिंह के नाम कर दिया। इस पट्टे की नकल ख्यात मे दी है।

का हसिंह की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र जसवन्तसिंह सवत् 1725 मे गद्दी पर बठा। महाराणा राजसिंह व जयसिंह की ओर से जसवन्तसिंह के नाम लिखे गये परवानो से औरगजेब की सेना की हलचलो व उसकी प्रतिक्रिया के बारे मे ख्यात मे प्रामाणिक जानकारी मिलती है। मुगलो से हुई मुठभेड मे जसवन्तसिंह ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

जसवन्तसिंह के उत्तराधिकारी रामसिंह को जयसमन्द की सुरक्षा का दायित्व सौंपा गया। उसने वहाँ पर अपनी चोकी स्थापित की और वहाँ के उपद्रवी मीणो का दमन करने मे अपना योगदान दिया। उसका अनुज प्रतापसिंह इस लडाई मे मारा गया।

रामसिंह के उत्तराधिकारी अजयसिंह ने महाराणा सग्रामसिंह (द्वि) की सेवा मे रहकर विभिन्न लडाइयो मे अच्छा पराक्रम दिखाया फलस्वरूप 65 गाँव वृद्धि के रूप मे दिये और गाढोटा के घाटे में गढी बनाने का निर्देश दिया। इसके बाद का्हसिंह (द्वि) ने गोगू दा की बागडोर सम्भाली। उसने उपद्रवी मीणो का दमन कर अपनी योग्यता का परिचय दिया। तत्पश्चात् जसवन्तसिंह (द्वि) गोगू दा की गद्दी पर बठा। उसके समय म महाराणा राजसिंह के बाद अरिसिंह उदयपुर का महाराणा बना तब राजसिंह की झाली राणी (गोगू दा) से पैदा हुए रतनसिंह का पक्ष जसवन्तसिंह झाला ने लिया और उक्त महाराणा के विरुद्ध लडाइया लडी। जिससे गोगू दा ठिकाने और महाराणा के सम्बन्ध बिगड गये और जसवन्तसिंह को गोगू दा छोडकर चुली के थाने में जाना पडा लेकिन झाला शत्रुशाल (द्वि) के समय इस कटुता का अन्त हो गया तथा वृद्धि में अनेक गाँव इसे प्राप्त हुए। महाराणा भीमसिंह के समय मराठा के आक्रमण की गतिविधियाँ जब बढ गई तब मेवाड की सेना ने थन हस्तगत करने के लिए सवत् 1869 म आक्रमण किया लेकिन गोगू दा के राजराणा द्वारा मोर्चा बन्दी किये जाने पर उनकी योजना फलीभूत नही हुई। इस प्रकार राजराणा लालसिंह, मानसिंह की राजनीतिक घटनाओ और सामरिक उपलब्धियो का वर्णन ख्यात मे लिपिबद्ध है।

कुरब कायदे—ख्यात म गोगू दा के राजराणा, कुँवर, भवर व छोटे कुँवर के कुरब-कायदा अर्थात् मर्यादा सम्बन्धी एक लम्बी सूची दी है। इससे शिष्टाचार सम्बन्धी नियमो का पता चलता है वहाँ ठिकाने के वैभव और उसके स्तर का भी बोध होता है। इसकी तुलना हम प्रथम श्रेणी के अन्य ठिकानेदारो से कर सकते हैं।

आतिथ्य सत्कार व समारोह—गोगू दा म महाराणा के अतिरिक्त दूसरे जागीरदार और उनके रिश्तेदार आते रहे तब उनका आतिथ्य सत्कार बड़े भव्य समारोह के साथ किया जाता था। सवत् 1895 में महाराणा जवानसिंह गोगू दा आए तब राजराणा शत्रुशाल ने अम्बामाता की घाटी तक जाकर उनका स्वागत किया और

गोगू दा म प्रवेश करते समय नजर नछरावल की। साथ म प्राए 2500 प्रादमी 3 हाथी 700 घोडे, 200 ऊंट व बलों के लिए खाद्य सामग्री व चारे पानी की व्यवस्था की गई। महाराणा की ओर से शिकार करने का विशद् वर्णन ख्यात मे हुआ है। महाराणा के सम्मान म दिये गये भोज सम्बन्धी विवरण से ठाट बाट और रीति रिवाजों का बोध होता है।

संवत् 1942 म महाराणा फतेसिंह शिकार करने के लिए गोगू दा गये उस समय महाराणा को नजराना किया गया और बडे भोज की व्यवस्था की गई। महाराणा के साथ आये मेवाड के सरदार और छडीदार हलकारा आदि की सूची दी है। भोज इत्यादि की सारी व्यवस्था किस प्रकार की गई इसका विस्तृत वर्णन ख्यात म मिलता है। इसी प्रकार सरवा (मारवाड) ठाकुर गोगू दा आए तब उनका नजर नछरावल कर आतिथ्य सत्कार किया गया और उनके सम्मान म भोज रखा गया। ख्यात मे इसका सटीक वर्णन हुआ है।

आद्याजून राजा संग्रामसिंह द्वारा महाराजा जसवन्तसिंह II की मृत्यु होने पर शोक व्यक्त करने और अन्य गतिविधियों का जहाँ विस्तार से वर्णन हुआ है वहीं महाराजा सरदारसिंह के राज्याभिषेक के विवरण म कुछ ऐसी विशिष्ट बातें इस ख्यात म लिखी मिलती हैं जो अन्यत्र दुर्लभ है।

तीर्थ यात्रा—गोगू दा के राज राणाओं का तीर्थ यात्रा करने म बड़ा विश्वास था। झाला अजयसिंह व मानसिंह ने मथुरा गया बनारस काशी अयोध्या हरिद्वार वृन्दावन और पुष्कर की यात्रा की उस समय उनके साथ चले सरदारों और कर्मचारियों के नाम दिए हैं। मानसिंह द्वारा तीर्थ स्थलों के पण्डों को भूमि देने व पुण्य करने का उल्लेख हुआ है।

मन्दिरों का निर्माण व जीर्णोद्धार—गोगू दा व उसके आस पास के गांवों में स्थित सूरज नारायण शीतला माता, चतुर्भुज लक्ष्मीनारायण आवमाता मुरलीधर जोतश्याम महादेव पार्श्वनाथ ऋषभदेव व ठाकुरजी आदि मन्दिरों का उल्लेख करते हुए बतलाया गया है कि ये मन्दिर कब किसने बनवाये और इनका जीर्णोद्धार किसने करवाया।

इमारतें व घाटियों का वर्णन—ख्यात कार ने गोगू दा म भवन निर्माण कार्यों की जानकारी कराते हुए यहाँ की घाटियों व पहाड़ों का वर्णन किया है। गोगू दा के पश्चिम म स्थित जसवन्तगढ का निर्माण संवत् 1833 म जसवन्तसिंह ने कराया। इतना ही नहीं घाटियों म पनपने वाले पेड पौधे और प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थलों के बारे म जानकारी भी दी है। इससे यहाँ की भौगोलिक स्थिति और स्थापत्य कला के प्रति झालाओं के अनुराग का पता चलता है।

ठिकाने म राज राणाओं व उनकी ठकुरानियों की स्मृति म छतरियों का निर्माण कराया गया। छतरियों का निर्माण कब किसने करवाया इसका उल्लेख हुआ है।

जलपूर्ति के लिए गोगू दा व उसके आस पास कुए, बावडियो का निर्माण करवाने और अनेक बगीचे लगाने का भी उल्लेख हुआ है ।

हासल व बराड—साधारणत कृषको से उपज का चौथा हिस्सा लिया जाता था । बराड कर वर्षा, सर्दी, गर्मी के मौसम के अनुसार लिया जाता था । और जहाँ बराड नही लिया जाता वहाँ उपज का आधा हिस्सा लिये जाने का प्रावधान था तथा युद्ध के समय तीसरा हिस्सा लिया जाता था । महाजन लोगो से तीनो मौसम (वर्षा, सर्दी गर्मी) में रुपी बराड वसूल की जाती थी । चवरी (विवाह कर) पाच रुपए लगता था । तेलियो से एक घाणी पर पाव तेल लिया जाता था । इसके अतिरिक्त नाई, खाती, लोहार, धोबी और भील इत्यादि जातियो से ली जाने वाली नि शुल्क सेवाओ का उल्लेख हुआ है ।

ख्यात म विविध प्रकार की सामग्री का वर्णन मिलता है । जसे, भारत की प्रमुख रियासतो को कितनी तोपो की सलामी दी जाती थी । इसकी एक लम्बी सूची अकित है । मेवाड के प्रथम, द्वितीय व तृतीय श्रेणी के ठिकानेदारो की सूची में उनकी बैठक, छटु द व चाकरी का वर्णन है । जयसमद की बनावट और इसके ऊपर निर्मित भवनो का विवरण दिया है । एक जगह राजपूतो की शाखाओ का नामोल्लेख है जो नैणसी की ख्यात से मिलता-जुलता है ।

सीमा विवादो को लेकर झगडे होते थे । इनका निपटारा किस प्रकार किया जाता था, इसके कई उदाहरण ख्यात मे मिलते हैं । सीमा निर्धारित करने के लिए मीनारें गाडी जाती थी और उनका खर्चा स्थानीय जागीरदारो से वसूल किया जाता था । अपराधी भौमियो को दण्ड दिये जाने का उल्लेख भी ख्यात में है । अत उस समय की न्याय व्यवस्था को समझने में यह ख्यात महत्वपूर्ण है ।

इस प्रकार ख्यातकार का दृष्टिकोण काफी व्यापक रहा है । वह केवल गोगू दा के झालाओ का राजनीतिक इतिहास ही नहीं बल्कि उनकी मुख्य उपलब्धियो, भवन निर्माण काय तीर्थ यात्राओ व आतिथ्य सत्कार, मारवाड के साथ सम्बन्ध तथा मेवाड के दूसरे उमरावो के बारे में भी समुचित जानकारी कराता है जो उस समय के राजनीतिक सामाजिक, सास्कृतिक व आर्थिक इतिहास जानने म सहायक है ।

कान्हडदे प्रबन्ध* और उसकी ऐतिहासिकता

—मथुराप्रसाद अग्रवाल, उदयपुर

प्राचीन राजस्थानी साहित्य में ऐसे कई ऐतिहासिक ग्रंथ उपलब्ध होते हैं जिनका सम्यक अध्ययन भारतीय इतिहास के कई अन्धकारमय पक्षों पर पर्याप्त प्रकाश डाल सकता है। मुस्लिम इतिहासकार राजस्थान के इतिहास के ख्याति प्राप्त वीरों के बारे में सर्वथा मौन रहे हो ऐसा नहीं है। सत्य आंशिक सत्य या असत्य जो भी राजस्थान सम्बन्धी सामग्री उनकी रचनाओं में उपलब्ध है, पर राजस्थान का वास्तविक इतिहास तो राजस्थानी ग्रंथों में ही प्राप्त हो सकता है। निश्चय ही इनमें यत्र तत्र अतिशयोक्तियां हैं कतिपय कवि-कल्पनाओं से अनिरंजना है कुछ अशुद्धियां त्रुटियाँ भी रह गई हैं पर मुख्यतः इनमें वर्णित घटनाक्रम ठीक उतरते हैं। ऐतिहासिक कसौटी पर कसने पर राजस्थानी ग्रंथ मुस्लिम तवारिखों से कम खरे नहीं उतर पाते। एतदर्थ हमारा परम कर्त्तव्य होना चाहिये कि समीक्षाग्नि द्वारा निस्सार बातों को अलग करते हुए शुद्ध तथ्यों का ग्रहण करने का सतत् प्रयत्न करते रहें।

कान्हडदे प्रबन्ध ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसमें अल्लाउद्दीन खिलजी की चढ़ाई और कान्हडदे आदि सोनगरा व सांचोरा चौहानों की भूमिका का सजीव वर्णन हुआ है।

कान्हडदे प्रबन्ध' के रचयिता पद्मनाभ के अनुसार गुजरात के शासक सारंग द्वारा अपने प्रधान माधव का तिरस्कार किये जाने पर वह अल्लाउद्दीन की सेवा में उपस्थित हुआ और उसे सारंग पर चढ़ा लाया। यद्यपि अल्लाउद्दीन ने जालोर के रास्ते से जाने की इच्छा प्रकट की परन्तु कान्हडदे द्वारा इन्कार किये जाने पर वह चित्तौड़ के रास्ते से गुजरात पहुंचा। उसने गुजरात सौराष्ट्र आदि पर अधिकार कर लिया। साथ ही सोमनाथ के मन्दिर को भी लूटा। मुस्लिम सेना ने दिल्ली लौटते समय कान्हडदे को दण्डित करने की इच्छा से मारवाड़ का रास्ता पकड़ा और कान्हडदे को युद्ध के लिए ललकारा। कान्हडदे ने जयत देवड़ा की अध्यक्षता में एक सेना विधर्मियों को खदेड़ने के लिए भेजी।[2] दोनों पक्षों में घमासान युद्ध हुआ। इस युद्ध में खिलजी की सेना तितर बितर हो गई और कान्हडदे की विजय हुई। आलोच्य

---

* सम्पादक श्री के.बी. व्यास राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर 1953

1 कान्हडदे प्रबन्ध पृ 28 38

2 वही पृ 50 54

ग्रंथ मे वर्णित इस घटना से कान्हडदे की सगठन शक्ति का पता चलता है। अल्लाउद्दीन खिलजी द्वारा सोमनाथ के मंदिर को लूटने का वर्णन भी इस ग्रंथ मे है। इससे पहले भी महमूद गजनवी द्वारा सोमनाथ के मंदिर का लूटा जा चुका था। सोमनाथ मंदिर को दोनो मुस्लिम शासको द्वारा लूटने के तुलनात्मक अध्ययन के लिए यह सामग्री विशेष उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

शाही सेना की पराजय से सुलतान बहुत दुःखी हुआ। उसने मलिक के नेतृत्व मे सेना भेजा। सिवाने के पास सातलदे एव कान्हडदे की सेना ने शाही सेना से मुकाबला किया। इस युद्ध म शाही सेना पराजित हुई। सुलतान को निराशा हुइ। वह पुनः तैयार होकर सिवाना दुर्ग पर चढ आया।

सिवाना लेने म अल्लाउद्दीन को कई वर्ष लगे। कान्हडदे प्रबधकार का यह कथन ठीक है कि अपने अनेक सेनापतियो के असफल होने पर स्वय अल्लाउद्दीन को सिवाना आना पडा था। उसने वहाँ के मुख्य तालाब को गौरक्त से दूषित किया। सातल के एक नमकहरामी भायलू ने बादशाह से मिलकर दुर्ग म प्रवेश का रास्ता बतलाया। रानी ने मलेच्छो से बचने के लिये जौहर किया। (1301 ई) सातल को गुजरात का इलाका देने का प्रलोभन दिया गया पर उपस्थित होने तक से इन्कारी की गई। घमासान युद्ध हुआ। सातल के साथ ही दुर्ग के रक्षक मलेच्छो से लडते हुए वीरगति को प्राप्त हुए।[1] फारसी ग्रथो मे शाही सेना के एक बार चढाई कर थोडे समय मे ही सिवाना दुर्ग पर विजय का विवरण दिया गया है जबकि सिवाना पर कई बार चढाइयां हुइ।

जब सुलतान अल्लाउद्दीन ने अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए कान्हडदे को कहला भेजा। कान्हडदे ने आधीनता स्वीकार नही की और बादशाह को आक्रमण करने की चुनौती दी। मुसलमानो का मुकाबला करते हुए उसने मुस्लिम शिविर को लूट लिया। आलोच्य ग्रंथ में इस घटना का भी विस्तार से वर्णन आया है। इससे जहाँ एक ओर सोनगरा चौहानो में आत्म गौरव की भावना का परिचय मिलता है वहीं उनका एक रणनीति के तहत शाही सेना से बराबर मुकाबला करते रहने का तथ्य भी उजागर हुआ है। शाही सेना द्वारा बार बार जालोर पर आक्रमण करने से यह तथ्य भी उद्घाटित होता है कि तत्कालीन समय मे सोनगरा चौहानों की शक्ति सुदृढ थी जो मुस्लिम शासको के लिए एक चुनौती थी। नव इतिहास लेखन में इन तथ्यों का बखूबी उपयोग किया जा सकता है।

सिवाना पर विजय प्राप्त कर खिलजी की सेना ने बाडमेर की ओर अग्रसर होकर वहाँ लूटमार की। फिर भीनमाल के ब्राह्मणों को लूटकर वहाँ आग लगा दी गई। कान्हडदे की सेना ने आक्रमण कर शत्रु सेना से लोहा लिया। जयत देवडा और

1 कान्हडदे प्रबन्ध पृ 95

महीप विजय की सूचना देने जालौर गये। उनकी अनुपस्थिति म सुलतान के सेनानायक ने स्नान करते राजपूत वीरो पर हमला कर दिया। राजपूत वीर धराशायी हो गये। सूचना पाकर महीप आ धमका और पचास योद्धाओ के साथ वीरगति को प्राप्त हुआ।[1] स्वय सुलतान अल्लाउद्दीन ने जालौर दुग पर चढाई की। उसने अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव वीरमदे के पास भेजा लेकिन उसने प्रस्ताव ठुकरा दिया। सुलतान ने जालौर दुग का घेर लिया पर मालदे व वीरमदे की रणनीति के कारण उसे सफलता नही मिली। निराश होकर सुलतान दिल्ली की ओर चल पडा। पीछे मे मालदे ने ससैन्य शाही सेना पर मेडता के पास हमला कर सुलतान के बहनोई ■ उसकी बेगम को बन्दी बना दिया।

आलोच्य ग्रथ म इस घटना का विस्तार से वणन है। इससे जहा एक ओर सोनगरा चौहानो के सघषमय जीवन का पता चलता है वही उनके सैन्य प्रब ध एव रणनीति पर भी अच्छा प्रकाश पडा है जो नव राजनीतिक इतिहास लेखन के लिए अत्य त उपयोगी है।

सुलतान की बेटी सिताई बहनोई को मुक्त कराने जालौर आई और जालौर गढ का अवलोकन कर यहाँ की अपार सपदा के बारे मे अपने पिता को बताया। इस पर अल्लाउद्दीन की जालौर पर विजय करन की इच्छा प्रबल हो उठी। शाही सेना फिर जालौर पर चढ आयी। इधर कान्हडदे के भाई मालदे व पुत्र वीरमदे ने सादडी के पास शाही सेना से लोहा लिया पर उन्हें पीछे हटना पडा। शाही सेना जालौर दुग तक आ पहुँची। लम्बे समय तक घेरा रहा। गढ को विजय करना असम्भव जान बीका नामक एक राजपूत को लालच देकर सारा भेद जान लिया। शाही सेना दुग म घुस आयी और दोनो पक्षो म घमासान युद्ध हुआ। कान्हडदे व वीरमदे लडते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। राजपूत स्त्रियो ने जौहर किया। आलोच्य ग्रथ मे इस घटना का विस्तार से वणन है। सोनगरा चौहानो का मुसलमानो के साथ सघष के अध्ययन के लिए उक्त सामग्री विशेष उपयोगी है। अल्लाउद्दीन खिलजी का बार-बार आक्रमण करने का उद्देश्य जालौर पर अधिकार करना था। क्योंकि जालौर होकर गुजरात जाने का मुस्लिम सेना का सीधा रास्ता था। मुस्लिम सेना के युद्ध प्रयाण के मार्गों के अध्ययन के लिए यह सामग्री बहुत उपयोगी है। सामाजिक सांस्कृतिक इतिहास लेखन के लिए जौहर की घटना महत्त्वपूण है।

यद्यपि कतिपय इतिहासकारो न राजपूतो के शौय को छिपाने का प्रयास किया है। परन्तु 'कान्हडदे प्रबध' और नणसी की ख्यात[2] मे अनेक ऐसे सूत्र भरे पडे हैं

---

1 कान्हडदे प्रबन्ध पृ 106 108 116 120
डॉ हुकमसिंह भाटी सोनगरा चौहानों का इतिहास पृ 60 62

2 नैणसी की ख्यात भाग 1 पृ 224 25

जिनमें क्षत्रियों की वीरता उनका त्यागमय जीवन और कई आदर्श मूल्यों की जानकारी होती है जो हमारी संस्कृति के मूल भूत तत्वों को समझने में सहायक है।[1]

चौहान कुल शिरोमणि वीरवर का हडदे के स्वधर्म व स्वदेश की रक्षार्थ अलबेल प्राणोत्सर्ग की कीर्तिगाथा का थोड़ा बहुत परिचय भारत के इतिहास की विशिष्ट पुस्तकों में मिलता है। मुस्लिम तवारिखों में कुछ जगह इस वीर पुंगव के साथ घटित युद्धात्मक घटनाक्रमों के उल्लेख मिलते हैं पर हिन्दुओं के साहित्य में मात्र 'का हडदे प्रबंध' ही एक ऐसा ग्रंथ रत्न उपलब्ध है जिसे विशुद्ध स्वधर्म प्रेम उन्नत राष्ट्र प्रेम उत्तम सदाचार प्रेम और सात्विक सत्य प्रेम का एक प्रशस्त पुण्य स्रोत ही कहना होगा।

निष्कपट यही कहा जा सकता है कि 'का हडदे प्रबंध' एक शुद्ध ऐतिहासिक काव्य है। जालौर, गुजरात, काठियावाड़ और सोमनाथ मंदिर पर हुए आक्रमण के अध्ययन के लिए आलोच्य ग्रंथ की सामग्री सहायक सिद्ध हो सकती है। ग्रंथ में वर्णित घटनाओं के आधार पर सोनगरा चौहानों की सगठित शक्ति का बखूबी अध्ययन किया जा सकता है। अल्लाउद्दीन खिलजी का जालौर जीतने का क्या उद्देश्य था? इन तथ्यों के अध्ययन के लिए भी ग्रंथ की सामग्री उपयोगी है। इसके अलावा घटनाओं के प्रभावपूर्ण चित्रण के साथ साथ इतिहास संस्कृति तथा तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों की दृष्टि से सशक्त अभिव्यक्ति की बहुचर्चित रचना है। समाजशास्त्र के अध्येताओं के लिए इसमें तत्कालीन रीति रिवाजों तौर तरीकों, मान्यताओं एवं परम्पराओं के रूप में पर्याप्त सामग्री है। इस ग्रंथ के विभिन्न पहलुओं का बारीकी से अध्ययन करने की आवश्यकता है।

---

1 द्रष्टव्य—का हडदे प्रबन्ध प्रो बी एस मजमूदार भारतीय प्रकाशन दिल्ली 1991

अचलदास खीची री वचनिका*—इतिहास-लेखन में इसकी उपयोगिता

—डॉ जगमोहनसिंह परिहार, जोधपुर

राजस्थानी के प्राचीन साहित्य ने साहित्यिक मानदण्डो का निर्वाह करने के साथ साथ सास्कृतिक एव ऐतिहासिक मूल्यो के सरक्षण का भी स्तुत्य प्रयास किया है। साहित्यिक सास्कृतिक तथा ऐतिहासिक मूल्यो को कालजयी बनाने वाली रचनाओ मे गाडण शिवदास रचित अचलदास खीची री वचनिका का विशेष स्थान है। यह एक ऐतिहासिक प्रबन्ध काव्य है जिसमे माडू के सुलतान होशगशाह और गागरोन के शासक अचलदास खीची के बीच वि स 1480 मे हुए ऐतिहासिक युद्ध का ओजपूर्ण शैली मे चित्राकन किया गया है। यह युद्ध गागरोन मे हुआ था इसीलिए इसे गागरोन युद्ध कहा जाता है। खीची शासको का इतिहास प्रसिद्ध गागरोन दुर्ग कोटा से लगभग 45 मील दक्षिण पूर्व मे झालावाड के पास अरावली पर्वतमाला की एक सुदृढ चट्टान पर आहू तथा काली सिंध नदी के सगम पर स्थित है। विवेच्य वचनिका इस प्रलयकारी युद्ध की साक्षी है जिसमें गागरोन युद्ध का विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। इसके विपरीत तबकाते अकबरी और तबकाते फरिश्ता जैसे तत्कालीन फारसी तवारीख ग्रथो मे एक पक्षीय और पूर्वाग्रह पूर्ण विवरण उपलब्ध होते हैं। आश्चर्य तो इस बात का है कि इन इतिहास ग्रथों में गागरोन युद्ध का वर्णन अथवा युद्ध के नायक अचलदास का नामोल्लेख तक नहीं है। ऐसी स्थिति में इतिहास-लेखन में यह वचनिका अपना विशिष्ट योगदान करने मे सक्षम है।

वचनिका में उल्लिखित विवरणों से पता चलता है कि यह युद्ध महाष्टमी से *दूसरी अष्टमी तक अर्थात् 13 सितम्बर 1423 से 27 सितम्बर 1423 तक चला।* एक पखवाडे तक हुए इस युद्ध के सम्बन्ध मे चौहान-कुल कल्पद्रुम ग्रथ में लिखा है—अचलदास वीर पुरुष था। उसने बारह दिन तक दुश्मनों के साथ बडी वीरता से युद्ध किया और तेरहवें दिन उसका सिर कटकर अमर पोल के पास और धड सरवर तलाव पर जाकर गिरा जहाँ उसका स्मारक बना हुआ है।[1] वश भास्कर मे इस युद्ध के अनेक वर्षों तक चलते रहने की बात लिखी गई है जो असगत और अनैतिहासिक है।[2] वश भास्कर में वर्णित गागरोन-युद्ध का एक अश द्रष्टव्य है—

---

* सम्पादक श्री शम्भूसिंह मनोहर राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर
चौहान-कुल-कल्पद्रुम पृ 105
वंश भास्कर पृ 1191

गागरोणि अचलेस सजे गढ, रण बहु बरस किये रावण रढ ।[1]

तबकाते अकबरी मे इस युद्ध को अल्प समय मे जीता गया युद्ध कहा गया है कि तु यह कथन भी भ्रामक है ।[2]

वश भास्करकार ने इस युद्ध मे अचलदास के विरोधी के लिए दिल्लीस का प्रयोग किया है जो तर्क की कसौटी पर खरा नही उतरता । होशगशाह माडू (मालवा) का सुल्तान था, दिल्ली का अधिपति नही ।

जहाँ तक वचनिका के कथासार का प्रश्न है वचनिकाकार ने युद्ध से पूर्व की परिस्थितिया, होशगशाह के आक्रमण के कारण उत्पन्न आतकपूर्ण वातावरण अचलदास के अंतिम युद्ध तथा दुर्ग पतन की घटनाओ का तारतम्यता तथा ऐतिहासिकता के साथ विवेचन किया है । सक्षिप्त होने के बावजूद इन विवरणो म क्रमबद्धता एव तथ्यात्मकता विद्यमान है । होशगशाह के बल वैभव के समक्ष समस्त प्रान्तपतियो का नतमस्तक होना, होशगशाह की सेना मे खेरला के शासक नरसिंह तथा अन्य अनेक हिन्दू सेना नायकों का सम्मिलित होना होशगशाह द्वारा अचलदास के पास गागरोन गढ छोडकर ग्वालियर मे राजा मोकल अथवा आबेर के तवरा के पास चले जाने का सन्देश भेजना अचलदास और उसके स्वामीभक्त साम तो द्वारा जाते जी दुर्ग पर होशगशाह का अधिकार नहीं होने देने का प्रण करना रानियो द्वारा स्वामी अचलदास को वीर वचनो द्वारा जोश दिलाना मेवाड के महाराणा मोकल के पास सन्य सहायता के लिए अचलदास द्वारा अपने पुत्र का भेजना वश नाश की आशका से अचलदास का चिन्तित होना, पाल्हणसी का दुर्ग निष्क्रमण के लिए प्रेरित करना रानियो का जौहर तथा अचलदास का गढ की तलहटी मे उतरकर रक्तरजित होकर मर मिटने तक युद्ध करने की घटनाएँ पूर्णत ऐतिहासिक हैं । अचलदास खीची के अनूठे एव स्वाभिमानी "क्षत्रित्व के सन्दर्भ म वचनिका' म कहा गया है—

मम न खीची नीम, गढपति गढ मेल्हो करो ।
उयह हुव उपराथिठउ, सीध जाइ तजि सोम ।।[3]

अचलदास खीची ने गागरोन युद्ध में अनुपम शौर्य का परिचय प्रस्तुत करते हुए होशग की सेना के दाँत खट्टे किए । अप्रत्याशित पराजय की वेदना में होशगशाह के सपने चूर-चूर हो गए । तभी समय अचलदास के कतिपय विश्वस्तो को अपने पक्ष मे करके होशगशाह ने, अचलदास की विजय को पराजय म बदल दिया । वश भास्कर' के विवरण से विदित होता है कि गागरोन दुर्ग को हस्तगत करने की सभी योजनाओ के विफल हो जाने पर सुलतान होशग ने जलाशय मे गो मास डलवाकर

1 वश भास्कर पृ 1191
2 तबकाते-अकबरी उ से भारत भाग 2 सं अतहर अ रिजवी पृ 57
3 अचलदास खीची री वचनिका 14 (2)

जल को दूषित करवा दिया। हिन्दू धर्म मे दृढ आस्थावान अचलदास और उसके सैनिकों के लिए ऐसे दूषित जल का पान करना असम्भव था। जीवित रहने का अन्य विकल्प शेष न रहने पर उसने केसरिया करने का निश्चय किया। दुर्ग के कपाट खुलवाकर शत्रु सेना का मान मर्दन करता तिल तिल तलवार के धारो से रक्तरंजित होकर अन्तत वीर वर अचलदास ने मृत्यु का आलिंगन किया।[1] अचलदास खीची री वचनिका मे भी रुधिर का वाहला जल मे मिल्या। पाणी विटलिया।[2] कथन द्वारा कवि ने इसी तथ्य की ओर संकेत किया है। खिल्चीपुर की ख्यात मे भी गौ मास द्वारा जल को अपेय बनाए जाने की घटना का उल्लेख है।[3] इस ख्यात मे दिए गए वर्णनानुसार गागरोन का किला हाथ नही आने से सुलतान ने धोबी से मिलकर अपने विरोधियो का धर्म बिगाडने का यत्न किया जिससे अचलदास ने किले से बाहर आकर युद्ध किया जिसमे इसके दस बडे पुत्र एक पासवान का पुत्र गोपालदास भी साथ थे और दो छोटे पुत्रो को वश रखने के लिए दूर भिजवा दिया। युद्ध मे इसके पुत्र काम आए पर तु अन्त मे राव अचलदास की जीत हुई। फतह पाकर राव अचलदास वापस लौटे तब मोतीदास और महेश्री (महेश्वरी) सुन्दरदास नाम के शख्स से जो शत्रु से मिले हुए थे उन्होने जीत का निशान पीछे कर लिया जिससे राणिया बारूद से जल गई। इस कारण अचलदास ने किले मे न जाकर पुन युद्ध किया और बहुत से शत्रुओ को मारकर खुद भी काम आया।[4]

हमारे देश का यह दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि यहाँ के कतिपय स्वार्थी अवसरवादियो ने तुच्छ स्वार्थों की पूर्ति के लिए राष्ट्रीय सम्प्रभुता को दाव पर लगा दिया। गागरोन का अप्रत्याशित पतन भी ऐसी ही कुत्सित मनोवृत्ति का परिणाम था यह कहना असगत नही है। राजस्थान के स्वर्णिम इतिहास को कलकित करने वाले ऐसे विश्वासघाती षड यत्रो की मध्ययुगीन इतिहास को भारी कीमत चुकानी पडी है। रणथम्भौर और सिवाना के पतन के मूल मे भी ऐसी ही दुर्भावनाओ की प्रतिध्वनियाँ सुनाई देती हैं।

चौहानो की चौबीस शाखाओ मे खीची प्रमुख शाखा है जिसका अपना विशेष ऐतिहासिक महत्व है। गागरोन के खीची राव लाखणसी के नेतृत्व मे अजमेर से नाडोल गई चौहानो की एक शाखा से खीची शाखा का उद्भव हुआ है। राव लाखणसी की आठवी पीढी म माणकराव हुआ जिसके वशज खीचपुर पाटन (सिंध सागर) के शासक होने के कारण खीची कहलाए। खीची शाखा सम्बन्धी एक अन्य मत के अनुसार अपने पिता आसराम द्वारा दी गई उपाधि के कारण माणकराव

---

1 वश भास्कर प 1191
2 वचनिका 22 (2)
3 चौहान कुल द्रुम प 104
4 वही प 104

खीची कहलाया तथा मदारण एवं जायल खीचियों के नये राज्य बने।[1] माणकराव का वंशज गुंदलराव हुआ जिसके पौत्र धारू (देवसिंह) ने अपने मामा डोडा से ढोलणगढ़ का साम्राज्य लेकर उसे गागरोनगढ नाम दिया। यही धारू, गागरोन के खीची राजवंश का संस्थापक था तथा इसी की वंश परम्परा में वचनिका के चरित्र नायक अचलदास का जन्म हुआ। 'वचनिका' में अचलदास के पिता का नाम भोजराव (भोजराज) तथा माता का नाम सफनादे (सुफरा देवी) बतलाया गया है।[2] 'बाँकीदास री ख्यात' आदि ऐतिहासिक ग्रन्थों से भी इस कथन की पुष्टि होती है। इस ख्यात में यद्यपि अचलदास की माता का नाम 'सकलादे' और 'सलहदे' लिख दिया गया है किन्तु इस विषय पर 'वचनिका' को ही प्रामाणिक माना जाना चाहिए। अपने पिता भोजराव के निधन के बाद वि. सं. 1466 अर्थात् ईस्वी सन् 1409 में अचलदास ने गागरोनगढ के साम्राज्य की बागडोर सम्भाली।[3] वचनिका में अचलदास के अद्वितीय बहुआयामी व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है—

> पिण धन धन हो राजा अचलेस्वर। थारउ जियउ जिण पातिसाहा सूं खाडउ लियउ। जिण पातसाहि आमां सांतरि सत छाडउ नहीं, सत्र छाडइ नहीं दीन न मारयइ, पगार लखित न होइइ। ते राजा अचलेसर सारिखा अचल नइ अचलेस ही होयइ।'[4]

विद्वान सम्पादक डा० शम्भुसिंह मनोहर के मतानुसार 'वचनिका' के माध्यम से जीवन के उच्चतम आदर्शों और शाश्वत मूल्यों की प्रतिष्ठा की गई है। शौर्य स्वाभिमान, स्वातन्त्र्य प्रेम स्वधर्म रक्षा, स्वामीभक्ति वचन पालन, निस्वार्थ त्याग आदि इस धरती की महत्त्वपूर्ण विशेषताएं हैं जिनका निर्वाह यहाँ के निवासियों ने कठिन से कठिन परिस्थिति में भी किया है। अचलदास खीची का व्यक्तित्व इन आदर्शों तथा मानवीय मूल्यों की असाधारणताओं से परिपूर्ण था इसीलिए शताब्दियों बाद भी उस महान् सेनानायक का यश सुवास लोक जीवन को सुवासित कर रहा है।

खिल्चीपुर रियासत की हस्तलिखित ख्यात के अनुसार अचलदास के सात रानियाँ तथा चार पासवानें (उप पत्नियाँ) थी।[5] 'चौहान कुल कल्पद्रुम' में फुटनोट में भटियाणी उमादेवी राणावतजी लालादेवी राठौडजी महेची झाड़ी सेखावतजी कछवाही और यादव—इन सात रानियों का उल्लेख है। फुटनोट के इस विवरण में कतिपय भ्रांतियाँ हैं। उदाहरण के रूप में लाला मेवाडी री बात' के आधार पर उमा भटियाणी के स्थान पर उमा सांखली नाम होना चाहिए किन्तु उमा सांखली,

---

1 नैणसी री ख्यात भाग 1 पृ 250 251
2 अचलदास खीची री वचनिका पृ 21 (8)
3 चौहान कुल कल्पद्रुम पृ 104
4 अचलदास खीची री वचनिका पृ 9 वात
5 खिल्चीपुर रियासत की ख्यात की हस्तलिखित प्रति से।

वचनिका के नायक अचलदास की रानी थी यह अप्रामाणिक है। इसी प्रकार कछवाह वंश की एक शाखा शेखावत के संस्थापक मोकल के पुत्र शेखा के जन्म के समय वि स 1480 में गागरोन के युद्ध में अचलदास का वीरोचित उत्सर्ग हो चुका था। अतः शेखावत शाखा के जन्म से पूर्व ही उस शाख की राजकुमारी के साथ अचलदास के परिणय की बात असंगत है। फतहपुर मौक्री से शेखावतों के आगमन की बात भी इतिहास की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण है। अचलदास के समय तक फतहपुर तथा सीकर का अस्तित्व ही नहीं था।[1] इसी प्रकार इस ख्यात में कछवाही रानी का पीहर आमेर न लिखकर जयपुर लिखा गया है जिससे यह अनुमान पुष्ट होता है कि इस ख्यात की रचना जयपुर नामकरण के बाद की होनी चाहिए। ऐसे अनैतिहासिक तथा भ्रामक विवरणों की सत्यनिष्ठा की परख का एक मात्र आधार अचलदास खीची री वचनिका ही है क्योंकि इसमें इन समस्त संशयात्मक भ्रांतियों का ऐतिहासिक निराकरण खोजा जा सकता है।

मेवाड़ के महाराणा मोकल को वचनिका में अचलदास का श्वसुर बतलाया गया है। इस कथन की पुष्टि ऐतिहासिक स्रोतों से भी होती है।* लालादे मेवाड़ी के नाम से प्रसिद्ध अचलदास की रानी पुष्पावती मेवाड़ के महाराणा मोकल की राजकुमारी थी इस मत के सम्बन्ध में डा दशरथ शर्मा और डा मोतीलाल मेनारिया ने असहमति प्रकट की है। डॉ मेनारिया के मतानुसार गागरोन युद्ध के समय अर्थात् सन् 1480 में मेवाड़ के महाराणा मोकल की आयु सात से चौदह वर्ष के बीच थी।[2] डा दशरथ शर्मा ने पुष्पावती के मोकल नाम के किसी मेवाड़ी सामन्त की पुत्री होने के मत का समर्थन किया है।[3] डा मेनारिया और डा दशरथ शर्मा द्वारा मेवाड़ाधीश मोकल के सम्बन्ध में प्रस्तुत मन्तव्य विवादास्पद एवं असंगत है। मेवाड़ की ख्यातों तथा अन्य समसामयिक ऐतिहासिक दस्तावेजों के परिप्रेक्ष्य में मोकल का जन्म समय वि स 1452 निर्धारित होता है।[4] इस रचना के साक्ष्य में राजस्थानी के एक प्राचीन गीत की पंक्तियाँ प्रस्तुत है—

> रघु कुल राठौड़ बरस बावना बचास।
> मोकल लियो जनम, कसन वसुदेवक दास॥
> प्रथम साल चोपने राणा सुरलोक सिधायो।
> पाछ लाखा पाट, वडम मोकल बठायो॥[5]

---

1 ठाकुर सुरजनसिंहजी शेखावत से प्राप्त विवरणानुसार।
2 शोध-पत्रिका विशेषांक वर्ष 17 अंक 1 2 डॉ मोतीलाल मेनारिया।
3 विश्वम्भरा वर्ष [illegible] अंक 3-4 डॉ दशरथ शर्मा का लेख।
4 वीर विनोद भाग 1 पृ 270 टॉड का राजस्थान भाग 1 पृ 228
5 प्राचीन राजस्थानी गीत भाग 2 पृ 79 स कविराव मोहनसिंह
* बेटी लालबाई राव अचलजी खीची गढ गागरूणा रा धणी ने परणाई रावल राणाजी री बात पृ 21 स हुकमसिंह भाटी

इस उद्धरण के आधार पर मेवाड़ के महाराणा मोकल का गागरोन युद्ध के समय अर्थात् संवत् 1480 में 28 वर्ष का होना प्रमाणित होता है। इतनी आयु में महाराणा मोकल के यहां राजकुमारी का जन्म विस्मय की बात नहीं है। अतः रानी पुष्पावती के मेवाड़ के महाराणा मोकल की पुत्री होने तथा अचलदास के साथ विवाह की घटनाओं में किसी प्रकार की कोई ऐतिहासिक विसंगति नहीं है।

अपने गौरवशाली इतिहास की घटनाएँ हमें तत्कालीन साहित्य रचनाओं में बहुतायत किन्तु बिखरी अवस्था में उपलब्ध होती है। ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहर की प्रतीक इन मणि मुक्ताओं को सहेज कर एकत्र किए बिना उपलब्धियों के हार का निर्माण नहीं किया जा सकता। इसे विडम्बना ही कहा जाएगा कि हमने इतिहास को सहेजने का प्रयास ही नहीं किया। अपने गौरवशाली अतीत के प्रति इसी नकारात्मक मनोवृत्ति के कारण विदेशी इतिहासकारों को पूर्वाग्रहपूर्ण तथा एक पक्षीय दृष्टिकोण के आधार पर यहाँ की ऐतिहासिक घटनाओं को तोड़ने मरोड़ने की प्रेरणा मिली। इसी अभाव के कारण आज भी इतिहास की घटनाओं के परीक्षण पुनर्परीक्षण के लिए हमें विदेशी इतिहासकारों के असंगत विवरणों को सही मानने के लिए बाध्य होना पड़ता है। फारसी और मुगल तवारीख लेखकों की लेखनी में तटस्थता निष्पक्षता तथा सत्यान्वेषणीयता का अभाव था इसीलिए उन्होंने भारतीय इतिहास को विकृत रूप में प्रस्तुत किया। अपने पक्ष के योद्धाओं द्वारा सम्पादित शुभ अशुभ कार्यों को तो उन्होंने शुभत्व का जामा पहना दिया जबकि हिन्दू शासकों सामन्तों और योद्धाओं के वीरोचित कार्यों को उन्होंने उल्लेख तक के योग्य नहीं समझा। उदाहरण के लिए निजामुद्दीन तथा फरिश्ता ने गागरोन युद्ध प्रसंग के विवरण में होशंगशाह के प्रतिपक्षी शासक अचलदास खीची के अविस्मरणीय बलिदान की घटना का कहीं पर उल्लेख नहीं किया है। अतः ऐसे एक पक्षीय विवरणों को इतिहास नहीं कहा जा सकता। यदि इस घटना के साक्ष्य रूप में हमारे पास 'अचलदास खीची री वचनिका' नहीं होती तो तत्कालीन अन्य कालकवलित घटना प्रसंगों के समान अप्रतिम त्याग का यह प्रसंग भी पानी पर खींची गई लकीर बनकर रह जाता। कवि शिवदास गाडण ने 'वचनिका' के माध्यम से यहाँ के इतिहास साहित्य और संस्कृति की जो अनिर्वचनीय सेवा की है ऐसे महान् एवं समाजोपयोगी सद्प्रयास के लिए वे साधुवाद के पात्र हैं। वचनिका की ऐतिहासिकता का यह भी एक महत्त्वपूर्ण प्रमाण है कि सुप्रसिद्ध इतिहासविद् यू एन डे ने मध्यकालीन मालवा ग्रंथ का लेखन करते समय गागरोन युद्ध प्रसंग में 'अचलदास खीची री वचनिका' को ही आधार बनाया है। शिवदास गाडण को तत्कालीन इतिहास का कितना विस्तृत ज्ञान था इसका अनुमान इसी सत्य से लगाया जा सकता है कि अपने चरित नायक के पक्ष के सैन्य-संगठन तथा युद्ध कौशल के साथ शत्रु सेना के शूरवीरों के शौर्य का भी यथास्थान वर्णन किया है। उदाहरण—

हइवर गइवर पाइदळ, पुहवि न पारावार ।
गोरी राउ गिरि प्रासनउ, गउ गढ गजणहार ।।[1]

बारह लक्ख त छह यड पइदळ ।
मदिमत्ता चवरासो भड्गळ ।।
साहण सहस तीस भर तेरह ।
प्रालमसाह प्रडो चउ फरह ।।[2]

'वचनिका' म व्यक्ति तथा नामावली के सम्ब ध मे कतिपय भ्रांतियो का कारण कवि शिवदास गाडण की ऐतिहासिक प्रल्पज्ञता नही बल्कि पाठ निणय की समस्या है। डिंगल की प्राचीन श ावली तथा उसके कुछ रूढ प्रयोगो का प्रथ सही रूप म न समझ पाने के कारण भी नाम की पहचान मे विसगतियो का उत्पन्न होना स्वाभाविक है।

डा टेस्सीटोरी ने वचनिका के कतिपय वणनो के प्राधार पर इस पर प्रतिरजना तथा प्रनतिहासिकता का प्राक्षेप लगाया है कि तु विद्वान प्रालोचक का यह प्रारोप सही नहीं है प्रपितु वस्तुस्थिति से प्रनभिज्ञता का परिचायक है। एक बात का स्मरण रखना चाहिए कि वचनिका विशुद्ध इतिहास ग्र थ नही बल्कि का य सृजना है। इसीलिए प्रपने चरित्र नायक के जीवन के विविध घटना प्रसगो का तिथिक्रमानुसार वणन करना यहाँ के का य रचयिताभ्रो को प्रभिप्रेत नही था उ होने तो का य को प्राधार बनाकर वणित तथ्यो को का य प्रौर इतिहास के सम्मिश्रण के साथ पाठको के समक्ष प्रस्तुत किया है। प्रत प्र य साहित्येतिहासिक ग्र थो के समान वचनिका का भी प्रध्ययन प्रनुशीलन होना चाहिए। वचनिका एक प्रब ध का य है प्रौर प्रब ध का यो की ऐतिहासिकता की भी एक सीमा होती है। प्रत इस सत्य का विस्मरण कर ऐसी रचनाप्रो को प्रत्येक दृष्टि से इतिहास की कसौटी पर कस-कस कर खरी उतारने की मानसिकता समीचीन नही है। कतिपय का य सुलभ प्रतिरजना के बावजूद वचनिका मे मध्ययुगीन राजस्थान के इतिहास का एक प्रविस्मरणीय प्रसग सुरक्षित है। तत्कालीन फारसी तवारिखो को चुनौती देने वाले तथा का य प्रौर इतिहास की दृष्टि से उपादेय इस दस्तावेज का सूक्ष्म एव प्रालोचना परक तथ्या वेषण किया जाना चाहिए ताकि यहाँ के इतिहास को नई दिशा दृष्टि प्राप्त हो सके।

---

1 प्रचलदास खीची री वचनिका 10 दूहो

2 वही 16 गाथा

'वीरवाण'* ग्रंथ की इतिहास लेखन में उपयोगिता

—डॉ सद्दीक मोहम्मद, जोधपुर

डिंगल ग्रंथो मे बहुमूल्य ऐतिहासिक सामग्री निहित है। बीठू सूजाकृत छंद राव जतसी रो, दुरसा आढा रचित 'विरुद छिहत्तरी', जग्गा खिड़िया की 'वचनिका राठौड़ रतनसिंह महेसदासोत री' कुंभकरण कृत रतन रासो, केशवदास गाडण विरचित गजगुणरूपक', वीरभाण रतनू कृत 'राजरूपक' सूर्यमल्ल मिसण का वंशभास्कर, कविया करणीदान कृत 'सूरज प्रकास', बादर ढाढी रचित वीरवाण' आदि काव्य ग्रंथ अनेकानेक ऐतिहासिक घटनाओं का प्रामाणिक वर्णन प्रस्तुत करते हैं। ऐसे ग्रंथो की सामग्री से राजस्थान के इतिहास के अनेक अज्ञात एवं अल्पज्ञात तथ्यो का उद्घाटन हुआ है।

वीरवाण'[1] बादर (बहादुर) ढाढी रचित डिंगल का प्राचीन ऐतिहासिक प्रबन्ध काव्य माना जाता है। इस ग्रंथ की रचना विक्रम की 15 वी शताब्दी मे हुई। वैसे इस ग्रंथ के प्राप्त रूप मे भी प्रक्षिप्त अंश विद्यमान हैं परन्तु मोटे तौर पर इसका मूल रूप 15 वी शताब्दी के मध्य का ही है। डा० हीरालाल माहेश्वरी ने भी इसका रचनाकाल संवत् 1500 के लगभग माना है।[2] इसकी प्राचीनता के सम्बन्ध मे एक बात और उल्लेखनीय है कि मध्ययुग मे लिखी गई राठौड़ो की ख्यातो मे वीरवाण के अनेक दोहो तथा उक्तियो का प्रयोग हुआ है इससे इस ग्रंथ की प्राचीनता की पुष्टि होती है।

यद्यपि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि यह कृति विक्रम की 15 वी शताब्दी की है। अत ऐतिहासिक दृष्टि से इसका महत्व और भी बढ जाता है क्योंकि मुहता नणसी री ख्यात', 'मारवाड़ रा परगना री विगत', जोधपुर राज्य की ख्यात दयालदास की ख्यात आदि ग्रंथ इसके बाद मे लिखे गये हैं। राठौड़ो के प्रारम्भिक इतिहास एवं उनके संघर्षमय जीवन को जानने तथा खेड़ मालानी, महेवा जोहियावाटी आदि क्षेत्रो व उनके अधिपतियो के बारे मे जानकारी प्राप्त करने की दृष्टि से इस ग्रंथ का विशिष्ट महत्त्व है। मैं आलोच्य ग्रंथ को ही आधार मानकर इसकी ऐतिहासिक दृष्टि से विवेचना प्रस्तुत कर रहा हूँ।

वीरवाण मे ऐतिहासिक घटनाओ का यथातथ्य वर्णन हुआ है। इसमें वर्णित घटनाएं राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखती हैं।

---

1 * सम्पादक–रानी लक्ष्मी कुमारी चूण्डावत प्रकाशक–राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर

2 राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ 76

राव मलखा के मल्लीनाथ जतमाल वीरम और शोभत नामक चार पुत्र हुए। इनमे से जतमाल ने गुजरात के परमारो पर आक्रमण कर रायधरा पर अधिकार कर लिया था।[1] स य सचालन की दृष्टि से इस घटना के सूत्र महत्वपूर्ण हैं जिनका नव इतिहास लेखन मे उपयोग किया जा सकता है।

ग्रथ म मल्लिनाथ के पुत्र जगमाल का गुजरात के शासक मुहम्मद बेगडा के साथ हुए युद्ध का वर्णन आया है। मुहम्मद बेगडा के आदमियो द्वारा किये गये सावण म झूला झूलती हुई महेवे की तीजणिया के हरण के बदले म जगमाल द्वारा व्यापारी के वेश मे चढाई कर ईद के अवसर पर बादशाह की पुत्री गीन्दोली को लाने व अपनी तीजणियो का मुक्ति दिलाने का प्रसग है।[2] जहाँ इस घटना से तत्कालीन समय मे स्त्रियो की दशा और उनकी रक्षा क लिए क्षत्रियों के सघषमय जीवन का परिचय मिलता है वही इसम लडाई के विविध सोपानो का अच्छा दिग्दर्शन हुआ है जो सम्प्र प्रबन्ध की जानकारी के लिए सहायक है।

वीरमदेव और जोहिया के सम्बन्ध का वर्णन ग्रथ की छन्द सख्या 63 से प्रारभ होता है। वीरमदेव ने जोहियो को शरण दे दी जिसमे मल्लिनाथ और उसके पुत्र उससे नाराज हो गये। मल्लिनाथ की नाराजगी के कारण वीरमदेव को खेड छोडना पडा। उसका खेड से जसलमेर जाना[3] फिर जागलू तथा अत मे जोहियावाटी जाकर[4] रहने की घटना का ग्रथ मे विस्तार से वणन आया है जो उस समय की परिस्थितियो एव वीरमदेव के सघषमय जीवन को समझने हेतु उपयोगी है। यद्यपि वीरमदेव की पत्नी मागळियाणी ने जोहियो को राखीबध भाई बनाकर भाईचारे का सूत्रपात किया तथापि वीरमदेव की महत्वाकाक्षाओ के कारण जोहियो और उसके बीच कसे युद्ध ठना व उसमें वीरमदेव एव मधु जोहिया वीरगति को प्राप्त हुए। इसका ग्रथ म अच्छा चित्रण मिलता है जो राठौडा क सघषमय जीवन और विरोधी शक्तियो के क्रिया कलापो को समझने में सहायक है।

चूण्डा द्वारा मण्डोर पर अधिकार करने की घटना भी ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। राठौड सत्ता की स्थापना का सूत्र चूण्डा के कृतित्व स जुडा हुआ है। लम्बे समय तक खेड म रहते हुए राठौडो ने सघष किया पर तु स्थाई रूप से वे अपनी सत्ता को सुदृढ नहीं कर सके। चूण्डा इदा प्रतिहारो के सहयोग से मण्डोर लेने[5] एव वहाँ अपनी राजधानी स्थापित करने में कसे सफल हुआ इसके बारे मे महत्वपूर्ण सूत्रो का विवरण इस ग्रथ म विस्तार से मिलता है जो उसके सघषमय जीवन को समझने के लिए उपयोगी है।

---

1 वीरवाण पृ 2
2 वही पृ 45
3 वही पृ 22
4 वही प 26
5 वही प 52

वीरमदेव के पुत्र गोगादेव ने दला जोहिया को मारकर अपने पिता की मृत्यु का बदला लिया[1] और स्वयं भी लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ। ग्रंथ में इस घटना का विस्तार से वर्णन है कि उस समय क्षत्रिय समाज में प्रतिशोध लेने की भावना कितनी प्रबल थी। इस प्रसंग से यह तथ्य भी उजागर होता है कि जोहियावाटी इत्यादि क्षेत्रों में जोहियों की शक्ति कुछ क्षीण हो जाने के कारण आगे चलकर बीका को यहाँ राज्य स्थापित करने में आसानी रही। इस प्रकार के सूत्र राज इतिहास लेखन के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

राजनीतिक इतिहास के साथ साथ अब सामाजिक सांस्कृतिक इतिहास लिखने की भी आवश्यकता है तभी हमारा इतिहास पूर्ण माना जाएगा। आलोच्य ग्रंथ में सामाजिक सांस्कृतिक इतिहास से सम्बन्धित घटनाएं भी वर्णित हैं।

मल्लिनाथ और उसके पुत्रों से भयभीत होकर जोहिये वीरमदेव की शरण में आये। उसने उनकी पूरी तरह से रक्षा की।[2] वीरमदेव ने गायों की रक्षा के लिए जोहियों से लड़ते हुए अपने प्राणों की बलि दी।[3] इसी तरह वीरमदेव के पुत्र गोगादेव ने दला जोहिया को मारकर अपने पिता का वैर लिया था।[4] इन सभी प्रसंगों से यहाँ की वीर संस्कृति की झलक मिलती है जो सांस्कृतिक इतिहास लेखन के लिए उपयोगी हैं।

वीरमदेव की पत्नी मांगलियाणी ने सातों जोहियों (दला मधु देपाळ जसु जत, देवति और जमाल) को अपना राखी बंध भाई बनाकर[5] भाईचारे का सूत्र स्थापित किया। वीरमदेव के पुत्र चूण्डा का अपने भाई गोगादेव को यह कहना कि मैं तो मामाओं (जोहियों) पर हाथ उठाऊंगा नहीं तुम जाओ और उनसे लड़कर अपने पिता का वैर लो।[6] इस प्रसंग में मर्यादा पालन की झलक मिलती है। ग्रंथ में वर्णित तीजणियों का श्रावण की तृतीया के दिन झूले झूलने[7] का प्रसंग आया है। वीरमदेव द्वारा दरगाह से फरहास का वृक्ष काट लेने[8] पर जोहियों ने उस पर चढ़ाई कर दी जिससे फरहास वृक्ष के प्रति उनकी आस्था का परिचय मिलता है। गोगादेव द्वारा जोहियों से युद्ध करने के लिए रवाना होने के पूर्व अच्छे शकुन लेने[9] के प्रसंग में शकुन

---

1 वीरवाण पृ 55 57
2 वही पृ 21
3 वही पृ 40 49
4 वही पृ 55 56
5 वही पृ 18
6 वही पृ 55
7 वही पृ 4
8 वही पृ 39
9 वही पृ 55

विचार पर ग्रच्छा प्रकाश पडा है। ये सभी घटनाए सामाजिक सास्कृतिक इतिहास लेखन के लिए ग्रत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

इस ग्रथ मे पाच परिशिष्ट हैं जिनमे से प्रथम द्वितीय व चतुथ परिशिष्ट की सामग्री महत्त्व की है। जो तथ्य इस ग्रथ मे नही है वे तथ्य इन परिशिष्टो के दूहो गीतो वार्ताग्रो ग्रादि मे निहित हैं। ग्रत नव इतिहास लखन म इस तरह की सामग्री भी उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

ग्रालोच्य ग्रथ के प्रथम परिशिष्ट मे पहाडखान ग्राडा का रूपग गोगादेव जी रो ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूण है। कवि ने विभिन्न छन्दो मे जगमाल वीरमदेव गोगादेव जोहियो ग्रादि से सम्बन्धित घटनाग्रो का विस्तार से वणन किया है जो उनकी उपलब्धियो को समझने मे सहायक है।

द्वितीय परिशिष्ट मे वीरमदे सलखावत री वार्ता गोगादे वीरमोत री वार्ता ग्रौर राव चूण्डा री वार्ता' दी गई है। ग्रब तक हमारे इतिहासकारो ने ऐसी वार्ताग्रो को कपोल कल्पित मानकर इनको महत्त्व नही दिया है। वास्तव में ऐसी वार्ताग्रो का ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्व है क्योकि इतिहास की ऐसी घटनाए जो हमारे इतिहास ग्रथो मे नहीं मिलती हैं वे घटनाए इन वार्ताग्रो म मिलती हैं। ग्रत ऐसी घटनाग्रो का नव इतिहास लेखन मे उपयोग किया जा सकता है।

चतुथ परिशिष्ट मे मुहणोत नैणसी की ख्यात का ग्रश दिया है। यह सामग्री वीरवाण के ऐतिहासिक पक्ष का समझने मे सहायक है। साथ ही वीरमदेव गोगादेव ग्रादि का व्यक्तिगत चरित्रो के सम्बन्ध मे कई नवीन सूचनाए प्राप्त होती हैं।

निष्कर्ष रूप मे यही कहा जा सकता है कि वीरवाण' में ऐतिहासिक घटनाग्रो का यथातथ्य चित्रण करने का प्रयत्न किया गया है जिससे हम इसको ऐतिहासिक काव्य मान सकते हैं। ग्रालोच्य ग्रथ मे राजनीतिक इतिहास से सम्बन्धित ऐसी घटनाए भी वर्णित हैं जिनकी ग्रोर हमारे इतिहासकारो का ध्यान कम गया है। उन घटनाग्रो का भी नव इतिहास लेखन मे उपयोग किया जा सकता है। ग्रथ म सामाजिक-सास्कृतिक इतिहास से सम्बन्धित भी कई घटनाए वर्णित हैं जो सामाजिक सास्कृतिक इतिहास लेखन मे उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

वास्तव म वीरवाण तत्कालीन ऐतिहासिक घटनाक्रम के ग्रध्ययन के लिए एक ग्राधार ग्रथ है क्योकि इस ग्रथ का कर्त्ता ढाढी बादर कई घटनाग्रो का प्रत्यक्ष दर्शी था। उसने निष्पक्षता एव ईमानदारी के साथ इस ग्रथ की रचना की। जसाकि उसने इस ग्रथ म कहा है कि मैने जसी हकीकत सुनी वसी इस काव्य म प्रकट की है।[1] इस प्रकार यह ग्रथ राजनीतिक सामाजिक एव सास्कृतिक इतिहास लेखन की दृष्टि से महत्त्वपूण है। यदि समूचे मारवाड का नये सिरे से राजनीतिक सामाजिक एव सास्कृतिक इतिहास लिखा जाए तो यह ग्रथ विशेष उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

---

1 वीरवाण प 1

गजगुण रूपकबंध* की इतिहास लेखन में उपयोगिता

—डॉ वसुमती शर्मा, जोधपुर

राजस्थान म शक्तिपरक साहित्य को प्रमुखतया चारणो एव ब्रह्मभट्टो द्वारा लिपिबद्ध किया गया। राजस्थानी भाषा की डिंगल पिंगल विधा में विरचित यह साहित्य तात्कालिक नरेशो के युद्ध अभियानो, उनकी वीरता, नीतियो एव जीवन पहलुओ को दर्शाने म महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

विद्वानो द्वारा मध्यकालीन इतिहास लेखन के रूप मे इस साहित्य का प्रयोग न करने के मुख्य दो कारण स्पष्ट नजर आते हैं। प्रथम इस साहित्य के ज्ञान का अभाव एव द्वितीय मुगल अग्रेज प्रभाव से प्रभावित मानसिकता। वास्तव मे देखा जाय तो भाषा काव्य इतिहास की अमूल्य निधि को अपने मे सजोये हुए हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि उनपर ज्ञान परक दृष्टि केन्द्रित की जाय। भाषा काव्यो के रचयिता कवि हृदय लेखक हालांकि किसी घटना एव प्रसग का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन अवश्य कर गये हैं सभवत इस प्रकार का लेखन मान सम्मान, धन प्राप्ति की भावना से प्रेरित रहा होगा ऐसा हम मान सकते हैं। किन्तु इसके अन्य पक्ष को देखें तो ज्ञात पड़ता है, इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटनाओ म लेखक स्वय भी वहाँ उपस्थित है एव घटित घटनाओं का सांगोपाग वर्णन सत्य के आधार पर किया जा रहा है। मुगल इतिहासवेत्ताओ द्वारा इतिहास लेखन में कई घटनाओ को उल्लेखित ही नहीं किया गया तथा यहाँ क वीरों एव उनकी वीरता को नही दर्शाया गया। इसका प्रमुख कारण स्पष्ट है उन्होंने लेखन म फारसी साहित्य को ही आधार बनाया।

कविवर केसादास गाडण विरचित 'गजगुण रूपक बन्ध' काव्य मारवाड के राजनीतिक घटनाक्रमो का सविस्तार वर्णन करता है। अत न केवल मारवाड के इतिहास लेखन म बल्कि भारत के मध्यकालीन राजनीतिक इतिहास लेखन के रूप मे इस भाषा का य की विषय वस्तु को लिया जाना आवश्यक है। मारवाड के कुछ इतिहासकारो न हालांकि इसे अपनी अध्ययन सामग्री म समाविष्ट भी किया है।

गजगुण रूपक बध मूलत जोधपुर के शासक गजसिंह प्रथम के द्वारा लड़े गये युद्धो का वर्णन प्रस्तुत करता है। जोधपुर राज्य की स्थापना से पूर्व कन्नौज से राठौड जयचद के पौत्र राव सीहा का मारवाड म आना उसके पुत्र आसथान अज सोनग द्वारा ईडर पर अधिकार कर वहाँ राज्य स्थापित करने का उल्लेख हुआ है।

---

* सम्पादक सीताराम लालस राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर

राठौडो की वशावली राव सीहा से महाराजा गजसिंह [प्रथम] तक की प्राप्त होती है।[1] जिसकी पुष्टि यहाँ की ख्यातो एव अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थो मे हो जाती है।

गजसिंह [प्रथम] के पिता राजा सूरसिंह का मुगल बादशाह के राज्य की रक्षार्थ दक्षिण म भेजने एव राज्य का कार्यभार गजसिंह को सौंपने का उल्लेख हुआ है।[2] गजसिंह द्वारा राज्य सम्भालने के पश्चात् सवप्रथम उसन मेवाड राज्य के नाडोल पर अधिकार किया। यहाँ चतुरग सेना (पदल अश्व, ऊट हाथियो) का युद्ध म भाग लेन का उल्लेख एव युद्ध के क्रिया कलापों का वणन तो हम उचित मानते हैं किन्तु कवि ने एक लाख सवारो की सख्या छोटे से प्रदेश को जीतन की दी है वह उचित प्रतीत नही होती। यहाँ कवि ने नरेश की विशाल सेना के वणन को कल्पना का पुट दिया है। सोलकी, बालेसा, सीधल सिसोदिया राजपूतो का दमन किये जाने का वणन प्राप्त होता है।

गजगुण रूपक सकेत देता है कि मुगल बादशाह मेवाड की विजया के साथ ही महाराजा सूरसिंह, उनके प्रधान भाटी गोविन्ददास एव महाराजा गजसिंह की बढी हुई शक्ति स शकित होकर इनको निबल बनाने हेतु आपसी मतभेद पदा करना चाहता था[3]—

> गाजीसाह पधारियौ, चढि गुजर दरबार
> दिल्लीपति दीनौ हुकम, केहरि गोरद' मार (2)

भाटी गोविन्ददास किस प्रकार किशनसिंह राठौड द्वारा मारा गया इसका सटीक वणन काव्य में हुआ है।

बादशाह द्वारा सूरसिंह को घोडा एव सिरोपाव दिये जाने तथा दक्षिण के उपद्रवो को शात करने हेतु वहाँ नियुक्त किये जाने के प्रसग उल्लखनीय हैं।[4] सूरसिंह अपनी अतिम अवस्था तक दक्षिण म ही रहा तथा वि स 1676 की भाद्रपद शुक्ला नवमी (ई स 1619 को 1■ सितम्बर) को उसका देहा त हुआ।[5] गजसिंह द्वारा भी दक्षिण के उपद्रवो को शात करने हतु प्रयत्नरत् रहने के सागोपाग वणन गजगुण रूपक से प्राप्त होते हैं। अपने पिता के देहा त पर गजसिंह द्वारा दक्षिण म बुरहानपुर जाना एव राज्य का भार आसोप ठाकुर कूँपावत राजसिंह को सौंपना इसके पश्चात्—गजसिंह का मलिक अबर (अहमद नगर) के साथ युद्ध वणन एव भीम सिसोदिया को मारना तथा खुरम का रणक्षेत्र से भाग जाना आदि घटनाए मुगल राजपूत सबधो के बारे मे अनेक तथ्य उद्घाटित करती हैं।

---

1 गजगुण रूपक बध ■ 3-4
■ वही पृ 15
3 वही ■ 24 28
4 वही पृ 63
5 वही पृ 54

दक्षिण विजय —दक्षिण में अहमदनगर के बादशाह का मंत्री 'मलिक अम्बर' दक्षिण फौज का सचालक था, जिसके पास विशाल फौज तथा याकूत खां नामक वीर सेनापति था। बादशाह जहाँगीर की सेना को परास्त करने का बीड़ा इसने उठाया था। इस समय बादशाह द्वारा खानखाना अब्दुर्रहीम के साथ गजसिंह को दक्षिण के उपद्रव दबाने के लिए नियुक्त कर सेना के अग्रभाग (हरावल) मे स्थान दिया गया। गजसिंह ने दक्षिण की सेना का बहादुरी से मुकाबला किया।[1]

गज हैमर पकलैर सुहड़ा पहराव
आप कवच ओपच, सर्जे सग्रामरयाव

यहा यह भी तथ्य उल्लेखनीय है कि बरसिंह बुन्देला, रतनसिंह हाडा, बाघा सिसोदिया तथा खानखाना के पुत्र दाराब खाँ ने महकर के थाने पर मलिक अम्बर की विशाल और शक्तिशाली सेना का मुकाबला करने से मुँह मोड़ लिया था।[2] महकर के थाने पर सेना का घेराव क्रमश चार व तीन माह रहा। गजसिंह की वीरता के बारे मे खानखाना ने जहाँगीर को एक पत्र प्रेषित किया जिस पर बादशाह द्वारा गजसिंह को दल थभण (दल सेना को रोकने वाला) की भी उपाधि दी गई।[3]

इस युद्ध प्रसग में शाहजादे खुरम का बादशाह द्वारा भेजने, खुरम द्वारा गजसिंह को अपना सेनापति नियुक्त किया जाना, विजय प्राप्त होने पर गजसिंह को पाच हजार जात का मनसब, नक्कारा सुनहरी साज का घोड़ा एव जालोर, साचोर परगने दिये जाने का उल्लेख प्राप्त होता है।[4] मुगल इतिहास ग्रन्थों मे मारवाड़ नरेश एव वीरो के स्थान पर खुरम की विजय और उसकी वीरता का बखान विशेषत किया गया है।

खुरम का विद्रोह —खुसरो की मृत्युपरात खुरम ने भीम सिसोदिया अब्दुर्रहीम एव सुदर ब्राह्मण को अपने पक्ष म कर शाही सेना का संहार किया। ऐसी परिस्थिति मे वजीरो की सलाह के अनुसार यहाँ गजसिंह को शाही फरमान भेजा गया। गजसिंह वि स 1680 वैशाख सुदि 12 ई 1623 को बादशाह के पास पहुँचा। शाही आज्ञा प्राप्त कर महाराजा ने खुरम पर चढ़ाई की। इस काव्य मे दोनो सेनाओ की गतिविधियो का विस्तार से वर्णन हुआ है जो उस समय की राजनीतिक हलचलो को समझने म सहायक है।[5]

बनास के युद्ध म गजसिंह के साथ आमेर के नरेश जयसिंह बीकानेर के राजा सूरजसिंह बुन्देला वरसिंघदेव सारगदेव, बहलाल खान व आलमखान आदि थे। युद्ध

---

1 गजगुण रूपक बंध पृ 63 89
2 वही पृ 81
3 वही पृ 93 94
4 वही प 97
5 वही प 112-146

में सिसोदिया भीम एव गजसिंह का मुकाबला हुआ। युद्ध म भीम सिसोदिया ने बडा पराक्रम दिखाया और वह लडता हुआ काम आया। मानसिंह सिसोदिया कन्याणसिंह सिसोदिया, हरिदास राठोड, कचरा कूपावत हरिसिंह भाटी आदि खेत रहे। भीम के मरने पर पहाडखान, दरियावखान अब्दुलाखा ऊन्यनारायण हाडा, सादूलसिंह गयासबीर खोजा आदि सुरम के साथ कायरो की भाति भाग गये।

गजगुण रूपक के ये प्रसग दर्शाते हैं कि मुगलो द्वारा अपने हितो की रक्षाथ राजपूत नरेशो एव वीरो को एक दूसरे के विरुद्ध भडकाया जाता था। साथ ही राजपूती शक्ति का प्रयोग स्वय के पक्ष मे किया जाता था। राजपूती नरेश भी मुगल आश्रय एव मान सम्मान की प्राप्ति हेतु अपने सहोदरो से युद्धरत हो जाते थ।

यह भाषा काय मूलत मारवाड मुगल सबधो के अध्ययन हेतु उपयोगी ग्र थ है। साथ ही राजपूत नरेशो के आपसी सबधो, युद्ध अभियानो वीरो के पौरुष, युद्ध पद्धति स य सचालन स य व्यवस्था एव स य आचार नियमो की जानकारी हेतु सहायक है। तात्कालिक स य प्रब ध के विभिन्न पहलुओ की जानकारी के साथ ही शासन प्रणाली राज दरबार एव राज्य की सामाजिक आर्थिक दशा का बोध होता है। ग्रथ सम सामयिक होने के कारण ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

राजविलास* का ऐतिहासिक महत्व

—डॉ मीना गौड़, उदयपुर

राजविलास एक ऐतिहासिक काव्य है। इसकी भाषा पिंगल अर्थात् राजस्थानी और ब्रज मिश्रित है। महाराणा राजसिंह के काल की इतिहास सम्मत घटनाओं का इसमें वर्णन है। इस काव्य में वर्णित प्राय सभी प्रधान घटनाएं प्रामाणिक हैं। यही कारण है कि जेम्स टॉड, श्यामलदास तथा गौरीशंकर हीराचन्द ओझा जैसे प्रसिद्ध इतिहासकारों ने अपने शोधपूर्ण ग्रंथों के लिए इस काव्य का सहारा लिया है। अत इस ग्रंथ का ऐतिहासिक महत्व स्पष्ट है।

चूंकि मान कवि महाराणा राजसिंह के समसामयिक थे, अत महाराणा राजसिंह के विषय में जो बातें उन्होंने इस ग्रंथ में लिखी हैं वे प्राय ठीक हैं। लेकिन महाराणा राजसिंह के पूर्व का जो विवरण इसमें दिया गया है उसकी ऐतिहासिकता और विश्वसनीयता प्राय संदिग्ध है। उदाहरणार्थ चित्राग मोरी और बाप्पा रावल के युद्ध वर्णन में कवि मान ने बारूद तोप और गोलों के प्रयोग का उल्लेख किया है जो गलत है क्योंकि तोपों का सर्वप्रथम प्रयोग बाबर ने इब्राहिम लोदी के विरुद्ध युद्ध में किया था। इससे पूर्व तोपों का प्रयोग यहाँ किसी ने किया हो ऐसा ज्ञात नहीं है। इसी प्रकार बाप्पा रावल की विजय के समय देवताओं का उन पर फूल बरसाने का वर्णन परम्परागत है।

पर इन कुछ उदाहरणों को अगर अपवाद के रूप में छोड़ दिया जाय तो यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि जिन घटनाओं का विवरण कवि ने 'राजविलास' में किया है पूर्णत इतिहास सम्मत है। प्रारम्भ में कथा सूत्र को जोड़ने के लिए रचयिता ने मेवाड़ के प्राचीन इतिहास पर प्रकाश डाला है। फिर बाप्पा रावल से लेकर महाराणा जगतसिंह तक के शासकों की वंशावली प्रस्तुत करते हुए महाराणा जगतसिंह के राज्य वैभव और उदयपुर नगर का चित्रण प्रस्तुत किया है जो उस समय की नगरीकरण व्यवस्था को समझने में सहायक है।

महाराणा के बूंदी नरेश राव छत्रसाल की पुत्री के साथ हुए विवाह का वर्णन उस समय के विवाह सम्बन्धी रीति रिवाजों को समझने में सहायक है। कवि ने 'सबरितु विलास' उपवन की शोभा को रेखांकित करने का प्रयास किया है इससे तत्कालीन नरेशों की प्राकृतिक रुचि का बोध होता है।

तत्पश्चात् महाराणा राजसिंह के चरित्र को दर्शाने का प्रयास किया गया है। अनन्तर मालपुरे की लूट का वर्णन हुआ है जिससे लूट जैसे अभियानों से प्राप्त हुई आय का पता चलता है।

उक्त महाराणा का रूपनगर की राजकुमारी चारुमती के साथ हुए विवाह का विस्तार से वर्णन किया गया है। इस प्रकार महाराणा ने स्त्री धर्म की रक्षा कर

---

* सम्पादक डॉ मोतीलाल मेनारिया नागरी प्रचारिणी सभा बनारस

कसे क्षात्र घम का निर्वाह किया इसकी जानकारी हम मिलती है। राजसमुद्र झील का वणन जहाँ एक ओर स्थापत्य कला को समझने मे सहायक है वही दूसरी ओर महाराणा के जनहितकारी मनोवृत्ति को भी दर्शाता है।

इसम न केवल मेवाड बल्कि मारवाड की राजनीतिक हलचलो का भी वणन मिलता है। औरगजेब द्वारा जोधपुर खालसा किए जाने पर मारवाड के सरदारो ने दुर्गादास के नेतृत्व मे रहकर मुगला से किस प्रकार लोहा लिया इसका विस्तार से वणन दिया गया है। साथ ही महाराणा ने किस प्रकार अजीतसिंह के भरण पोषण हेतु यवस्था कर कठिन घडी मे उनकी मदद की इसकी जानकारी मिलती है।

ग्र थ मे निम्नलिखित लडाइया का वणन हुआ है—

1 देसूरी क घाटे की लडाई
2 उन्यपुर की लडाई
3 ननवाडा (झाडोल के पास) की लडाई
4 चित्तोड का युद्ध
5 कु वर भीमसिंह की गुजरात पर चढाई
6 बदनौर की लडाई
7 मालवा पर आक्रमण।

इन अभियाना का बारिकी से अध्ययन किया जाय तो इतिहास लेखन क लिए अनेक उपयोगी सूत्र खोजे जा सकते हैं जसे—

1 महाराणा द्वारा युद्ध की स्थिति म सामतो से परामश लेकर लडाई की रीति नीति तय करना।
2 सेना की व्यूह रचना निर्धारित करना।
3 युद्ध अभियानो मे मेवाड के उमरावो और सरदारों की भूमिका।
4 युद्ध अभियाना मे सरदारो के अलावा ओसवाल, पुरोहित आदि जातियो की भूमिका।
5 मुगल सना की गतिविधिया और उनके लडने के तौर तरीके।
6 विभिन्न लडाइया मे प्राणोत्सग करने वाले योद्धाओ के क्रिया कलापो की जानकारी।

इस प्रकार महाराणा राजसिंह कालीन युद्ध अभियाना को समझने के लिए यह सामग्री प्रत्य त ही महत्वपूण है। यद्यपि श्यामलदास और गौरीशकर हीराचद ओझा आदि इतिहासकारा ने इस ग्र थ का उपयोग किया है लेकिन सै य प्रब ध साम तों की भूमिका ओसवाल पुरोहित आदि जातियों का योगदान मेवाड का पडोसी राज्यो क साथ सम्ब ध मुगलो के साथ सघष महाराणा की धार्मिक नीति जन कल्याणकारी काय आदि कितने ही राजनीतिक सामाजिक और सास्कृतिक पहलुओ का अध्ययन इस ग्र थ के माध्यम से किया जा सकता है।

इतिहास लेखन में 'सगतरासो'* की उपयोगिता

—डॉ. ब्रजमोहन जावलिया, उदयपुर

इतिहास शब्द इति+ह+आस शब्द से बना है जिसका अर्थ है निश्चित रूपेण ऐसा ही हुआ था। किसी भी इतिहासकार के लिये किसी भी घटना विशेष के लिये यह कह पाना दुष्कर होता है कि यह घटना ऐसे ही घटी थी। प्रत्यक्षदर्शी व्यक्ति भी उसको अपनी ही दृष्टि से देखेगा जब तक उसके पास निष्पक्ष निर्णय व अपनी दृष्टि न हो। यह परिभाषा है इतिहास की भारतीय मनीषियों के द्वारा दी हुई। उसमें धर्म अर्थ काम की समन्वित भावना निहित रहती थी। भविष्य के लिये भी उसमें स्वस्ति पथ प्रदर्शन का भाव रहता था। इस परम्परा का निर्वाह बहुत कुछ हमारे यहाँ के काव्य प्रणेता करते रहे हैं। पाश्चात्य पद्धति का अनुसरण करने वाले इतिहासकारों के लिये तो इतिहास लेखन का उद्देश्य मात्र सन संवतों के साथ किसी घटना का उल्लेख मात्र कर देना होता है। उसमें भी उनके हाथ बंधे रहते रहे हैं। अतः निश्चित रूप से ऐसा ही हुआ था की छाप तो उसके वर्णनों पर नहीं लगाई जा सकती।

सगतरासो' का प्रणेता कवि गिरधर आसिया भी स्पष्ट है अपने आश्रयदाता मेवाड़ के महाराणा और शक्तावत यजमानों के उपकार से दबा हुआ था अतः उसने जो कुछ लिखा वह उन यजमानों की ख्याति को बढ़ाने वाला ही होना चाहिए। अतः उसने जो कुछ देखा सुना और पूछा हुआ लिखा उस पर सम्यक् विचार मंथन के उपरान्त इतिहास लेखन में उपयोग होना चाहिए। सगतरासो एक ऐतिहासिक काव्य है। राजस्थानी ऐतिहासिक काव्य परम्परा में उसका महत्वपूर्ण स्थान है। इसके रचनाकाल के विषय में विद्वानों में मतभेद रहा है। श्री उदयसिंह भटनागर इसकी रचना सं. 1775 के बाद होना मानते हैं जबकि इस ग्रंथ के सम्पादक स्व. प्रोफेसर कृष्णचन्द्र श्रोत्रिय सं. 1730 35 के लगभग इसका रचनाकाल मानते हैं। ग्रंथ के संपादक प्रोफेसर श्रोत्रिय संस्कृत हिन्दी और राजस्थानी— डिंगल और पिंगल भाषा और साहित्य के प्रकाण्ड पंडित थे। साहित्य के साथ साथ इतिहास में भी उनकी गहरी पैठ थी। सन् 1976 में उन्होंने इस ग्रंथ का सम्पादन कार्य पूर्ण किया और सन् 1987 में यह प्रकाशित होकर पाठकों के सामने आया।

डा. हुकमसिंह भाटी और देवेन्द्रसिंहजी शक्तावत ने ग्रंथ के परिशिष्ट रूप में कुछ और सामग्री जोड़कर इस संपादन को और अधिक उपयोगी बना दिया है।

---

* सम्पादक डॉ. कृष्णचन्द्र श्रोत्रिय डॉ. हुकमसिंह भाटी प्रताप शोध प्रतिष्ठान उदयपुर

ग्र थ की रचना का उद्देश्य अपने स्वामी मेवाड के महाराणाओ की कीर्ति को प्रसारित करना और अपने यजमान शक्तिसिंह और उसके वशज सगतावतो के शौर्य और स्वामीभक्ति को चिरस्थायी करना रहा है। अन्य कवियो की भांति कवि ने काव्य के मुख्य पात्र शक्तिसिंह के पौराणिक या अल्पज्ञात पूवजो की यशोगाथा गाने का प्रयत्न नही किया है। उसने अपने ग्र थ का श्री गणेश महाराणा हमीर से किया है और महाराणा उदयसिंह तक की कीर्ति का बखान मात्र 18 दोहा म करके उदयसिंह के पुत्रो के नामोल्लेख के साथ शक्तिसिंह की प्रशस्ति प्रारम्भ करदी है। महाराणा अमरसिंह (प्रथम) के राज्यकाल म घटी राजनीतिक घटनाओ का विस्तृत वणन किया है। ये वणन इतिहास ग्र थो म रहे अभाव की पूर्ति करने वाले सिद्ध हो सकते हैं। इसमे ऐसे अनेक महत्वपूर्ण प्रसग उल्लिखित हैं जिनका मेवाड के इतिहास की पुस्तको मे अथवा मुगलो के इतिहास मे कही कोई उल्लेख तक नहीं है। यथा—

इतिहास ग्रथो म महाराणा उदयसिंह के चौबीस पुत्रो का उल्लेख मिलता है जबकि कवि आसिया ने मात्र चवदह पुत्रो का ही नामोल्लेख किया है।

महाराणा उदयसिंह द्वारा अपने पुत्रो की शक्ति परीक्षण हेतु की गई प्रतियोगिता मे शक्तिसिंह के द्वारा कटार की तीक्ष्ण धार पर हाथ पटकने के कारण महाराणा का रुष्ट होकर शक्तिसिंह के दरबार से निष्कासन की आज्ञा और आज्ञा शिरोधाय करके राजसभा से निकल जाने व उसका अकबर के दरबार म जाने का कारण कविराजा श्यामलदास ने दिया है। अकबरनामा मे इस घटना पर सकेत किया है। सगतरासो[1] का यह उल्लेख ही इतिहास का आधार माना गया है।

अकबर के द्वारा शक्तिसिंह की प्रशसा और चित्तौड के सिंहासन पर बठाने के प्रलोभन का इस ग्र थ म उल्लेख है।[2] इतिहास की पुस्तको मे यह उल्लेख नही मिलता। अकबर ने चित्तौड उदयपुर देखने की इच्छा व्यक्त करते हुए शक्तिसिंह को अग्रभाग हरावल मे रहकर चलने का आदेश दिया—पर अवसर पाकर शक्तिसिंह ने बादशाह का साथ छोड दिया और पिता को अकबर के इरादे की सूचना देने के लिये चित्तौड भाग आया।[3] अकबर नामे से भी इस घटना की पुष्टि होती है। वीर विनोद म भी प्रकारा तर से इस घटना का उल्लेख हुआ है।

धौलपुर से चित्तौड के लिय अपने पिता उदयसिंह को अकबर के सम्भावित *आक्रमण की सूचना देने हेतु जाते समय शक्तिसिंह पर खुरासान खाँ और* मुलतान खाँ द्वारा आक्रमण और शक्तिसिंह द्वारा उनके वध की पुनरावृत्ति हल्दी घाटी

---

1 सगतरासो छन्द सख्या 19 24
2 वही छद सख्या 25 29
3 वही छद सख्या 30 34

में युद्ध के समय किया जाना विचारणीय है।[1] शक्तिसिंह की हल्दी घाटी में उपस्थिति भी इतिहासज्ञों के सम्मुख विवादग्रस्त रही है।

शक्तिसिंह के चित्तौड़ लौट कर पिता के चरणों में रहने की इच्छा व्यक्त करने पर जयमल, पत्ता और साईदास ने परस्पर सम्मति कर शक्तिसिंह को दुर्ग में प्रविष्ट नहीं होने दिया—ऐसी सूचना 'सगत रासो' देता है,[2] पर कविराजा श्यामलदास लिखते हैं कि शक्तिसिंह ने महाराणा को अकबर के आक्रमण की सूचना दी और महाराणा ने युद्ध के ढंग पर अपने सरदारों और पुत्रों से विचार विमर्श किया था। शक्तिसिंह भी उसमें सम्मिलित था।[3] दोनों विरोधी तथ्य हैं।

किले में प्रविष्ट न होने देने से खिन्न होकर शक्तिसिंह का डूंगरपुर के रावल सहस्रमल के पास चला जाना और वहाँ जगमाल नामक व्यक्ति की हत्या कर देने पर सहस्रमल के कोप से बचने के लिये पुनः डूंगरपुर छोड़ कर वणगढ़ जाने का उल्लेख है।[4] पर इतिहास की पुस्तकों में चित्तौड़ के घेरे के बाद शक्तिसिंह विषयक कोई उल्लेख नहीं मिलता।

इस विषय में सम्पादक महोदय का यह कथन उचित है कि सहस्रमल सं 1637 में सिंहासनारूढ़ हुआ—अतः चित्तौड़ के घेरे के समय वि सं 1624 में वह रावल नहीं था। अतः वह डूंगरपुर कब गया विचारणीय विषय बन जाता है। डा हुकमसिंह भाटी ने भी संशोधन दिया है कि इस समय डूंगरपुर में आसकरण रावल था—सहस्रमल नहीं।

इतिहासकारों का मत है कि महाराणा उदयसिंह चित्तौड़ दुर्ग पर आक्रमण से पूर्व ही अपने परिवार और कतिपय सामंतों के साथ दुर्ग से निकल कर चले गये थे। पर सगतरासोकार कहता है कि महाराणा और उनका परिवार अकबर के घेरे को तोड़ कर वीरतापूर्वक लड़ते हुए बाहर निकले थे जिसमें मेवाड़ के अनेक योद्धा मारे गये। वेणा सांखला उनमें अग्रगण्य था।

इतिहासकारों का मत है कि हल्दीघाटी का महाराणा ने ही युद्ध के लिये उपयुक्त स्थल समझकर निर्णय लिया था पर सगतरासोकार का कहना है कि महाराणा ने ही नहीं राजकुमार मानसिंह ने भी अपनी ओर से हल्दीघाटी में ही युद्ध करने का निर्णय लिया था।

वणगढ़ में रहते हुए शक्तिसिंह ने मंदसौर के सय्यदों द्वारा भीण्डर पर आक्रमण करके नगर को लूटने और स्त्रियों और बच्चों को बन्दी बनाने पर प्रजा की पुकार पर

---

1 सगतरासो छन्द संख्या 32
2 वही छन्द संख्या 35 36
3 वीर विनोद भाग 2 प 74 75
4 सगतरासो छन्द संख्या 37 43

मीण्डर मे यवना पर भयकर आक्रमण किया और विजय प्राप्त की। सय्यदो के द्वारा मींडर पर आक्रमण का कारण मींडर के ठाकुर अमरसिंह सोलकी द्वारा मन्दसौर की प्रजा को पीडित करना था।[1] इस युद्ध मे प्राप्त प्रशसा के कारण शक्तिसिंह का पुन बादशाही सेना म प्रवेश पाने और मानसिंह कच्छवाहा के साथ मेवाड म युद्धार्थ भेज जाने तथा खमणोर में हुए प्रसिद्ध हल्दी घाटी के युद्ध म महाराणा से उसके पुनर्मिलन शक्तिसिंह द्वारा प्रताप का पीछा करने वाले खुरासान खाँ और मुलतान खाँ का वध करने का उल्लेख है।[2] महाराणा के महल देखने के लिये मानसिंह कच्छवाहा का खमणोर से गोगूदा जाने और महलो मे मान्डा ■ अखाडे के चित्र देखकर शक्तिसिंह को चुभते वचन कहने शक्तिसिंह द्वारा प्रत्युत्तर म अकबर और मानसिंह की बुआ के प्रसग मे वाग्वचन सुनाने के प्रसग तथा शक्तिसिंह का भद्रावती (भसरोड) जाकर निवास और वहो मृत्यु का वणन है।[3] 'सगतरासो' के समान ही सगतावता की वशावली और कनल टाड भी उसका बादशाही सेवा छोड कर भसरोडगढ जाकर राज्य स्थापित करने का उल्लेख करते हैं। कनल टाड का तो कहना है कि भसरोडगढ शक्तिसिंह को महाराणा प्रताप की ओर से ही दी गई जागीर थी।

हल्दीघाटी के युद्ध म शक्तिसिंह की उपस्थिति को इतिहासकारो ने ग्रहण तो किया है पर अधूरे मन से। गोगूदे में मानसिंह के साथ शक्तिसिंह के जाने या भाडो के चित्र आदि के प्रसग से दोनो के मध्य विवाद का कोई उल्लेख इतिहास ग्रथा मे नही मिलता। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि ने हल्दीघाटी के युद्ध म उपस्थिति का प्रसग राजप्रशस्ति और अमरका य के रचयिता के समान ही उस काल मे प्रचलित लोकप्रवादो से ही ग्रहण किया होगा। आधुनिक इतिहास लेखकों के लिये यह घटना आज भी विवादास्पद है।

शक्तिसिंह के पश्चात् रासो के अनुसार बादशाह ने भाण का राजतिलक करके भसरोडगढ का राज्य उसे दे दिया। उसके प्रभुत्व का देखकर रामपुरा के राव दुर्गा ने उससे मैत्री करली। भाण का भाई अचलदास दसोर (मदसौर) म राज्य स्थापित कर रहने लगा। उसने ऊपरमाल मे रह रहे शक्तावत जयचन्द पर रामपुरा के राव दुर्गा के आक्रमण से रक्षा की।[4] इसी प्रकार सगतसिंह के वशजा अचल आदि ने खेरज के हाडा पता मोही के मीर फिराजखा आदि से युद्ध किये। ये छोटे छोटे सघ ये अत मेवाड के इतिहास म या मालव के इतिहास ग्रथो म उनको स्थान नहीं दिया गया। देवलिया (प्रतापगढ) और मन्दसौर के सय्यदों के विरुद्ध महाराणा अमरसिंह के युद्धो का भी इतिहास ग्रथा म कोई उल्लेख नहीं है। देवलिया के युद्ध म अचलदास

---

1 सगतरासो छन्द सख्या 44–62
■ वही छन्द सख्या 63–76
3 वही छन्द सख्या 63–76 77–87
4 वही छन्द संख्या 95–104

का महाराणा को सहयोग रहा और उसी के फलस्वरूप विजयोत्सव में अचलदास को बेगू का परगना दिया गया था और साथ ही रावत की उपाधि भी।

हल्दीघाटी के युद्ध (सं० 1633) में शक्तिसिंह की उपस्थिति के बाद सं० 1657 में ऊंटाले के युद्ध में शक्तावतों के शौर्य प्रदर्शन का उल्लेख इतिहास ग्रंथों में मिलता है। इस युद्ध के परिणामस्वरूप उन्हें रावत की उपाधि जागीरें और मेवाड़ की फौज में चन्दावल में लड़ने की प्रतिष्ठा मिली। ऊंटाले के युद्ध का उल्लेख कविराज श्यामलदास और गौरीशंकर हीराचंद ओझा दोनों ने ही अपने ग्रंथों में किया। इस युद्ध में बादशाह की ओर से शाहजादा सलीम और मानसिंह कच्छवाहा ने भाग लिया। महाराणा अमरसिंह के साथ जैतसिंह चूण्डावत और शक्तावत भाण, अचलदास, बल्लू, मल्ला और जोधा थे जिनका पृथक पृथक वर्णन हुआ है। इनका वर्णन 'सगतरासो' में हुआ है पर इतिहासग्रंथों में अकेले बल्लू सगतावत का ही उल्लेख है।

इस युद्ध में शक्तिसिंह के पुत्र दलपत द्वारा बादशाही सेना के भयंकर संहार का विशाल वर्णन हुआ है। जब शाहजादा सलीम ने बादशाह के पास दलपत द्वारा किये गये नरसंहार का वर्णन लिख भेजा तो बादशाह ने मीर रुकन्दी को दलपत पर आक्रमण हेतु भेजा। कालीखोह (परगना मांडलगढ़) में उनका भूपत और दलपत से युद्ध हुआ और इस युद्ध में दोनों ने वीरगति पाई। 'सगतरासो' में इस युद्ध का उल्लेख है पर इतिहास ग्रंथों में इस घटना का उल्लेख नहीं है। यदि वही मीररुकन्दी है तो वह जहांगीर के काल में आया था। 'सगतरासो' के वर्णन में ऐसी स्थिति में काव्य का दोष माना जा सकता है।

एक ही वर्णना में मीर तुरती और अचलदास की सेना के वीर सूजा और माइल चौहान सूरवीरों के मध्य हुए युद्ध का भी इतिहास ग्रंथों में उल्लेख नहीं है। इस युद्ध में इन दोनों भाइयों की विजय हुई थी।

जहांगीर और महाराणा अमरसिंह के मध्य हुए युद्ध का वर्णन इतिहास ग्रंथों के समान ही 'सगतरासो' में भी हुआ है। इसमें कवि ने मेवाड़ की फौज में सम्मिलित अनेक अन्य वीरों के नाम दिये हैं और साथ ही मुगल फौजों में सम्मिलित वे सभी नाम गिनाये हैं जो इतिहास ग्रंथों में मिलते हैं। शाहजादे पर्वेज का इसमें नामोल्लेख नहीं है।

इस युद्ध में सम्मिलित हुए शक्तिसिंह के पुत्र और पौत्रों के नाम भी मिलते हैं, यथा—सगतावत भाण के पुत्र पूरणमल, केहर, मनहर, केशवदास, भाण के भाई अचलदास, उसके पुत्र नरहर, नारायण, सगतावत जोधा के पुत्र भासरसिंह, सगतावत दलशाह, सगतावत राजसिंह के पुत्र कीर्तिपाल और आहरखान, सगतावत काशीदास और मुकुन्द, सगतावत राजसिंह, बालिभद्र का पुत्र रामसिंह और सगतावत दाधा का पुत्र गजमल।

इस युद्ध म सम्मिलित हुए ब्राह्मण, चारण, महाजन पचोली, मसाणी आदि अन्य जातियो के योद्धाओ के नाम भी आये हैं।

इतिहास ग्रथो म महिनाल के युद्ध का उल्लख नही मिलता। कवि राजा श्यामलदास ने 'वीर विनोद म बादशाही फौजो के साथ 17 युद्धा का उल्लेख किया है पर उन युद्धा के बहुत कम स्थान बताये हैं। स 1670 के पोष मास मे हुए इस युद्ध का वणन कवि ने किया है। नरहर के युद्ध म काम आन साथ मे पाँच रानियो के सती होने और युद्ध म सम्मिलित हुए सामन्तो को राज्य की ओर से अश्व प्रदान करन का वणन सगतरासो' म है।

डा भाटी ने इस ग्रथ के परिशिष्ट स 1 म का य म आये पात्रा पर टिप्पण परिशिष्ट 2 म शक्तिसिंह और उसके वशजा पर निबध और शक्तावतो की वशावलिया देकर ग्रथ को और अधिक उपयोगी बना दिया है। सुप्रसिद्ध इतिहासकार डा रघुवीरसिंह ने इस ग्रथ की उपयोगिता को स्वीकार किया है।[1] नि म देह मेवाड के नये सिरे से इतिहास लेखन म यह ग्रथ उपयोगी सिद्ध होगा।

राजस्थान के इतिहास लेखन में राजरूपक* की उपयोगिता

—डॉ कमला जैन एवं श्रीमती सुशीला शक्तावत, उदयपुर

'राजरूपक' रतनू चारण वीरभाण की डिंगल भाषा की छन्दबद्ध कृति है। यह कवि जोधपुर के महाराजा अभयसिंह का आश्रित था। इस ग्रंथ में महाराजा अभयसिंह का गुजरात के सूबेदार शेरबुलन्दखाँ से हुए युद्ध के वर्णन के साथ ही महाराजा का सविस्तार इतिहास दिया है।

'राजरूपक' की शोधपूर्ण अध्ययन के क्षेत्र में उपयोगिता

1 महाराजा अजीतसिंह कालीन इतिहास जानने में सहायक—इस ग्रंथ में महाराजा अजीतसिंह के जन्म से लेकर मृत्यु तक की समस्त घटनाओं का सिलसिलेवार वर्णन है। हालांकि यह ग्रंथ महाराजा अजीतसिंह की हत्या के सम्बन्ध में मौन है। मीरा मिश्र ने अपने शोध ग्रंथ 'महाराजा अजीतसिंह एवं उनका युग' में इस ग्रंथ का उपयोग कर इसकी प्रामाणिकता को स्वीकारा है। अजीतसिंह का जन्म संवत 1735 चैत्र वदि चतुर्थी बुधवार को लाहौर में हुआ।[1] उनके जन्मकाल से लेकर राजत्वकाल तक का वर्णन राजरूपक में बहुत विस्तार से किया गया है। महाराजा अजीतसिंह के जीवन की कई घटनाओं जैसे कि महाराजा अजीतसिंह का आबू पहाड़ की तलहटी में गुप्त रहना[2] महाराजा अजीतसिंह को प्रकट करना संवत 1743 चैत्र सुदी 15[3] अजीतसिंह को बचाने के लिये युद्ध अजीतसिंह का मेवाड़ व अन्य राजघरानों में वैवाहिक सम्बन्ध[4] महाराजा अजीतसिंह का जयपुर व उदयपुर नरेशों के साथ राजनीतिक सम्बन्ध[5], महाराजा का जोधपुर पर अधिकार करना संवत् 1765 श्रावण वदी 13 व अजमेर पर अधिकार करना आदि कई घटनाओं का इसमें उल्लेख है।[6] संक्षेप में हम कह सकते हैं कि राजरूपक अजीतसिंह कालीन राजनीतिक घटनाक्रम, मारवाड़ मुगल सम्बन्ध सामन्तों की भागीदारी सामाजिक और धार्मिक पृष्ठभूमि को जानने का प्रामाणिक ग्रंथ है।

---

* सम्पादक रामकर्ण आसोपा नागरी प्रचारिणी सभा काशी
1 राजरूपक पृ 26
2 वही पृ 181
3 वही पृ 296
4 वही पृ 345 346 355 56
5 वही पृ 345 427
6 वही पृ 407 523

यात्रा वृत्तान्त—'राजरूपक' मे अजीतसिंह कालीन केवल युद्ध की घटनाओ का ही वर्णन नही है अपितु महाराजा अजीतसिंह की कुछ प्रमुख यात्राओ, उनके जाने का मार्ग, यात्राओ मे लगी अवधि का भी उल्लेख है। महाराजा स 1773 (4) की श्रावण वदि में द्वारका से जोधपुर आए। इसी वर्ष जब सय्यदो और मुगलो मे परस्पर विरोध हुआ तब महाराजा ने दिल्ली जाने का विचार किया। प्रस्थान करते समय राईका बाग मे रुके उस समय देवडा नारायणदास की बेटी का डोला आया। महाराजा ने उस कन्या के साथ विवाह किया। वहाँ से नागौर फिर मेडते से पुष्कर आये और बहुत दानपुण्य किया। दिल्ली से दस कोस पर अलावरदी सराय मे डेरा किया तथा एक मास तक उसी सराय मे ठहरे।[1]

महाराजा अजीतसिंह के जीवन के सम्पूर्ण तथ्यो का अध्ययन 'राजरूपक' के द्वारा किया जा सकता है। अत यह ग्रथ अजीतसिंह कालीन इतिहास को जानने के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

2 सामन्तों की भूमिका— 'राजरूपक' तत्कालीन सामन्ता की भूमिका पर अच्छा प्रकाश डालता है। सामन्ता की जागीरदारी को समझने के लिय यह ग्रथ महत्त्वपूर्ण है। सामन्ता की अपने महाराजा के प्रति स्वामीभक्ति व अपने स्वामी की रक्षा के लिये प्राणो की बलि देने की भावना का चित्रण 'राजरूपक' में देखने को मिलता है। दुर्गादास राठौड का मारवाड के इतिहास मे ही नही वरन् राजस्थान के इतिहास मे महत्त्वपूर्ण स्थान है। 'राजरूपक' मे उसकी राजनीतिक योग्यता, अपूर्व निर्णय क्षमता स्वामीभक्ति, कर्त्तव्य परायणता, सैनिक क्षमता व उज्ज्वल चरित्र के अनेक तथ्य समाहित हैं जो दुर्गादास के जीवन पर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं।

महाराजा युद्ध अभियानो और विवाह तक के अवसरो मे अपने सामन्तों से सम्मति लेते थे इससे राजकाज व तत्कालीन राजनीति मे उनके महत्व का पता चलता है। जब चैत्र मास मे महाराजा अजीतसिंह की कन्या सूरजकवरी जयपुर के महाराजा जयसिंह को स 1776 ज्येष्ठ वदि 9 को ब्याही गई थी। परन्तु महाराजा ने अपने सामतगण और प्रमुख लोगो से पहले सम्मति ली—जैसे प्रधान चापावत माधोसिंह भडारी खीवसी दीवान भडारी रघुनाथ पुरोहित व्यास और बारहठ जैसलमेर के रावल अमरसिंह आदि आदि की।[2]

जब महाराजा अजीतसिंह ने स 1780 में बादशाह से मिलने का विचार किया तब उमरावो व सामतो की अर्ज पर स्वय न जाकर कुवर अभयसिंह को दिल्ली भेजा।[3] कई बार महाराजा सामन्तो की राय को भी नहीं मानते थे। महाराजा जयसिंह

---

1 राजरूपक पृ 496 97
2 वही पृ 524
3 वही पृ 462

व नवाब बादशाही सेना लेकर संवत् 1780 को सांभर में आए। उस समय सामन्तों ने तो कहा कि कल प्रातःकाल होते ही युद्ध करेंगे। परन्तु महाराजा ने भंडारी खींवसी और पुरोहित राजसिंह की अर्ज मानकर सामन्तों से कहा कि इस समय युद्ध के बजाय लूटमार करना ही ठीक है। फिर लूटमार शुरू कर दी, अजमेर का किला सुदृढ़ किया और उसमें सामन्तों को रख दिया।[1]

'राजरूपक' में राठौड़ों की वफादारी, स्वामीभक्ति, वीरता, उत्साह व कर्त्तव्यनिष्ठा प्रदर्शित होती है। ग्रन्थ में राठौड़ों की 13 शाखाओं के नाम, उनके प्रमुख योद्धाओं एवं उमरावों के नाम हैं, जिन्होंने समय समय पर कई युद्धों में अजीतसिंह की रक्षा व जोधपुर राज्य की प्राप्ति हेतु भाग लिया और अपने प्राणों की आहुतियां दीं। दिल्ली का युद्ध संवत् 1736 श्रावण वदि तीज, पुष्कर का युद्ध संवत् 1736 भादो वदी 11, चेतासर का युद्ध संवत् 1736 सुदी 13 सोमवार, नाडोल का युद्ध संवत् 1736 आश्विन वदि 7, जोधपुर का युद्ध संवत् 1736 आषाढ़ सुदी 9 को, राठौड़ों का मेड़ता में मुसलमानों से युद्ध संवत् 1739 श्रावण वदि 14 राठौड़ों के अनेक स्थान पर युद्ध और मीरों को पकड़ना, संवत् 1750 में राठौड़ों का अजीतसिंह के नेतृत्व में जोधपुर पर अधिकार करना, संवत् 1765 में और भी कई युद्धों का उल्लेख 'राजरूपक' में है।[2]

सन् 1681 से 1687 ई. तक की अवधि में राठौड़ सरदारों के उपद्रवों का सबसे अधिक विस्तृत विवरण 'राजरूपक' में मिलता है। 'सोनगरा चौहानों' व मेड़तिया राठौड़ों (डॉ. हुकमसिंह भाटी) के इतिहास में भी इस ग्रंथ का प्रयोग हुआ है। परन्तु अन्य सामन्तों की भूमिका जिन पर अभी तक काम नहीं हुआ है, 'राजरूपक' इस शोधपूर्ण अध्ययन के लिए उपयोगी ग्रंथ है।

3 जोधपुर राज्य का इतिहास जानने में उपयोगी— 'राजरूपक' जोधपुर राज्य के इतिहास लेखन के लिये अत्यन्त उपयोगी है। इस ग्रंथ में वंशोत्पत्ति महाराजा जसवन्तसिंह का स्वर्गवास संवत् 1735 में पोष वदि 10, गुरुवार को हुआ था[3] उस समय से महाराजा अजीतसिंह एवं अभयसिंह के जीवन की घटनाओं का प्रामाणिक वर्णन करता है। इसमें तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था, सामन्तों की भागीदारी से युक्त प्रबन्ध सामाजिक व नैतिक मान्यताओं आदि का लेखा जोखा है।

'राजरूपक' की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता तिथियुक्त घटनाओं का वर्णन है जो इतिहास लेखन में आवश्यक है। इतिहास शब्द का अर्थ ही है निश्चित रूप से ऐसा ही हुआ था। यदि तिथि का उल्लेख ही नहीं हो तो निश्चयात्मकता में सन्देह होने लगता है।

---

1 राजरूपक पृ 557
2 वही पृ 40 47 61 91 194 323
3 वही पृ 17

यद्यपि गोरीशंकर हीराचन्द ओझा ने राजरूपक का उपयोग अपने ग्रंथ जोधपुर राज्य के इतिहास में नही किया है तथापि महाराजा अजीतसिंह व महाराजा अमरसिंह पर लिखे स्वतन्त्र शोध प्रबंधों में उसके सूत्रों को मान्यता मिली है।

4 मारवाड़ मुगल सम्बन्ध को जानने में उपयोगी— राजरूपक मारवाड़ मुगल सम्बन्धों की जानकारी के लिये अत्यन्त उपयोगी है। मुगल बादशाहों के विरुद्ध महाराजा अजीतसिंह कभी युद्ध में संलग्न रहा तो कभी उनका मित्र बना रहा और कभी वह मुगल दरबार का सर्वाधिक प्रभावशाली व्यक्ति बन गया।

महाराजा अभयसिंह को बादशाह मोहम्मद शाह ने संवत् 1786 मे गुजरात के सूबेदार शेरबिलद के विरुद्ध अभियान पर जाने का बीड़ा दिया और उसके साथ गुजरात के सूबे का पट्टा, सिरोपाव हाथी घोड़े नकद तोड़ा सात वस्त्र मोतियों की माला और सिरपेच दिया।[1] अभयसिंह ने शेरबिलद को पराजित किया और गुजरात प्राप्त किया। यह विजय संवत् 1787 आश्विन सुदी 10 विजयादशमी को हुई।[2]

5 मारवाड़ मेवाड़ सम्बन्ध के अध्ययन में उपयोगी— राजरूपक मे मारवाड़ मेवाड़ के सम्बन्धों पर अत्यन्त प्रकाश डाला गया है। जब महाराजा जसवन्तसिंह की मृत्यु हुई उस समय जोधपुर राज्य के साथ मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण थे। लगभग 2 वर्ष तक जोधपुर के राठौड़ व उदयपुर के सिसोदिया राजपूत एक दूसरे के सहयोगी बने रहे और उन्होंने समय समय पर शाही सैनिकों का सामना किया शाही चौकियों व रसद को लूटा। जब संवत् 1749 ई मे महाराणा जयसिंह का अपने पुत्र युवराज अमरसिंह से मनमुटाव हो गया तब जयसिंह घाणराव आए और मेड़तिया ठाकुर की मारफत राठौड़ों से सहायता चाही। महाराजा अजीतसिंह ने चार सरदार करणोत दुर्गादास चापावत भगवानदास जोधा दुरजनसाल और ऊदावत अखैसिंह को सेना देकर भेजा। राठौड़ों और सिसोदियों ने मिलकर पिता पुत्र मे संधि करवा दी।[3]

संवत् 1753 मे महाराणा और अमरसिंह के बीच फिर मनमुटाव हुआ उस समय महाराणा ने अपने भाई गजसिंह की बेटी महाराजा अजीतसिंह को ब्याही। महाराजा अजीतसिंह बरात लेकर महाराणा के महल मे गए और वहाँ धूमधाम से विवाह हुआ।[4] महाराणा अमरसिंह के सम्बन्ध भी मारवाड़ के महाराजा अजीतसिंह से मैत्रीपूर्ण रहे। राजरूपक मेवाड़ मारवाड़ के सम्बन्धों को जानने मे सहायक है।

1 राजरूपक पृ 657
2 वही पृ 811
3 वही पृ 328
4 वही पृ 345

6 मारवाड़ आम्बेर सम्बन्ध जानने में उपयोगी—'राजरूपक' से जयपुर व मारवाड़ के शासकों के सम्बन्धों में समय समय पर हुए परिवर्तनों की भी जानकारी मिलती है। यह ग्रंथ मारवाड़ आम्बेर के सम्बन्धों का भी प्रामाणिक वर्णन करता है।[1]

7 महाराजा अभयसिंह कालीन इतिहास को जानने में उपयोगी—'राजरूपक' में महाराजा अभयसिंह के जीवन की घटनाओं का प्रामाणिक वर्णन मिलता है। संवत् 1759 मार्गशीर्ष बदि 14 को महाराजा अभयसिंह का जन्म हुआ। उस समय विशाखा नक्षत्र, मिथुन, लग्न शोभन योग और शकुनि करण था। उनके जन्मोत्सव में बंद से कैदी छोड़े गए मुल्क में बधाई बटी।[2]

उनकी युवराजकाल की कई घटनाओं का राजरूपक में वर्णन है जैसे संवत् 1770 ई॰ के वैशाख में महाराज कुमार अभयसिंहजी को दिल्ली भेजा जाना महाराज कुमार की दिल्ली में बादशाह से भेंट संवत् 1770 के आषाढ मास में बादशाह का अभयसिंह को गुजरात का सूबा देना महाराजकुमार का दिल्ली से जोधपुर आना संवत् 1770 जेठ मास इत्यादि।[3]

महाराजकुमार अभयसिंह की कुछ प्रमुख युद्ध गतिविधियाँ इस प्रकार हैं—संवत् 1778 में बादशाह ने मुजफ्फर खाँ को अजमेर पर भेजा। वह वर्षा ऋतु में अजमेर आया। महाराजा अजीतसिंह ने उसके मुकाबले के लिए महाराजकुमार अभयसिंह को आठों मिसल के सरदार व 3 000 सेना सहित अजमेर भेजा। उन्होंने सेना को तीन भागों में बांटकर युद्ध का नेतृत्व किया और विजय प्राप्त की। मुजफ्फर खाँ भागकर आम्बेर में जा घुसा। वहाँ से सेना छोड़कर दिल्ली चला गया। महाराजकुमार आम्बेर से आगे बढ़कर शाहजहाँपुर गए। उसे लूट कर वहाँ से नारनौल गए।[4]

महाराजकुमार अभयसिंह ने खाटू व लदाणा में विवाह किया।[5] महाराज कुमार काल की अभयसिंह की कार्यवाहियों पर ही 'राजरूपक' में वर्णन नहीं है बल्कि उनकी गद्दीनशीनी उनके विभिन्न युद्ध उनके काल के विभिन्न राजनीतिक घटनाक्रम सांस्कृतिक व धार्मिक जीवन, सैनिक संगठन आदि का भी तथ्यपरक वर्णन मिलता है।

राजरूपक' में उल्लेख है कि महाराजा अभयसिंह बादशाह से विदा लेकर संवत् 1781 में जोधपुर आए। पांचवें दिन दरबार किया सबका सत्कार कर

---

1 राजरूपक पृ 425 ■ 441
2 वही प 366 369
3 वही प 462-474
4 वही प 525 535
5 वही पृ 541 542

दयालदास सिक्दार को अपनी दरी पर बठने का कुरब दिया। गोरखदास बारहठ को गाँव और कुरब दिया। बारहठ रघुनाथ को सोने की कठी मोती कडा पाँच घोडे और गाँव दिया। इन दोना को कविराज की पदवी दी। खिडिया बखता और दधवाडिया मुकन का सासण के गाव दिए। यास फतराज और पुरोहित सूरजमल को उठने का कुरब दिया। इस प्रकार दरबार म उमराव चारण भाट, पुरोहित आदि सब को यथायोग्य ईनाम दिया गया। इससे महाराजा अभयसिंह की अपन कवियो व सरदारो का सम्मानित करने की भावना पर भी प्रकाश पडता है।[1]

महाराजा अभयसिंह ने होली का त्योहार मनाने क बाद सवत् 1781 मे नागौर पर चढाई की और विजय प्राप्त की।[2] महाराजा नागौर पर अधिकार करके मेडते आए वहाँ स सवत् 1782 म जतारण आए शरद ऋतु मे अनतर मगसर म जालौर गए, वहाँ के भोमियो का दबाया। बाला देवडा सीधल बालीसा देवल राव्रदडा साढा चौहान आदि ने सेवा करना स्वीकार किया। जालौर से महाराजा सिवाना आए। वहाँ से सवत् 1783 के श्रावण मे जोधपुर आए।[3] राजरूपक म महाराजा अभयसिंह की दिल्ली यात्रा का उल्लख है।

शीतकाल म महाराजा अभयसिंह दिल्ली जान क लिये रवाना हुए। जतारण मुकाम हुआ वहा से मेडते मेडत से परबतसर। यहाँ महाराजा को शीतला का रोग हुआ। ठीक होने पर जयपुर गय वहाँ ससुराल होने से कुछ दिन ठहरे। वहाँ स बसत के अत म दिल्ली गय। बादशाह मुहम्मदशाह ने बडा मान दिया। सवत 1784 म एक वष तक दिल्ली मे रहने के बाद महाराजा अभयसिंह ने जोधपुर जाने की इजाजत माँगी। बादशाह ने इजाजत नही दी क्योकि गुजरात का सूबेदार शेरबुलद शक्तिशाली हो गया था।[4]

महाराजा अभयसिंह के जीवन काल की प्रमुख घटना उसका गुजरात के सूबेदार शेरबुलद खाँ से युद्ध था। गुजरात का सूबेदार शेरबुलद खाँ बहुत शक्तिशाली हो गया था। बादशाह मुहम्मदशाह ने दरबार किया और सब अमीरो के सामने कहा कि शेरबुलद पर जाने का बीडा लो परन्तु किसी न बीडा नहीं लिया[5] तब दीवान कमरदीखाँ की अज पर बादशाह ने महाराजा अभयसिंह को शेरबुलद पर जाने के लिये बीडा दिया और उसके साथ गुजरात के सूबे का पट्टा, खिलअत हाथी घोडे, नकद तोडा सात वस्त्र, मोतियो की माला सिरपेच देकर महाराजा को आषाढ म विदा किया। दिल्ली से मारवाड म आने का वणन इस प्रकार है—महाराजा

1 राजरूपक प 616 622
2 वही पृ 630 632
3 वही प 631 632
4 वही प 641 648
5 वही पृ 656 57

मारवाड़ की तरफ चले। प्रथम जयपुर आए, श्रावण म वहीं ठहरे। वहाँ से मेड़ते भाद्रपद म आए। मार्गशीर्ष म महाराजा मेड़ते स जोधपुर आए। मार्गशीर्ष और फाल्गुन मास के मध्य चार विवाह हुए। जैसलमेर के ईसरदास की बेटी, भाटी नाहरखान की बेटी, रावल माधोसिंह की बेटी और जोरावरसिंह की बेटी।[1]

'राजरूपक' म महाराजा का युद्ध म जाने से पूर्व गृह प्रबंध करने की भी जानकारी मिलती है। जनाने की निगरानी पर नाजर दौलतराम रखा गया। दिल्ली बादशाह के पास लीमसी के पुत्र अमरसिंह भण्डारी को रखा, दूसरा मुहता जीवनदास तीसरा पुरोहित वरधमान। जोधपुर शहर भाटी साहिबखान के पुत्र सूजा की अधीनता म दिया गया। जोधपुर के किले में पत्तसिंह माधवसिंहोत और दूसरा चूंडावत करण को रखा। तीसरा गहड़ हरिसिंह। मुहता गिरधारीदास जीवणदास का पुत्र दयालदास का पुत्र गमीराम। राज्य की सुरक्षा का प्रबंध करने के बाद महाराजा ने सेना को तयार कर गुजरात जाने की तयारी की।[2]

रतनू चारण वीरभाण जो कि इस युद्ध में महाराजा अभयसिंह के साथ था, ने इस युद्ध का आँखों देखा वर्णन ही नहीं किया वरन् जिस मार्ग से होकर सेना अहमदाबाद पहुँची, इसका भी वर्णन किया है।

महाराजा का अहमदाबाद के अभियान में जो पड़ाव हुए उनका उल्लेख इस प्रकार है—संवत 1786 चत्र सुदी 10 को प्रातःकाल महाराजा जोधपुर से चढे। माद्राजूण म मुकाम हुआ, वहाँ चांपावत नाथूसिंह के पुत्र अमरसिंह व अचलसिंह के पुत्र बखतसिंह को बुलाकर दोनों को मालगढ में बसाकर वहीं रखा। वहाँ से महाराजा जालौर गए। सिवाना में भडारी बछराज और चौहान चतुरसिंह के पुत्र लालसिंह को रखा। बाला उदयसिंह को मोकलसर म रखा। जालौर में ग्रीष्म ऋतु व्यतीत की। देहवाड़ा का स्वामी सामा अधीन नहीं हुआ तब उस पर सेना भेजी। उसने पहाड़ को घेर लिया। चांपावत सूरजमल लड़ाई में मारा गया, परन्तु देवड़ा भी पहाड़ छोड़कर भाग गये। जब महाराजा की सेना ने गाँव पोसालिया लूटा तब सिरोही के राव मानसिंह ने संधि करके अपनी पुत्री का विवाह महाराजा अभयसिंह के साथ भादो वदि 8 को किया। भादो वदि 10 को महाराजकुमार रामसिंह का जन्म हुआ। महाराजा सिरोही होकर अहमदाबाद पहुँचे।[3]

राजरूपक म व्यूह रचना का भी रोचक विवरण दिया गया है। महाराजा ने अपने भाई बखतसिंह और उमरावों को बुलाया। राठौड़ों की तेरह शाखाओं के वीरों व अन्य राजपूतों चौहानों ईंदा सिसोदिया हाड़ा कछवाह, खीची

---

1 राजरूपक पृ 657 670
2 वही पृ 671 674
3 वही पृ 701 705

रिडमलोत सीधल भायल खुमाणा सोमावत गौड धाधू गहलोत इत्यादि वशो के अनेक वीरो को महाराजा ने उत्साहित किया। भडारी गिरधर रतन, विजैराज कायस्थ लाल और बालकिसन आदि भी शामिल थे।[1]

महाराजा ने युद्धारम्भ नक्कारा बजाने की आज्ञा दी। उधर शेरबुलद हाथी पर सवार हुआ। प्रथम तोपो की लड़ाई हुई फिर चापावत सकतसिंह माधोसिंह और कुशलसिंह आगे बढ़े और करणोत अमकरण शत्रु सेना पर चला। उनके साथ बखतसिंह के उमराव बढ़े और महाराजा ने आगे बढ़ हुए शत्रुओ का घेर लिया। इधर से महाराजा ने बाग उठाई उधर से शेरबुलद आगे बढा और युद्ध ने जोर पकड़ा। इतने म बाई धार माई बखतसिंह बढ़कर आया। उस समय मेडतिया जालमसिंह रघुनाथसिंहोत भडारी विजराज न पाडे उठाए। ये दाहिनी ओर म थे। बखतसिंह ने बाई अणी म रहकर यवन सेना का सहार कर डाला। महाराजा अभयसिंह की तलवार के प्रहार से तरीन खाँ मारा गया। पिछला प्रहर दिन रहा तब यवन सेना म खलबली मची। अलियार खाँ का सामना बखतसिंह न किया और वह भाग गया। शेरबुलद खाँ भी हताश होकर पीछे लौटा। उसक लौट जाने पर समस्त सेना भी लौटने लगी। राठोडो के 1 000 वीर घायल हुए। मुसलमानो के 6 000 सनिक मरे। महाराजा की विजय के बाजे बज। यह विजय सवत 1787 आश्विन सुदी 10 विजयादशमी को हुई थी। नवाब हारकर अपने डेरे पर गया।[2]

शेरबुलद खाँ न 5,000 सना लेकर पुन युद्ध किया। परन्तु महाराजा के सामने उसे भागना पड़ा। उसी अवसर पर नीबाज का ठाकुर ऊदावत अमरसिंह अहमदाबाद पहुचा। उसके साथ दो हजार योद्धा थ। शेरबुलद खा न अपने मनियो के दबाव के कारण अमरसिंह के पास सधि हेतु दूत भेजा। अमरसिंह की मध्यस्थता से महाराजा अभयसिंह व शेरबुलद मे सधि हुई और अभयसिंह को गुजरात का सूबा प्राप्त हुआ।[3] इस युद्ध म महाराजा के उन वीर सरदारो की भी सूची दी गयी है जो युद्ध म मारे गय। इस प्रकार राजरूपक इस काल मे स य सगठन का जानने म भी उपयोगी है। प्रम एग्रिस ने अपन ग्रथ महाराजा अभयसिंह कालीन इतिहास म 'राजरूपक' का उपयाग किया है।

8 धार्मिक आस्थाओं व तीर्थ यात्राओं की जानकारी— राजरूपक म महाराजा अजीतसिंह व अभयसिंह की तीर्थ यात्राओ पवित्र स्नान दानपुण्य व द्वारकानाथ के दर्शनो का उल्लेख है। महाराजा अजीतसिंह ने सवत् 1744 के भाद्रपद सुदि 10 को पाबूजी का दर्शन किया। महाराजा पोकरन होते हुए रामसापीर के दर्शन हेतु रुणेचा गए।[4]

---

1 राजरूपक पृ 714 716
2 वही पृ 716 811
3 वही पृ 812 825
4 वही पृ 303 305

राजरूपक' में उल्लेख है कि औरंगजेब की मृत्यु के बाद संवत् 1763 को महाराजा अजीतसिंह ने जोधपुर किले पर अधिकार कर लिया। कई तुर्क भाग गए कई छिप गए उनको माला कंठी पहनाकर छोड़ा। संवत् 1763 चैत वदि 13 को जोधपुर का गढ़ सजाया गया। मलेच्छों का संसर्ग होने से गंगाजल यमुनाजल और पुष्कर के जल से महल धुलवाए गए। ब्राह्मणों से वेद मंत्र पढ़ाये गए।[1]

संवत् 1773 में महाराजा अजीतसिंह सब शत्रुओं पर विजय हासिल करके द्वारका दर्शन के लिए चैत्र सुदी में रवाना हुए। ज्येष्ठ मास में द्वारका पहुँचे। इस यात्रा में महाराजा के साथ जनाना महाराजकुमार एवं कई लोग साथ थे।[2] राठौड़ों की इष्ट देवी नागणेचियाजी है, इनका नागाणा गाँव में मंदिर का 'राजरूपक' में उल्लेख है।[3] पुष्कर, हरिद्वार द्वारकानाथ एकलिंग महादेव, प्रयागराज आदि प्रमुख तीर्थ स्थानों में महाराजाओं द्वारा किये गये दानपुण्यों का उल्लेख राजरूपक' में है। महाराजा अभयसिंह का मथुरा में सवाई जयसिंह की पुत्री से संवत् 1781 में माघ वदि 8 को विवाह कर वृन्दावन जाने का भी उल्लेख है।[4] राजरूपक' में दीपावली होली, बसंत पंचमी आदि त्योहारों का उल्लेख भी हुआ है।[5]

9 सामाजिक पृष्ठभूमि व परम्पराओं को जानने में उपयोगी— राजरूपक में तत्कालीन राजपूत समाज में नारियों का स्थान व उनके आदर्शों पर प्रकाश पड़ता है। सतीप्रथा के बारे में भी जानकारी होती है। संवत् 1735 में पौष वदि 10 गुरुवार को महाराजा जसवंतसिंह का स्वर्गवास हो गया। रानी जादवजी सती होने को तैयार हुई परन्तु धीरसिंह के पुत्र उदयसिंह ने उसे रोक दिया, क्योंकि वह गर्भवती थी।[6] गर्भवती स्त्री को सती होने का अधिकार नहीं था। राजा के साथ उत्साह पूर्वक ■ उपस्त्रियाँ (पड़दायतें) नियम सहित सती हुई। चन्द्रावत रानी मंडोवर नामक स्थान में सती हुई।

राजरूपक में सतीप्रथा के बारे में विस्तार से विवरण दिया है। तत्कालीन राजपूत समाज में प्रचलित सती प्रथा पर शोध के लिए 'राजरूपक उपयोगी हो सकता है।

राजरूपक' में महाराजा अजीतसिंह व महाराजा अभयसिंह के विवाहों का उल्लेख है। उस काल में महाराजाओं के विवाह राजनीतिक दृष्टि से भी किये

---

1 राजरूपक पृ 407
2 वही पृ 488
3 वही पृ 305
4 वही पृ 598 614
5 वही पृ 631 641
6 वही पृ 16 17

जाते थे ऐसा इनके विवरणों से स्पष्ट है। यह भी स्पष्ट है कि विवाह धूमधाम एवं वैदिक रीति से किये जाते थे।

राजरूपक में महाराजा अजीतसिंह एवं महाराजा अभयसिंह के विभिन्न राजघरानों में वैवाहिक सम्बन्धों का उल्लेख है। इस ग्रंथ में महाराजा अभयसिंह का सदारणा के केसरीसिंह नरूका की पुत्री से विवाह का विस्तृत विवरण दिया गया है। बारात आगमन से लेकर पाणिग्रहण संस्कार तक के सारे रीति रिवाजों का उल्लेख इसमें किया गया है।[1] राजरूपक तत्कालीन राज परिवारों में प्रचलित बहुपत्नी प्रथा पर प्रकाश डालता है। महाराजाओं के विभिन्न राजघरानों से वैवाहिक सम्बन्धों के साथ साथ वैवाहिक पद्धति की भी जानकारी देता है।

निःसन्देह राजरूपक एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथ है। इसका महत्व न केवल मारवाड़ के इतिहास में है अपितु राजस्थान व मुगलकालीन इतिहास में भी है। यह ग्रंथ क्योंकि महाराजा अभयसिंह के लिये लिखा गया था अतः इसका वर्णन कहीं कहीं पक्षपातपूर्ण हो गया है। युद्धों में राठौड़ सरदारों के वीरत्व का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन है तथा अजीतसिंह की हत्या जैसी घटनाओं का उल्लेख नहीं है। शोधकर्ता को सावधानीपूर्वक इसका उपयोग करना चाहिये। लेकिन ऐतिहासिक दृष्टि से यह ग्रंथ बहुत महत्वपूर्ण है। कवि ने घटनाओं की तिथि मास व वार का ठीक ठीक उल्लेख किया है। बहुधा दिन का भी उल्लेख मिलता है। सम्पूर्ण विवरण क्रमबद्ध है। अतः शोध कार्य को आगे बढ़ाने में यह विशेष उपयोगी हो सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि राजरूपक में समाहित उन तथ्यों की जिन पर अभी तक कोई शोध कार्य नहीं हुआ है उन पर शोध किया जाये जिससे इतिहास जगत् को एक नई दिशा मिले।

---

1 राजरूपक पृ 541 547

सूरज प्रकाश* का ऐतिहासिक महत्त्व

—डॉ राजकृष्ण दूगड, जोधपुर

डिंगल मे ऐतिहासिक प्रबध एव मुक्तक काव्यो का प्रभूत भडार है। विक्रम की 15वी शताब्दी से 19वी शताब्दी तक राजस्थानी कवियो ने ऐतिहासिकता से परिपुष्ट एक से एक अनूठी कृतियो का प्रणयन किया। डिंगल के य काव्यग्रन्थ जिनम प्राय किसी राजा साम त अथवा रणबाकुरे योद्धा के ओजपूर्ण कृत्यो का ओजस्वी श दो म वणन प्रस्तुत किया गया है वस्तुत डिंगल साहित्य के हृदय हैं। इन काव्या म भी प्रमुखता ऐतिहासिक चरित काव्यो की है जिनम इतिहास के साथ ही साथ कल्पना की रगीन रसाए भी अकित हैं।

अब तक भारतीय विद्वाना की यह धारणा थी कि ये काव्य अतिरजनापूण वणनो कृत्रिम भाषाजाल एव ऐतिहासिक तथ्यो से रहित अपने आश्रयदाता के गुणगान के सीमित उद्देश्य स रचे गये केवल कल्पना के रगीन आवरण स सने काव्य है। परन्तु इधर जो शोध उन काव्य ग्रन्थो पर हुआ है उसन यह स्पष्ट कर दिया है कि ये चरितकाव्य ठोस ऐतिहासिक आधार पर निर्मित काव्य हैं जिनके रचयिता कवियो ने स्वय युद्ध म भाग लेकर उनका जीव त वणन प्रस्तुत किया है। इण चरितकाव्या के रचयिता जो अधिकतर चारण कवि थे कलम एव तलवार दोना के धनी थ। अपने आश्रयदाता के साथ युद्ध म कधा भिडाकर अपनी प्राणा की बाजी लगाने मे कभी पीछे नही रहे। कविया करणीदान एसे ही ख्यातिप्राप्त कविराजो की श्रेणी मे शीष स्थान के अधिकारी हैं। बहुश्रुत, बहुभाषा भाषी, प्राचीन तथ्या एव ऐतिहासिक घटनाओ के प्रचुर मात्रा मे जानकर कविया करणीदान ने 7 500 छन्दो के अपने वृहद् काव्यग्रथ सूरज प्रकाश' म प्राचीन एव अपने समकालीन ऐतिहासिक तथ्यो का प्रभूत मात्रा म विवेचन किया है।

उनके समकालीन कवि वीरभाण रतनू ने तो अपने प्रसिद्ध ग्रथ राजरूपक म ऐतिहासिक घटनावली का सूक्ष्म से सूक्ष्म विवरण घटना की तिथि वार सवत लडने वाले योद्धाओ, सनापतियो के नाम और युद्ध के परिणाम का विशद वणन सचमुच आश्चय म डालने वाला है। इसी कारण टाड रेऊ तथा ओझाजी जस इतिहासकारा ने राजरूपक एव सूरज प्रकाश का आधार लेकर अपने इतिहास ग्रथो का प्रणयन किया।

---

* सम्पादक सीताराम लाळस राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर

सूरज प्रकाश जैसा कि पूर्व मे वर्णित किया जा चुका है 7 500 छंदो का वृहत चरित काव्य है। कविया करणीदान रचित इस ग्रंथ के विषय मे कर्नल जेम्स टाड ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ राजपूताना का इतिहास मे लिखा है मारवाड के इतिहास का बहुत कुछ वर्णन मैंने इसी 'सूरज प्रकाश' के आधार पर किया है।' यही नहीं रेउजी एव ओझाजी सरीखे उद्भट इतिहासज्ञो ने भी इस दृष्टि से इसकी महत्ता स्वीकार की है।

ऐतिहासिक आधार पर 'सूरज प्रकाश' का विषयवस्तु स्पष्टत दो विभागो मे विभक्त है—पौराणिक एवम् ऐतिहासिक। ग्रंथ मे प्रारंभिक सूर्यवंश की वंशावली से लेकर महाराजा जयचद तक की सारी घटनाए पौराणिक आधार पर ही वर्णित हैं। ये मुख्य रूप से हैं—सूर्यवंश की वंशावली रामायण की कथा कुश से राजा पुंज तक की वंशावली राजा पुंज के तेरह पुत्रो का कथात्मक वर्णन एवम् उनसे राठौडो की तेरह शाखाओ की उत्पत्ति की कथा तथा राजा पुंज से लेकर जयचंद तक की वंशावली।

वंशावली सारी की सारी पौराणिक आधार पर वर्णित है। उसका अभी तक कोई ऐतिहासिक आधार प्राप्त नहीं हो सका है। पुराणो से इसका सम्बन्ध जोडा गया है परन्तु पुराणो की ऐतिहासिकता तो स्वयं सन्दिग्ध है। राजा पुंज के तेरह पुत्रो का नामोल्लेख तो ख्यातो मे उपलब्ध है परन्तु उनसे सम्बन्धित सारी कथाए कल्पित हैं। इस ओर सकेत करते हुए कवि कहता है—

कोइक सुकवि इमकहे वरस बहु त्रप किम वरणे।
वेद व्यास वायकां, साख भारत समरणे॥

अर्थात् जिस प्रकार महाकवि वेद व्यास ने महाभारत का निर्माण अपनी उर्वर कल्पना से किया उसी की साक्षी देकर मैं अनेक नृपतियो का वर्णन प्रस्तुत कर रहा हू। नैणसी री ख्यात मे राठौडो की तेरह शाखाओ की उत्पत्ति राजा धुंधमार के पुत्रो से बताई गई है। नैणसी ने और कोई विवरण भी नहीं दिया है। अत राजा पुंज के 13 पुत्रों का रोचक एव प्रभावशाली वर्णन कवि कल्पना की उपज मात्र ही है जिसकी पुष्टि ऐतिहासिक तो क्या पौराणिक सूत्रो से भी नहीं होती।

राजा जयचन्द की ऐतिहासिकता असंदिग्ध है। परन्तु सूरज प्रकाश मे वर्णित सारी घटनाए पूर्णतया कवि कल्पित ही हैं। न राजा जयचद के पास इतनी विशाल सेना थी न उसके आधीन इतने अधिक राजा ही थे। अटक के पार मुस्लिम नरेशो को परास्त करने का विवरण भी इतिहास की दृष्टि से सिद्ध नहीं होता।

जयचन्द के वंशज के रूप मे वर्णित राव सीहा की ऐतिहासिकता तो असंदिग्ध है परन्तु राव सीहा एव जयचन्द के बीच कौटुम्बिक सम्बन्ध पर आधुनिक इतिहासकारो मे मतभेद है। राव सीहा के मारवाड राज्य पर अधिकार की बात भी इतिहास सम्मत नहीं है। राव सीहा से राव रणमल तक की सारी वंशावली

इतिहास सम्मत है। कुछ अश को छोड़ कर रणमल सम्बन्धी सारी घटनावली ऐतिहासिक दृष्टि से प्रामाणिक है। रणमल ने अपनी बहिन के वशज कुभा की शिशु अवस्था मे मेवाड़ का शासन सम्भाला था परन्तु शीघ्र ही रणमल और राघवदेव के मतभेद के कारण रणमल की हत्या कर दी गई।

रणमल के पुत्र राव जोधा ने पिता के वध का वृत्तान्त सुना तो उसने मेवाड़ पर आक्रमण कर दिया एव पीछोला तक पहुँच गया। राणा कुभा को अन्त मे राव जोधा से मेल करना पड़ा। राव जोधा का यह वर्णन ऐतिहासिक दृष्टि से अप्रामाणिक है। राव जोधा के मेवाड़ पर आक्रमण की घटना तो ऐतिहासिक है परन्तु राव जोधा की विजय एव राणा कुभा द्वारा उससे सधि कर लेने की बात एकदम असत्य है। इसके विपरीत राणा कुभा ने मण्डोर पर अधिकार कर लिया और राव जोधा 14 वर्ष तक जगलो मे भटकता रहा। तब कहीं जाकर वह मण्डोर पर अधिकार कर पाया। इस प्रकार राव जोधा के वर्णन म भी कवि का अपने आश्रयदाता के पूर्वजों के प्रति पूर्वाग्रह स्पष्ट लक्षित होता है।

राव जोधा के पश्चात् राव सूजा के शासनकाल म पीपाड़ मे एक यवन सेनानायक द्वारा 140 तीजणिया के अपहरण एव राव सूजा द्वारा भयकर युद्ध मे सेनापति घुड़ले खाँ तथा 700 मुगल सनिको के मारे जाने का वृत्तान्त ऐतिहासिक दृष्टि से ठीक होने पर भी इस घटना का राव सातलजी के शासनकाल में सम्पन्न होना प्रमाणित है। कवि ने असावधानी से इस ऐतिहासिक घटना का राव सूजा के शासनकाल में होना अकित कर दिया है।

राव गागा के शासनकाल मे शेखा सूजावत द्वारा नागौर के शासक दौलत खाँ की मदद से जोधपुर पर आक्रमण की घटना इतिहास सम्मत है। इस युद्ध मे शेखा मारा गया और दौलत खा युद्धभूमि छोड़कर भाग गया। राव गागा से सम्बन्धित एक अन्य घटना जिसमें उन्होने खानवा के युद्ध मे राणा सागा को जख्मी होने पर सुरक्षित स्थान पर बचा लिया 'सूरज प्रकाश' म वर्णित नहीं है।

राव मालदेव का बहुत शक्तिशाली शासक के रूप मे 'सूरज प्रकाश' मे वर्णन हुआ है। उसने कई युद्ध किए जिनका उल्लेख करणीदान ने विस्तार से किया है। परन्तु सूरज प्रकाश' मे राव मालदेव एव शेरशाह के युद्ध का वर्णन नहीं मिलता जो एक निर्णायक घटना थी। मालदेव के हुमायू एव अकबर के सबध की चर्चा भी 'सूरज प्रकाश' मे नहीं है। मालदेव के पश्चात् राव चन्द्रसेन जसे महान् प्रतापी शासक का नामोल्लेख भी अन्य ग्रन्थकारों की भाति 'सूरज प्रकाश' मे नहीं है।

वस्तुत राव मालदेव के पश्चात् राव सूरसिंह, महाराजा गजसिंह महाराजा जसवन्तसिंह, महाराजा अजीतसिंह एव महाराजा अभयसिंह के शासनकाल का ब्यौरेवार वर्णन ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। वसे महाराजा जसवन्तसिंह के वर्णन

म कई ऐतिहासिक तथ्यो को अपने आश्रयदाता के पूर्वजो की प्रशसा मे तोडमरोड कर प्रस्तुत किया गया है। महाराजा जसवन्तसिंह की धरमत के युद्ध मे पराजय का वर्णन भी कवि ने जानबूझ कर छोड दिया है। इसके साथ ही कवि ने महाराजा जसवन्तसिंह के पिछले बीस वर्षों के इतिहास का भी कोई उल्लेख नहीं किया है। जबकि राजनीतिक दृष्टि से यह काल अत्यत महत्त्वपूर्ण था।

'सूरज प्रकाश' मे सबसे विस्तृत एव ब्यौरेवार वर्णन महाराजा अजीतसिंह का है। कवि महाराजा अभयसिंह का तो आश्रित ही था और महाराजा अजीतसिंह कवि के कथानायक के पिता थे तथा उनका शासनकाल कवि के जीवनकाल से लगा हुआ था। उसे घटनाओ की सही जानकारी काफी मात्रा मे थी। अत उन घटनाओ का वर्णन पूर्णतया इतिहास सम्मत है।

महाराजा अजीतसिंह के शासनकाल की सारी घटना इतिहास सम्मत है। केवल अजीतसिंह का जन्म दिल्ली म होना लिखा गया है जो ठीक नही है। उसका जन्म लाहौर मे हुआ था। कवि ने इस काल की जिन घटनाओ का उल्लेख अपने ग्रन्थ मे नहीं किया है वे हैं —

(1) अजीतसिंह की पुत्री इन्द्रकवर का फरुखसियर से विवाह।

(2) हुसन अली द्वारा जोधपुर पर आक्रमण व मुगलो एव राठोडो के बीच सधि।

(3) अजीतसिंह एव सय्यद व धुआ के गुट द्वारा फरुखसियर को गद्दी से उतार कर रफउद्दरजात को गद्दी पर बिठाया एव फरुखसियर को मरवा दिया।

(4) अजीतसिंह के द्वितीय पुत्र बखतसिंह द्वारा अपने पिता महाराजा अजीतसिंह की हत्या। इस तथ्य को कवि ने जानबूझ कर छिपाया है।

महाराजा अजीतसिंह की मृत्यु के पश्चात महाराजा अभयसिंह के शासनकाल की घटनाओ का विस्तृत वर्णन 'सूरज प्रकाश' मे उपलब्ध है। वस्तुत यह सारा वर्णन पूर्णतया इतिहास सम्मत है। 'राजरूपक' एव 'सूरज प्रकाश' के आधार पर ही महाराजा अभयसिंह के शासनकाल का विस्तृत वर्णन इतिहासकारो ने किया है। कवि *ने अहमदाबाद मे युद्ध का अत्यधिक विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया है। कवि स्वय इस* युद्ध मे उपस्थित था। अत यह वर्णन पूर्णतया प्रामाणिक है। कवि ने अहमदाबाद युद्ध का जिस विस्तार एव सूक्ष्मता से वर्णन किया है उसके द्वारा राठोडो की समर नीति पर भी विस्तार म प्रकाश पडता है।

यह ठीक है कि 'सूरज प्रकाश' एक प्रशस्तिवाचक काव्य है। अत अपने आश्रयदाताओ की प्रशसा का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया जाना स्वाभाविक भी है। इसके अतिरिक्त यह केवल शुद्ध ऐतिहासिक घटनावली को अकित करने वाला काव्य न होकर साहित्यिक काव्य ग्रन्थ है। अत इसमे यत्र तत्र कल्पना का उपयोग भी किया

हो गया है परन्तु इतना होते हुए भी ऐतिहासिक तत्वों का ताना बाना होने के कारण इसका ऐतिहासिक दृष्टि से भी बहुत मूल्य है।

'सूरज प्रकाश' की एक और विशेषता है। इसमे राज समाज की विस्तृत झलक के साथ साथ ही सामान्य जन जीवन का चित्रण भी यत्र-तत्र उपलब्ध होता है। सामाजिक रीतिनीति एवं व्यवहारो, धार्मिक विचारधारा, पारिवारिक जीवन एवं आर्थिक स्थिति का भी चित्रण यत्र तत्र उपलब्ध है जो ऐतिहासिक महत्व रखता है। सूरज प्रकाश मे तत्कालीन समाज का चित्र बखूबी मिल जाता है।

इस प्रकार राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक तथ्यो से युक्त 'सूरज प्रकाश' का ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक महत्व है। उच्च कोटि के साहित्यिक ग्रन्थ होते हुए भी इतनी ऐतिहासिकता बहुत कम काव्य ग्रंथो मे मिल सकती है। इसकी तुलना में हिन्दी के समकालीन काव्य ग्रन्थ एकदम नीरस एवं ऐतिहासिक तथ्यो से हीन बहुत ही निम्न स्थान के अधिकारी हैं। वीर रस के हिन्दी प्रबन्ध काव्य ग्रंथ केशव का वीरसिंह देव चरित मान का 'राज विलास' भूषण का 'शिवराज भूषण' लाल का छत्र प्रकाश' एवं सूदन का 'सुजान चरित' सूची परिगणन, कृत्रिम भाषा प्रयोग एवं अतिरंजनापूर्ण वर्णनो की भरमार आदि दुर्बलताओं से तो बोझिल हैं ही ऐतिहासिकता की दृष्टि से भी उनका कोई महत्व नहीं है। उनकी तुलना मे सूरज प्रकाश एक उत्कृष्ट कोटि का काव्य ग्रन्थ होने के साथ ही प्रामाणिक ऐतिहासिक तथ्यो से युक्त काव्य ग्रन्थ है जिसका मारवाड के नव इतिहास लेखन मे बखूबी उपयोग किया जा सकता है।

महावजस प्रकाश* का ऐतिहासिक महत्त्व

—डॉ जमनेशकुमार ओझा, कानोड

राजस्थानी भाषा के ग्रन्थ मुख्यतया दो रूपो (गद्य एव पद्य) मे उपलब्ध होते है। महावजस प्रकाश मानसिंह आशिया कृत पद्य बद्ध रचना है। प्रस्तुत शोध निबध महावजस प्रकाश ग्रन्थ का इतिहास लेखन म उपयोग के सदर्भ म है। नि सदेह सम्पादित ग्रन्थो का अवलोकन अध्ययन एव उपयोग कर राजस्थान इतिहास लेखन प्रक्रिया मे नवीनता के साथ साथ कई स्थलो पर आई ऐतिहासिक घटनाओ की रिक्तता की पूर्ति की जा सकती है। इस दृष्टि से महावजस प्रकाश का विशिष्ट महत्त्व है। इस लघु डिंगल काव्य म महासिंह सारगदेवोत एव रणबाज खा के बीच अप्रेल 1711 ई म हुए बाधनवाडा युद्ध का वृत्तात पारम्परिक रूप से दिया गया है। साहित्यिक महत्त्व के साथ साथ इस काव्य का ऐतिहासिक दृष्टि से बडा महत्त्व है। कवि मानसिंह आशिया विरचित इस काव्य को वि स 1768 मे आशिया गोरादान ने लिखा था। कवि मानसिंह आशिया ने इस काव्य म अपना कोई परिचय नही दिया किन्तु चारणो की आशिया शाखा के आधार पर सम्पादक डॉ॰ भाटी ने सम्पादकीय म बताया है कि महाराणा उदयसिंह का विवाह पाली के सोनगरा अखराज चौहान की पुत्री से हुआ था। तब करमसी आशिया पाली से महाराणा के साथ मेवाड चला आया। इसके वशधर सुकवि बखतराम आशिया (पमून्द ग्राम) ने अपने ग्रन्थ कीरत प्रकाश' मे वश क्रम देते हुए लिखा है कि आशिया परिवार पहले मारवाड म रहता था और अब मेवाड के महाराणा उदयसिंह के द्वार पर है। खेमसिंह का पुत्र करमसिंह हुआ और उसके वश क्रम मे बेरड भीम खेतल गिरधर सूरज पत्ता मानसी कृपाराम और जसवन्त हुए जिन्होने अपने सद्गुणो स हिन्दुवा सूरज (महाराणा) को प्रसन्न रखा। महाराणा उदयसिंह की करमसी पर असीम कृपा थी। उसकी पुत्री के विवाहोत्सव के समय महाराणा स्वय उसके घर आये और पमून्द ग्राम और कुरब इत्यादि प्रदान कर उसका सम्मान बढाया। करमसी का पौत्र खेतल हुआ जिसको महाराणा जगतसिंह प्रथम ने मघटिया ग्राम प्रदान किया। यहाँ उसके वशज अब भी रहते है। खेतल का पुत्र गिरधर हुआ जिसे महाराणा राजसिंह ने मदार ग्राम प्रदान किया। गिरधर आशिया ने *महाराणा प्रताप के अनुज शक्तिसिंह और उसके वशजो पर प्रकाश डालने वाले* ऐतिहासिक ग्रन्थ 'सगत रासो' की रचना कर अपनी विद्वत्ता का परिचय दिया। इसम शक्तावत-वीरो के नेतृत्व म लडे जाने वाले मेनास आदि युद्धों का बडा ही सुन्दर वर्णन किया है। गिरधर आशिया के पौत्र पत्ता ने सादडी के झाला राजराणा चन्द्रसेन की प्रशस्ति म गुण राजश्री झाला चन्द्रसेनजी नामक काव्य की रचना की। पत्ता के पुत्र मानसिंह ने इसकी प्रतिलिपि रामनारायण के ग्रन्थ से की । यो मानसिंह गिरधर आशिया

---

* सम्पादक डॉ हुकमसिंह भाटी प्रताप शोध प्रतिष्ठान उदयपुर

का प्रपौत्र एव पत्ता का सुपुत्र था। डा० कृष्णचद्र श्रोत्रिय ने मानसिह आशिया का साहित्यिक जीवन 1875 वि स मे प्रारम्भ होना स्वीकार किया है। 'महावजस प्रकाश' के आधार पर डा० भाटी ने उसका साहित्यिक जीवन वि स 1768 से प्रारम्भ हुआ स्वीकारा है।[1]

मैं पहले इस ग्रन्थ का विवरण प्रस्तुत कर फिर ऐतिहासिक महत्व उजागर करने का प्रयास करूँगा। शाह आलम बहादुरशाह ने माडलगढ बदनोर, पुर और मांडल परगने अधिकार पूवक छीनने के लिए अपने वीर सेनापति रणबाज खाँ की आधीनता मे एक सेना भेजी। महाराणा सग्रामसिह को जब यह समाचार मिला तो उसने सभी उमरावो को बुलाकर उनसे विचार विमश किया कि ऐसी स्थिति मे क्या करना चाहिए? इस पर महासिह बोला कि हम चित्तौड राज्य की थोडी सी जमीन नहीं देंगे और रणबाज खा से युद्ध करेंगे। तब 36 राजवश कुल की सेना तैयार की गई और उस विशाल सेना का नेतृत्व महासिह ने किया जिसम मेवाड के सुप्रसिद्ध वीर योद्धाओ ने भाग लिया। उनकी नामावली इस काव्य म दर्शाई गई है। हाथियो से सजी मेवाडी सेना ने उदयपुर से प्रस्थान किया। मेवाड की लाज रखने एव धम की रक्षा करने वाले महासिह को सवश्रेष्ठ बताते हुए कवि ने राजकुलो और क्षत्रिय जाति की शाखाओ प्रशाखाओ की वीरता एव विशिष्टता का बखान इस प्रकार किया है—सीसोदिया शत्रुओ को जड से उखाडने वाले हैं। स्तम बनकर आकाश को स्थिर रखने वाले हैं। राठौड बडे निडर और वीर क्षत्रिय हैं। कछवाहा वीर बडे क्षत्रिय के रूप मे प्रतिष्ठित हैं। चालुक्य अपनी तलवार की धार से हाथियो को नष्ट करने वाले हैं। चौहान शत्रुओ के समूह के सहारक है।

यादव आदि काल स ही अपनी पहचान नृप के रूप मे दे रहे हैं। परमार पृथ्वी के प्रमाण माने जाते हैं अर्थात् पृथ्वी तणा पवार पृथ्वी पवारा तणी। तवर तलवार के जौहर दिखाने वाले हैं। सूरमा और सोढा (पवार) सिह के समान पराक्रमी है। खीची चौहान समन प्रतापी हैं। हाडा चौहान बलशाली, अधरीक देवडा बाके वीर और सोनगरा चौहान शत्रुओ का सहार करन वाले हैं। शत्रुओ के सिर पर तपने वाले भाटी अमग हैं। निरवाण, टाक उमट प्रतापी हैं। महेचा राठौड मस्त होकर शत्रुओ का सहार करने वाले हैं। धाधल राठौड ससार मे प्रकाश मान हैं। गोहिल गौड वाघेला और चदेल विजय प्राप्त करने वाले हैं। अभरेचा झाओ व केलवा दुश्मनों की फौज रूपी कुमारी के लिये दूल्हा स्वरूप है। इसी भाति अहाडा उहड जेठवा कलवा सरवहिया हाला काबा पीपाडा, मगरोपा कूचौरा मामलिया, डाहिया, साखला पडिहार धावडा बालीसा हुल सिघल, असायच धूहड (राठोड) आदि विविध शाखाओ के क्षत्रिय वीर सुलतान की सेना पर विजय प्राप्त करने के लिये एकत्र हुए। मेवाड की विशाल सेना रणबाज खाँ से लडाई करने के लिये आगे बढी।

उधर रणबाज खाँ की सेना मे सरदारखाँ दलेलखाँ फीरोज खाँ आदि योद्धा थे। उसकी सेना में चगताई मगोल रोहेला रूमी पठान खुरासानी, बलोच उजबेग सय्यद गोरी, लोदी कायमखानी, मेवाती खथरी लाहौरी आदि शाखाओ के यवन बडे उत्साह के साथ लडने को उद्यत थे।

महासिंह को जब यवन सेना के समीप आने की सूचना मिली तो उसके क्रोध की कोई सीमा नही रही। मेवाड के सैनिको के पास कई तोप गाडिया, ब दूकें बाण और हाथी व घोडा के झुण्ड थे। रसद एव युद्ध सामग्री ऊँटो पर लदी हुई थी। आगे बढती मेवाड की सेना ऐसी लग रही थी जसे समुद्र अपनी सीमा लाघ कर पृथ्वी पर फैल गया हो। देदीप्यमान महासिंह अपने शूरवीरो के साथ शीघ्र ही आगे बढा और 12 कोस पर उसने अपना पडाव डाला। इसके बाद और आगे बढा और हुरडा नामक स्थान पर अपना शिविर लगाया।

बाधनवाडा के युद्ध स्थल पर सिन्धु राग मे वाद्ययत्र बजने लगे। दोनो सेनाओ ने युद्ध स्थल म प्रवेश किया। मेवाडी सेना मे 20 हजार योद्धा थे और बादशाही सेना तो सुविशाल थी। अत मेवाड की सेना ने रात्रि में युद्ध करने का निश्चय किया। महासिंह के आदेशानुसार सभी रावतों ने कवच धारण किय। घोडा हाथियो पर पाखरें डालकर उन्हें सजाया गया। कवि ने यहाँ परम्परागत घोडो व हाथियो का सुन्दर वर्णन किया है।

युद्ध से पूर्व सभी योद्धा मिलकर एक साथ भोजन करते हैं, पान के बीडे आरोगते हैं तथा तलवार कवच कटार आदि 36 प्रकार के शस्त्र धारण कर युद्ध के लिये तयार होते हैं। पहले महासिंह और उसका अनुज सूरतसिंह (काव्य में सूरतसिंह को महासिंह का पुत्र लिख दिया जो उपयुक्त नही है।) आदि घोडा पर बठकर आगे बढते हैं। उधर रणबाज खाँ बाघनवाडा के बाँके दुर्ग म मोर्चा लगाकर युद्ध के लिए तत्पर होता है।

महासिंह युद्ध भूमि मे उदीयमान सूर्य के समान प्रकट हुआ यवनो पर टूट पडा। बादशाह के सनिक कट कट कर धराशाही होने लगे। रक्त की नदियां बहने लगी। बाणो की वर्षा होने से शत्रु सेना भागने लगी। रणबाज खाँ और दलेल खाँ को मारकर पराक्रमी महासिंह ने अपार शौर्य का परिचय दिया। अतत शत्रुओ की बडी सेना को तहस-नहस कर मेवाड-वीरो के सिरमोर एव महापराक्रमी महासिंह सप्तमी शनिवार वि स 1769 के दिन वीरगति को प्राप्त हुआ।

ऐतिहासिक महत्व —'महावजस प्रकाश काव्य का एतिहासिक दृष्टि से बडा महत्त्व है। एक ओर अपने काव्य के नायक महासिंह के युद्ध कौशल का वर्णन सजीव सा लगता है वहीं दूसरी ओर इसमें भाग लेने वाले मेवाड के वीर राजपूतों एव विभिन्न जातियो की जानकारी भी मिलती है, जसे चौहान राठौड झोडिया सोलकी शक्तावत

चूण्डावत, झाला, माटी, कायस्थ ओसवाल आदि ।[1] निःसंदेह मेवाड़ मुगल संघर्ष के अंतिम युद्ध[2] बाघनवाड़ा युद्ध का ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा महत्त्व है । औरंगजेब ने महाराणा जयसिंह से जजिया के बदले में पुर, मांडल और बदनौर के परगने प्राप्त किये थे । इसके बाद एक लाख रुपया देना स्वीकार कर परगने पुनः ले लिये किन्तु रुपया अदा न करने पर ये परगने जब्त कर लिये गये । औरंगजेब की मृत्यु के बाद महाराणा अमरसिंह द्वि० ने 1708 ई० मे इन परगनों पर अपना आधिपत्य स्थापित कर तत्सबंधी फरमान मंगवाने का प्रयास किया । तभी वजीर मुनीमखाँ खानखाना का देहान्त हो गया और उसके स्थान पर वकील ए-मुतलक असदखाँ का पुत्र जुल्फिकार खाँ वजीर बना । उसने शाहजादा अजीमुश्शान के मना करने पर भी पुर, मांडल के परगने मेवाती रणबाजखाँ को दिला दिये । तब अजीमुश्शान ने मेवाड के वकील को संकेत दिया कि इन परगनों पर रणबाजखाँ का अधिकार किसी भी स्थिति मे न होने दें । इसकी सूचना वकील ने महाराणा संग्रामसिंह को दे दी । शाहजादा मुइज्जुद्दीन और वजीर जुल्फिकार खाँ के प्रोत्साहित करने से रणबाज खाँ शाही सेना के साथ इन परगनों पर अधिकार करने के लिए आया ।[3]

'महादजस प्रकाश' से ज्ञात होता है कि महाराणा संग्रामसिंह को जब रणबाजखाँ के आने की सूचना मिली तो उसने अपने उमरावों से विचार विमर्श किया । अंततः शाही सेना का मुकाबला करने के लिए बाठरडा के रावत महासिंह के नेतृत्व मे मेवाड की विशाल सेना ने प्रस्थान किया जिसमे निम्नलिखित प्रमुख सरदार सम्मिलित थे— रावत देवभांण चौहान (कोठारिया रावत उदयभांण का पुत्र) सूरतसिंह राठौड़ (निम्बाहेडा ठाकुर अमरसिंह मेडतिया का पुत्र) संग्रामसिंह (देवगढ़ रावत द्वारकादास चूण्डावत का पुत्र), देवीसिंह (बेगू रावत हरिसिंह चूण्डावत का पुत्र), सूरतसिंह (बाठरडा रावत महासिंह का अनुज) डोडिया नरनाह (नवलसिंह का वंशज नाहरसिंह कुंवारिया) रावत गंगदास (कासी रावत केसरसिंह का पुत्र) सूरजमल सोलंकी (रूपनगर ठाकुर वीका का उत्तराधिकारी), राज्जा झाला (देलवाड़ा के राज राणा जैतसिंह का पुत्र), सामंतसिंह चूण्डावत (सलूम्बर रावत केसरीसिंह का अनुज), महासबलावत भाटी (जसलमेर रावत मनोहरदास का पौत्र, भोई) रावत पृथ्वीसिंह दुलावत (आमेट रावत दूलेसिंह का उत्तराधिकारी), जसिंह राठोड़ (बदनौर ठाकुर जसवंतसिंह का प्रपौत्र), *सावंतसिंह (बदनौर ठाकुर श्यामदास का तीसरा पुत्र जिसे बड़ी रूपाहेली मिली)*, भारतसिंह (शाहपुरा दौलतसिंह का पुत्र), रावत कीतम, रावत मोहनसिंह मानावत, मधुकर शक्तावत, जसकरण, कान्हा कायस्थ (दोलत का पुत्र) सांवलदास मेहता और संग्रामसिंह राणावत आदि ।

---

1 महादजस प्रकाश पृ 79

2 डॉ० जे के ओझा मेवाड का इतिहास पृ 6

3 वैचारिकी (बीकानेर) भाग 12 अंक 1 पृ 22 द्रष्टव्य—जे के ओझा का लेख

बाँधनवाड़ा म दोना ग्रार की सेनाग्रों के बीच भीषण सग्राम हुग्रा जिसम महासिंह रणबाजखाँ को मारकर वीरगति को प्राप्त हुग्रा। इस घटना की तिथि के बारे म हमे फारसी ग्र थो ग्रथवा स्थानीय स्रोतो से कोई पता नहीं लगता है। यद्यपि युद्ध की तिथि के बारे मे पूर्ण जानकारी महावजस प्रकाश' मे भी स्पष्ट नही मिलती है, जसे सवत् तिथि ग्रौर वार दिया है, महीने का नाम नहीं लिखा है। डा० भाटी ने डा० गौ ही ग्रोझा द्वारा ग्रनुमानित समय को स्वीकार करते हुए बताया है कि 'काव्य में महासिंह का वि स 1768 सप्तमी शनिवार को मारा जाना लिखा है। इसम महीने का उल्लेख नही है। इस विजय के उपलक्ष म महाराणा के भेजे हुए परवानो मे सबसे पहला मेड़तिया राठौड़ो के नाम वि स 1768 ज्येष्ठ सुदी 2 का मिला है। चत्रादि वि स 1768 म ज्येष्ठ सुदी 2 के पूव शनिवार को सप्तमी केवल एक ही दिन वशाख सुदी को ही पड़ती है। ग्रत यह लड़ाई वि स 1768 वशाख सुदी 7 को हुई होगी।'

मैंने पुष्ट प्रमाणो के ग्राधार पर सुस्पष्ट किया है कि 'निमत्रण एव युद्ध मे काम ग्राने पर भेजे गये परवाने की तिथि के बीच ग्रर्थात् माह महीने के बाद ग्राषाढ माह के पूव सुदि 7 शनिवार केवल 1767 वि स के वशाख माह म ही मिलता है। ग्रत यह निर्विवाद पूवक कहा जा सकता है कि बाँधनवाड़ा का युद्ध वशाख सुदि 7 वि स 1767 (शनिवार ग्रप्रल 14, 1711 ई०) को ही हुग्रा था। महावजस प्रकाश म उल्लेखित वि स 1768 उपयुक्त नही जान पड़ता है ।'

रणबाजखा किसके हाथो मारा गया ? विवादास्पद है। बदनौर बम्बोरा शाहपुरा कानोड़ ग्रौर देवगढ़ वालो ने ग्रपने ग्रपने पूवजों को इसका श्रेय दिया है। इस का य से यह गुत्थी सुस्पष्ट हो जाती है कि रणबाजखाँ रावत महासिंह के हाथ से मारा गया। इसकी पुष्टि ग्रगस्त 31, 1711 ई० को महाराणा द्वारा प्रदत्त कानोड़ जागीर के नूतन पट्टे से स्पष्ट हो जाती है।

युद्ध से पूव सभी योद्धाग्रो का एक साथ मिल बठकर भोजन करना पान के बीड़े ग्ररोगना मनुहारें ग्रादि करना तत्कालीन राजपूतो की सद्धातिक युद्ध परम्परा का द्योतक है। विभिन्न प्रकार के ग्रस्त्र शस्त्र, घोड़े हाथियो उन पर पड़ी पाखरें ग्रादि की जानकारी भी होती है।

नि सदेह काव्य की भाषा काफी क्लिष्ट है जिसे एकाएक शोधार्थियो का समझना नितात दुष्कर है। ऐसी स्थिति म इस का य का सम्पादन कर राजस्थान इतिहास एव विशेषतया मेवाड़ इतिहास के इस कालक्रम की राजनीतिक, सामाजिक एव सास्कृतिक इतिहास की विभिन्न गुत्थियो रिक्तता को सुलझाने मे यह का य ग्रतीव महत्त्वपूर्ण है। काव्य म ग्रतिशयोक्ति का पुट ग्रवश्य होता है जिसे इतिहास का विद्यार्थी ग्रपनी पनी दृष्टि से तराशकर शुद्ध एव शाश्वत सामग्री का उपयोग कर सकता है। ग्रतएव राजस्थानी भाषा के सम्पादित ग्र थो म 'महावजस प्रकाश' का भी विशिष्ट महत्त्व है जिसका उपयोग कर इतिहास लेखन के सदभ में काल विशेष पर नूतन एव गहन जानकारियाँ उपलब्ध कराई जा सकती हैं।

भीम विलास* में मराठा गतिविधिया एक अध्ययन

—प्रो के एस गुप्ता, उदयपुर

किसना आढ़ा की वंश परम्परा — मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह (1778 1828 ई) विद्वानों का आश्रय दाता था। उसके काल में विपुल मात्रा में साहित्य सृजन हुआ। उसके दरबार में अनेक चारण कवि आश्रय पा रहे थे। इनमें सबसे प्रमुख दुरसा आढ़ा का वंशज किसना आढ़ा था। मेवाड़ के महाराणा अरिसिंह के समय (1761-1773 ई) उसके पितामह पनजी ने राज दरबार में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया था। उसका योगदान केवल साहित्यिक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं था अपितु वह तत्कालीन विभिन्न घटनाओं से भी सीधा सम्बन्धित रहा। टोपल मगरी युद्ध की महत्वपूर्ण भूमिका के लिए उसे कारणवास का गाँव जागीर में दिया गया।[1] अरिसिंह अथवा अड़सी की बूंदी राव द्वारा हत्या के समय भी वह अपने स्वामी के साथ उपस्थित था। इसी प्रकार पनजी का पुत्र दुरसा आढ़ा भी मेवाड़ दरबार में अपना वर्चस्व रखता था। इन्हीं का तीसरा पुत्र किसना आढ़ा था। किसना आढ़ा की जन्म तिथि के बारे में कुछ भी निश्चित नहीं है। परन्तु इतना तय है कि वह शीघ्र ही महाराणा भीमसिंह का कृपा पात्र हो गया था। 1807 ई में उसे नवा गाँव जागीर में देने का उल्लेख प्राप्त होता है। उसे जीवन पर्यन्त महाराणा का आश्रय प्राप्त होता रहा क्योंकि 1827 ई तक विभिन्न अवसरों पर उसकी जागीर के गाँवों में वृद्धि होती रही।[2] महाराणा ने अपने पुत्र जवानसिंह की शिक्षा दीक्षा का प्रबन्ध किसना आढ़ा के मार्ग दर्शन में कराया।[3]

किसना आढ़ा महाराणा भीमसिंह के दरबार में सर्वाधिक प्रतिभा सम्पन्न कवि था। वह विभिन्न भाषाओं का ज्ञाता था। उसने डिंगल और पिंगल में ग्रन्थ एवं फुटकर गीत लिखे। भीम विलास उसकी महत्वपूर्ण कृति है।[4] इसमें महाराणा भीमसिंह की प्रशस्ति है। इसका लेखन कार्य 1817 ई में प्रारम्भ हुआ और 1822 ई में पूर्ण हो गया। इसमें महाराणा भीमसिंह के शासन काल के अन्तिम [illegible] वर्षों का विवरण नहीं है।

---

* सम्पादक [illegible] देव कोठारी साहित्य संस्थान उदयपुर
1 भीम विलास छन्द सं 68
2 वही पृ 267 270
3 वही पृ 16
4 वही छं सं 770 774

'भीम विलास' की विषय वस्तु —किसना आढा ने ग्रथ के प्रारम्भ मे विभिन्न देवी देवताओ की स्तुति की है। तत्पश्चात् उसने मेवाड के राजवश को सूर्यवश से जोडते हुए इस वश के शासको का नामोल्लेख किया है। इसमे विष्णु से लेकर गुहादित्य तक के नामो का समावेश है।[1] कवि का मानना है कि बाप्पा ने मौर्य राजा को मारकर चित्तौड पर अधिकार किया। तत्पश्चात् मेवाड के ज्ञात शासको के (अरिसिंह द्वितीय तक के) नामों का विवरण दिया है।[2] ग्रथकार ने आश्रयदाता भीमसिंह का के द्र बनाकर पूर्व दो महाराणाओ को (अरिसिंह एव हमीरसिंह) उजागर करने का प्रयास किया है। किसना आढा ने इसके निर्माण म व्यापक दृष्टिकोण अपनाया है। इसमे राजनीतिक घटनाओ के साथ साथ धार्मिक सास्कृतिक एव सामाजिक रीति रिवाजो से सम्बंधित महत्वपूर्ण विवरण दिये हैं जो मेवाड के नव इतिहास लेखन में उपयोगी हैं।

मराठा गतिविधियों का वृत्तान्त — ऐतिहासिक दृष्टि से मेवाड म मराठा गतिविधियो के बारे म जितना विवरण इस ग्रन्थ मे उपलब्ध है अ यत्र कही नही है। यह कहे तो भी कोई अतिशयोक्ति नही है कि 19वी तथा 20वीं शता दी के पूर्वार्द्ध तक इतिहासवत्ताओ को भी मेवाड मराठा सम्ब धो पर प्रकाश डालन के लिए एक मात्र इसी ग्रथ पर आधारित रहना पडा है। श्यामलदास गौरीशकर हीराचद ओझा आदि के नाम उदाहरण के रूप मे दिये जा सकते हैं। कनल टाड को भी सामान्यत सम्पूर्ण मेवाड का और विशेषत उपयु क्त काल के इतिहास लेखन म सर्वाधिक सहयोग किसना आढा के इस ग्र थ से ही प्राप्त हुआ था। पर तु भीम विलास की आधार सामग्री के बारे में ग्र थ स कुछ भी निश्चित ज्ञात नही होता। वसे किसना आढा प्रभावशाली दरबारी था। उसके पिता एव पितामह का अपने अपने समय के महाराणाओ से निकट सम्ब ध थे। स्वय किसना आढा भी भीमसिंह का विश्वसनीय और अत्यधिक कृपा पात्र था। वह अनेक घटनाओ का प्रत्यक्षदर्शी था। अत भीम विलास ऐतिहासिक दृष्टि से प्रामाणिक ग्रथ माना जा सकता है।

मेवाड का गह युद्ध — अरिसिंह की गद्दीनशीनी से ही यह ग्रथ वास्तविक रूप से प्रारम्भ होता है। उसका गद्दी पर बठना ही मेवाड म गृह युद्ध का सूचक था।[3] महाराणा राजसिंह द्वितीय की नि सतान मृत्यु हो जाने से उसका काका अरिसिंह जो अडसी के नाम से प्रसिद्ध है 3 अप्रल सन् 1761 को मेवाड की गद्दी पर बठा। ऐसा माना जाता है कि राजसिंह की झाली रानी गर्भवती थी और कुछ समय पश्चात् उसने एक पुत्र को ज म दिया जिसका नाम रतनसिंह रखा। अब मेवाडी साम तो के दो दल हो गये। एक ने अडसी का समथन किया तो दूसरे ने रतनसिंह को समथन दिया।

---

1 वही छं सं 10-29
2 वही छ स 32-47
3 मेवाड एण्ड द मराठा रिलेशन्स के एस गुप्ता पृ 78

किसना याढा ने तो रतनसिंह को फितुरी' ही माना है ।[1] फिर भी इस प्रकरण का भीम विलास' में विशद वर्णन दिया है। किस प्रकार दोनों पक्षो ने मराठों की सहायता प्राप्त करने का प्रयास किया और इसका मेवाड पर कितना अनिष्टकारी प्रभाव पड़ा । यह 'भीम विलास' से स्पष्ट हो जाता है ।[2]

यह एक विडम्बना ही है कि 1761 ई का वर्ष मराठो से मुक्ति का वर्ष हो सकता था परन्तु घटनाक्रम के बदलते परिप्रेक्ष्य मे मेवाड इसका अनुकूल लाभ नही उठा सका । उपयुक्त वर्ष की 14 जनवरी को पानीपत के तृतीय युद्ध मे मराठो को करारी पराजय का सामना करना पड़ा था। मराठो के लिए भयकर सकट का काल था । उनको सनिक साधन और प्रतिष्ठा की दृष्टि मे गहरा आघात लगा । वैसे भी मराठो ने अपनी रीति-नीति से विशेषत राजपूत शक्ति का अपनी ओर आकर्षित करने के बजाय भयभीत ही किया । अत अब उत्तर भारत के अधिकाश राज्यो के अनुरूप राजस्थान म भी मराठा विरोध मुखर होने लग गया । स्वाभाविक रूप से यहाँ भी मराठा पराजय की प्रतिक्रिया प्रसन्नता के रूप मे हुई । उस समय न केवल यहाँ से मराठा को दिय जाने वाले कर को रोक दिया गया अपितु राजस्थान के शासको का मनोबल इतना बढ गया कि उ होने मराठो को राजस्थान से खदेडन के प्रयास तेज कर दिये । मेवाड मे भी मराठा विरोधी योजना पर विचार विमर्श होने लगा । यहाँ तक कि रामपुरा मे स्थित मराठा थाने को हटा दिया गया ।[3] इस बीच महाराणा राजसिंह की मृत्यु तथा बाद म मेवाड मे गृह युद्ध के वातावरण ने ऐसी स्थिति का निर्माण कर दिया जिससे मराठा विरोधी अभियान समाप्त हो गया । जिन क्षेत्रो से मराठो को हटाया उन पर पुन उनका अधिकार हो गया । और तो और अब तो मेवाड राजगद्दी के दोनो पक्ष मराठा स सहायता प्राप्त करने लगे । परिणाम स्वरूप मराठो के प्रभाव मे वृद्धि हुई । यह वृद्धि कसी हुई भीम विलास' में इस पर अच्छा प्रकाश डाला है । इतना ही नहीं किस प्रकार दोना पक्षो द्वारा महादजी सिन्धिया से मदद प्राप्त करने का प्रयास किया गया रतनसिंह को प्रारम्भिक सफलता कसे प्राप्त हुई ? अडसी किस प्रकार अन्य मराठा सरदारो को अपनी ओर मिलाने म सफल हुआ । सेना सहित अनेक प्रमुख सामन्तो तथा सलाहकारो को महादजी के पास भेजना क्षिप्रा के किनारे युद्ध होना तत्पश्चात् सिन्धिया का उदयपुर का घेराव अडसी द्वारा इसका प्रभावशाली ढग मे मुकाबला तथा अन्त मे सिन्धिया द्वारा बाध्य होकर घेरा उठाना आदि का विस्तृत विवरण भीम विलास म वर्णित है ।[4] 'भीम विलास' से ज्ञात होता है कि जस ही अडसी को रतनसिंह के महादजी से सहयोग प्राप्त करने के लिए उज्जन जान के समाचार ज्ञात हुए उसन भी अपने सामन्तो व अन्य पदाधिकारियो

1 भीम विलास छं स 65
2 वही छ स 65-130
3 मेवाड एण्ड द मराठा रिलेशन्स के एच गुप्ता पृ 75-78
4 भीम विलास छ सं 72 122

को सेना सहित महादजी को रतनसिंह के पक्ष से हटाकर अपनी ओर करने के लिए भेजा। कवि ने साथ जाने वाले सामन्तों के नाम भी दिये हैं, जिनमें प्रमुख बनेड़ा का राजा रायसिंह, धाखेराव का वीरमदेव सलूम्बर का रावत पहाड़सिंह शाहपुरा का राजा उम्मेदसिंह बिजोलिया का शुभकरण बम्बोरा का रावत कल्याणसिंह तथा झाला जालमसिंह अगरचन्द मेहता[1] के साथ साथ दो मराठा सरदार राघोराम अपने तीन हजार सवार और पांच हजार पैदल सैनिकों सहित तथा दौला मियां दो हजार सवारों सहित साथ थे।[2] किसना आढ़ा के अनुसार अड़सी के समर्थकों ने सिंधिया को यह समझाने का प्रयास किया कि महाराणा राजसिंह के कोई सन्तान नहीं होने से अड़सी ही उसका वास्तविक उत्तराधिकारी है परन्तु सिंधिया ने अपनी नीति में परिवर्तन कर अपना समर्थन रतनसिंह के प्रति रखा। स्थिति का निर्माण ऐसा हुआ कि दोनों सेनाओं के मध्य सिप्रा नदी के किनारे युद्ध हुआ उसका विस्तृत विवरण तथा इसमें अड़सी के पक्ष के मारे गये व्यक्तियों की सूची भीम विलास' में वर्णित है। रावत पहाड़सिंह तथा उम्मेदसिंह दोनों मराठा सरदार राघोराम और मियां दौला बनेड़ा का रायसिंह आदि मारे गए। जालमसिंह अगरचन्द मानसिंह को बन्दी बना लिया गया। जिनको अलग अलग ढंग से मुक्त करा लिया गया।[3] इस युद्ध के पश्चात् भी सघर्ष की समाप्ति नहीं हुई और रतनसिंह को राज्य दिलाने के उद्देश्य से महादजी सिंधिया सेना सहित मेवाड़ में आया और उदयपुर को घेर लिया।[4] किसना आढ़ा ने अड़सी द्वारा किये प्रतिरोध की विस्तृत जानकारी अपने ग्रन्थ में दी है। उदयपुर के सामरिक स्थानों पर किन किन को कितनी सेना के साथ नियुक्त किया यह भी वर्णित है। कई दिनों तक घेरा चला। ब्रह्मपोल व किसन पोल पर हुए युद्ध का वर्णन करते हुए किसना आढ़ा ने लिखा है कि सफलता के आसार न देख महादजी ने अड़सी को राणा के रूप में स्वीकार कर घेरा उठा लिया।[5]

जदुनाथ सरकार ने तो उदयपुर से उज्जैन की दूरी को देखते हुए क्षिप्रा पर युद्ध होने जैसी घटना को अप्रत्याशित माना है। साथ ही उन्होंने राघोराम मियां दौला आदि मराठा सरदारों का अड़सी से मिलकर सिंधिया के विरुद्ध हो जाने पर भी विश्वास नहीं किया है। जदुनाथ सरकार ने अपने मत निर्धारण का आधार यह बताया कि उपर्युक्त घटनाओं के सम्बन्ध में कोई रिकार्ड प्राप्त नहीं होता।[6] परन्तु समकालीन राजस्थान के पुरालेखों तथा मराठा स्रोतों से स्पष्ट है कि भीम विलास का विवरण इतिहास की कसौटी पर खरा उतरता है। सम्भवत

1 भीम विलास छ स 72
2 वही छ स 72
3 वही छं स 74 86
4 वही छ सं 87
5 वही स 87 130
6 फॉल ऑफ द मुगल एम्पायर भाग 2 जे एन सरकार पृ 380

वीर विनोद म प्रकाशित बहेरजी ताकपीर और रायोराम का इकरारनामा उनके देखने म न आया हो। 'वीर विनोद' में प्रकाशित इकरारनामे से स्पष्ट होता है कि दोनो मराठा सरदारो ने बीस लाख रुपये के एवज म महाराणा का सहयोग देने का वचन दिया।[1] बख्शी खाना बनेडा में उपलब्ध राजा रायसिंह के दो पत्रों से स्पष्ट है कि पायगा और मियां दोला ससैन्य अडसी की सेना में सम्मिलित थे।[2] पोकरण (मारवाड) ठिकाने में उपलब्ध 'समकालीन खबर रो वापनियो' म भी क्षिप्रा युद्ध की घटना, परिणाम, उसम मराठा सरदारो का अडसी के पक्ष में सम्मिलित होना तथा प्रमुख सामन्तो की मृत्यु का विवरण विस्तार स उपलब्ध होता है। इसस भी 'भीम विलास के विवरण की पुष्टि होती है।[3] इसी प्रकार 1769 ई० म महाराणा एव महादजी के मध्य हुए अहदनामे से भी किसना आढा के विवरण की पुष्टि होती है।[4] महाराणा अडसी द्वारा रूपाहेली के ठाकुर शिवसिंह तथा अमरजी महता का भेजे हुए खास रुक्का, पेशवा दफ्तर में प्रकाशित पत्रो से भीम विलास के वृत्तान्त के प्रति बिलकुल सन्देह नहीं रहता।[5] अत भीम विलास' में क्षिप्रा युद्ध के सदर्भ मे वर्णित घटनाओ के प्रति जदुनाथ सरकार के सन्देह का आधार निर्मूल है परन्तु परिणाम सम्बन्धी किसना आढा की मान्यताए इतिहास सम्मत नहा है। किसना आढा ने क्षिप्रा युद्ध मे अडसी की सेना की विजय बताई है जो सत्या से परे है। इसी प्रकार सिंधिया द्वारा घेरा उठाने की शर्तों के बारे मे 'भीम विलास मौन है।

महाराणा भीमसिंह और मराठा— भीम विलास' मे अडसी के उत्तराधिकारी हमीरसिंह के काल मे बालक भीमसिंह से उत्साह प्राप्त कर किस प्रकार विशाल मराठा सेना को खदेडा गया उसका उल्लेख है।[6] भीमसिंह के महाराणा बनने के पश्चात् तो भीम विलास मेवाड म मराठा गतिविधियो स भरा पडा है यथा राजस्थान मे योजना बद्ध ढग से मराठो का निष्कासित करने म मेवाड की भूमिका मोजीराम मेहता के नेतृत्व मे निम्बाहेडा निकुम्भ जावद जीरण आदि स्थानो पर मेवाड की सफलता का दिग्दर्शन भीम विलास कराता है।[7] इसी प्रकार रावत भीमसिंह के विरुद्ध सिंधिया

---

1 वीर विनोद श्यामलदास पृ 1553 1554 पूव आधुनिक राजस्थान रघुबीरसिंह पृ 189 190 मेवाड एण्ड द मराठा रिलेशन्स के एस गुप्ता पृ 189

2 बनेडा सग्रहालय फायल न 75 रायसिंह का पत्र नवाजी थी मानजी आदि को रायसिंह का पत्र कुवर हमीरसिंह को सवत् 1825

3 राजस्थान के ठिकानो एव घरानों की पुरालेख सामग्री हुकमसिंह भाटी पृ 140 142

4 वीर विनोद श्यामलदास पृ 1564 1565

5 चतुरकुल चरित्र इतिहास पृ 144 माण्डलगढ़ सकलन महाराणा अडसी का पत्र अमरजी को सवत् 1825 सलवानुस भीम पेशवा दफ्तर भाग 29 पत्र सख्या 229 बनेडा सग्रहालय के अभिलेख गुप्ता एव माथुर पृ 71

6 भीम विलास छ स 200 202

7 वही छ स 316-217

से सहायता प्राप्त करना महाराणा से सिंधिया की मिलने की उत्सुकता नाहरमगरा में मुलाकात होना पठान विद्रोह चित्तौड का घेरा सिंधिया के प्रतिनिधि अम्बाजी की सहायता से कुम्भलगढ विजय आदि के रोचक वर्णन भीम विलास मे वर्णित हैं। इनकी सत्यता समकालीन स्रोतो की वर्तमान मे उपलब्धता के आधार पर प्रमाणित होती है। इसी प्रकार मराठो मे आपसी वमनस्य होल्कर का नाथद्वारा पर आक्रमण मेवाड के सनिक प्रयास से श्रीनाथजी के विग्रह का सम्मान बनाये रखना छोटे बडे मराठा सरदारो की मेवाड मे लूटमार महादजी के उत्तराधिकारी दौलतराव सिंधिया का मेवाड आक्रमण मीरखाँ की गतिविधियाँ, जमशेदखा के कायकलाप, मराठो से मुक्ति पाने के लिए सलूम्बर के रावत भजीतसिंह का अग्रेजो के पास जाना आदि का विस्तृत उल्लेख भीम विलास म उपलब्ध है।[1]

कुल मिलाकर देखा जाए तो भीम विलास मे तत्कालीन मेवाड की स्थिति का अच्छा दिग्दशन हुआ है तथा यह ग्रथ प्रदेश और देश की स्थिति का आकलन करने का प्रामाणिक साधन है। अठारहवी शता दी मुगल साम्राज्य के विघटन का काल था। देश म कोई एक शक्तिशाली राज्य नही रहा। अनेक स्वतत्र एव अद्ध स्वतत्र राजनीतिक इकाइया अस्तित्व म आ गई थी। अत भारत के समग्र रूप से अध्ययन के लिए प्रादेशिक इतिहास का महत्व बढ गया है। इस दृष्टि से भीम विलास की अनुपम देन है क्योकि इससे स्पष्ट होता है कि मुगल साम्राज्य के विघटन से एक शक्ति की रिक्तता भारतीय राजनीतिक क्षितिज म उभर गयी थी उसकी पूर्ति कोई स्थानीय शक्ति न कर सकी। राजपूत और मराठा दोनो ही भारत की प्रमुख शक्तिया थी। वे ऐसी ताकतें थी जो इस पूर्ति के लिए पूर्ण रूपेण सक्षम थी।

'भीम विलास म इस विषय पर अच्छा प्रकाश पडा है कि ये दोनो शक्तिया क्यो असफल रहीं? तुच्छ स्वाथ अदूरदर्शिता सकीर्ण लाभ सुयोग्य नेतृत्व का अभाव आपसी फूट और वमनस्यता सकुचित दृष्टिकोण आदि अनेक कारण थे जो भीम विलास के आलोचनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होते हैं। ईस्ट इण्डिया कम्पनी से 1818 ई म मेवाड द्वारा सधि करने के पीछे मुख्य कारण क्या था इसका उत्तर भी भीम विलास म प्राप्त होता है। किसी भी घटना के पीछे केवल एक ही कारण हो आवश्यक नहीं है। परन्तु मेवाड-ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सधि के सन्दर्भ म इतिहासकारो मे दो स्पष्ट मत हैं। एक वर्ग का मानना है कि उपयुक्त सधि का मुख्य कारण मेवाड म मराठा उत्पात था। निरन्तर मराठा आक्रमणो से मेवाड इतना छिन्न भिन्न हो गया था कि उमको केवल इस सधि म ही शाति दिखाई देने लगी। सधि करने के लिए मेवाड को बाध्य होने का दूसरा कारण वहाँ के सामन्त थे जिन्होंने राज्य म ऐसी अराजकता उत्पन्न करदी कि शासक को अपने अस्तित्व का आधार कम्पनी से सधि

---

1 भीम विलास छं सं 322 333 373 374 400-486

करने में ही दिखाई दिया। भीम विलास' के विवरण से महाराणा और उसके दरबार का पक्ष ढूंढा जा सकता है।[1]

किसना आढा का मूल उद्देश्य तत्कालीन राजनीतिक घटनाओं के आलोक मे महाराणा भीमसिंह की उपलब्धियो को उजागर करना रहा है इसलिये वह कृष्णाकुमारी के विवाह को लेकर हुए बखेडे जसे मेवाड के गौरव को ठेस पहुँचाने वाली घटनाओ के बारे मे मौन ही रहा। राज्य की आर्थिक स्थिति आदि पहलुओ के बारे मे इस ग्रंथ से अपेक्षा करना निरर्थक है क्योंकि कवि का ऐसा उद्देश्य नहीं रहा।

निष्कर्षत किसना आढा कृत 'भीम विलास मेवाड के राजनीतिक पतन और बर्बादी की पृष्ठ भूमि मे सास्कृतिक मूल्यो की पुनर्स्थापना का आत्मपरक विश्लेषण है। ग्रंथकार ने अपने युग के इतिहास को दर्शाने का सफल प्रयास किया है। वास्तव म यह ग्रंथ मेवाड के राजनीतिक सामाजिक सास्कृतिक इतिहास लेखन में उपयोगी है।

---

1 भीम विलास छ स 520 523

इतिहास-लेखन में 'सोढायण'* की उपयोगिता

—डा शक्तिदान कविया, जोधपुर

राजस्थान के डिंगल साहित्य मे ऐतिहासिक प्रबन्धकाव्य गुण एव परिमाण दोनो दृष्टियों से विशेष उल्लेखनीय हैं। यहाँ के इतिहासकारों ने डिंगल एव पिंगल मे रचित ऐतिहासिक वीरकाव्यों के आधार पर ही अपने ग्रथो का प्रणयन किया है। आज भी इतिहास लेखन की गति और प्रगति के लिए राजस्थानी के सम्पादित ऐतिहासिक काव्य नवीन तथ्यों को उजागर करने मे सहायक सिद्ध हो सकते हैं। इसी दृष्टि से सोढायण ग्रथ का अनुशीलन आवश्यक है।

सोढायण' शब्द रामायण की भाँति दो शब्दो से बना है, सोढा+अयण जिसका अर्थ है सोढो का चरित्र। इस ग्रथ के रचनाकार महाकवि चिमनजी कविया जोधपुर जिलान्तर्गत शेरगढ़ तहसील के गाँव बिराई के निवासी थे। वे उच्चकोटि के डिंगल कवि थे। उन्होने मुजनरेश प्रागराव (देसल के पुत्र) की प्रशस्ति मे 'प्रागराव रूपक', बिलाड़ा के तत्कालीन दीवान लिछमणसिंह की प्रशस्ति मे 'लिछमण सुजस विलास' जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह (द्वितीय) की कीर्ति मे जसवत पिंगळ' नामक छन्दशास्त्रीय ग्रथ 'सम्मा रा झूलणा (यदुवशी क्षत्रियो की एक शाखा सम्मा जो सिन्ध प्रदेश मे है) और सोढायण जैसे ऐतिहासिक महत्त्व के प्रबन्धकाव्य रचे। सवत् 1933 वि कार्तिक शुक्ला तृतीया के दिन सोढायण की रचना पूर्ण हुई थी। कवि के इस ग्रथ की मूल प्रति जीर्ण शीर्ण अवस्था मे मुझे प्राप्त हुई और मैंने अत्यन्त परिश्रम पूर्वक उसका सम्पादन कर सन् 1966 ई में राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर से प्रकाशित करवाया।

सोढायण एकमात्र ऐतिहासिक प्रबन्ध काव्य है जिसमे सोढा जाति का ऐतिहासिक वृत्तान्त अंकित है। क्षत्रियो के चार वश सर्वप्रथम उत्पन्न हुए थे—परमार परिहार चौहान और सोलकी। परमार वश की 35 शाखाओ मे सोढा सर्वाधिक प्रसिद्ध है। सोढायण के अनुसार किराड़ू (किराट कूप) पर बाहड़राव परमार का राज्य था। उसका पुत्र बाहड़राव हुआ जिसने कोहिलापुर पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया। यह उल्लेख केवल सोढायण मे ही है। यथा—

---

* सम्पादक शक्तिदान कविया राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर

कोयलापुर पट्टण कनै निज्ज किराडू नाम ।
राजा बाहडराव र जलमे चाहडजाम ॥१
चाहड चावो च्यार चक, जस बाहड जोधार ।
कोयलापुर राजस कर, मेर पला परमार ॥२

इसी छाहडराव के दो पुत्र हुए—सोढा और सांखला । इन दोनों भाइयों के नाम स परमारो म सोढा और सांखला प्रसिद्ध शाखाएं विद्यमान हैं । कुछ लोग इस तथ्य से अनभिज्ञ होने के कारण एक कहावत का भ्रामक प्रयोग कर देते हैं—साढ घर सांखली सांखली घर सोढो । वे लोग यह नही जानते कि सोढा और सांखला दोनों सगे भाई थे । उपर्युक्त कहावत का वास्तविक रूप तो यह है कि—

मूढ घर सांखली, सांखली घर सूडो ।
सोम घर बूरता सो एक घर बूडो ॥

वस्तुत मूढा तो मारवाड के राठोडो की एक शाखा है जबकि सांखला परमारवंशीय हैं । बाहडराव ने पचास वर्ष तक राज्य किया और उसके गोलोकवासी होने पर बन्धु-बान्धवो और मन्त्रिया ने यह निर्णय किया कि छोटे पुत्र सांखला को राज्य का उत्तराधिकारी बनाया जाए । सोढा तो इतना पराक्रमी था कि सहज ही नया राज्य स्थापित कर सकता था । सोढा अपने विश्वस्त सैनिको के साथ सिन्ध की तरफ चल पड़ा । छह रातें मार्ग में व्यतीत कर सातवीं रात्रि के समय उसने रतोकोट पर धावा बोला और रता मुगल को मार कर वहां का शासक बन बैठा । सोढा ने बलाश के दुर्ग पर अपना आधिपत्य स्थापित कर 85 वर्ष तक राज्य किया था ।

सोढा के बाद उसके पुत्र रायदेव ने 62 वर्ष तक राज्य किया । फिर चावक राणा न उमरकोट पर आक्रमण कर 25 दिनों के संघर्ष के बाद विजय प्राप्त की । सोढायण के अनुसार यह घटना संवत् 1222 वि की है यथा—

समतूल बीज बावीस बरतपू । सोढ कोट आयो वतांण सरस्सू ।

उपर्युक्त तिथि का घ य इतिहास ग्रंथो म उल्लेख न होकर उमरकोट पर सोढों का सर्वप्रथम आधिपत्य स 1282 में माना है अमरकोट सिन्ध जो इतिहास और बुधजी थाणिया द्वारा प्रतिलिपि न परमारां रा कवित' रचना के अनुसार । सोढायण का मत इसलिए प्रामाणिक प्रतीत होता है कि सोढा द्वारा रताकोट पर अधिकार किये जाने का वर्ष रारोडा (उमरकोट) के देथा पीरदानजी सतीदानजी की प्राचीन हस्तलिखित बही में स 1181 माघ सुदि 13 लिखा है । साथ ही, सोढा के बाद क्रमश रायदेव, चावन अयभ्रम और जसहड राणा बने । उमरकोट के राणा जसहड ने भक नामक देथा को रारोडा गाँव (उमरकोट के पास) जागीर म दिया था संवत् 1291 वि में । यदि चावक राणा ने उमरकोट पर सर्वप्रथम अधिकार स 1282 में किया होता तो उसके पौत्र द्वारा देथा भक को जागीर प्रदान करने का वर्ष 1291 वि कैसे हो जाता

केवल 9 वर्ष के अन्तराल में ही। सोढायण में उल्लिखित तिथि सं 1222 के बाद चाचक राणा के पौत्र जसहड़ (राणा जयभ्रम का पुत्र) द्वारा 1291 में खारोड़ा की जागीर प्रदान करने का वर्ष युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

सोढायण में उमरकोट के शासकों की नामावली में तो सोढा खींवरा का नाम नहीं है किंतु ग्रन्थ के अन्तिम भाग में परमारों की प्रशस्ति के रूप में एक दोहे में उसे दानवीर सोढा के रूप में चित्रित किया गया है। जसे—

हस पसाव घीरम दियो दियो सोस जगदेव।
पनरसो दीना पमग सोढ खींवरै सेव॥

पश्चिमी राजस्थान और सिन्ध के थाट एवं पारकर जिलों में आज भी विवाह-मंडप में चवरी के समय 'सोढो खींवरो' लोक गीत गाया जाता है। सोढायण में यह प्रामाणिक उल्लेख है कि खींवरे साढे ने 1500 घोड़ों की रीझ की थी। एक अन्य दोहे में भी सोढायण के मत की पुष्टि होती है कि सोढा खींवरा ने अपने विवाह के समय सामेळा' से 'तोरण' तक जाते जाते पन्द्रह सौ पचास घोड़ों की पूरी वाल (समूह) कवियों कलाकारों को प्रदान कर दी थी। यथा—

सामेळा तोरण विच बाल इसा वरहास।
दीधा रांण खींवर, पनरसौ र पचास॥

उमरकोट के राणाओं की पीढियों के क्रम में सोढायण और नरणसी री ख्यात आदि में कुछ भिन्नता लक्षित होती है। राणा वीसा के समय खारोड़ा में चारणी महाशक्ति देवलबाई का उल्लेख सोढायण में सुस्पष्ट है। स्मरण रहे यही देवल बाई प्रसिद्ध लोकदेवी करणी माता की मौसेरी बहिन थी और स्वयं करणीजी खारोड़ा गांव (उमरकोट के पास) पधारी थी देवलबाई और उनकी दोनों पुत्रियां बूट एवं बहुचरा से मिलने हेतु। राणा वीसा को मारने के लिए दूदा नामक सोढा ससैन्य पहुंचा तो वीसा ने खारोड़ा में जाकर देवलबाई चारणी महाशक्ति की शरण ली। दूदा के सम्मुख अपना आंचल पसार देवल चारणी ने वीसा की प्राण रक्षा हेतु अनुरोध किया किंतु उस मदान्ध दुष्ट ने देवलबाई के पल्ले में रेत डाल दी। तब क्रुद्ध होकर उसे शाप दिया और वीसा का विजय का वरदान। हुआ भी वही। दूदा घर पहुंचते ही मर गया और राणा वीसा को राज्याधिकार प्राप्त हुआ। सोढायण में ही इस प्रसंग का सुस्पष्ट उल्लेख मिलता है अन्यत्र कहीं नहीं। स्वयं कवि के शब्दों में—

पडियौ राण हमीर धरा पर, कुळ नायर वीसौ सुध कवर।
ननम पडो राज सुध नाही। सो भव जोग इसो गत साई॥
जम रूपो दूदो जोरावर। राज लियो भाड राजेसुर।
वीस हूत काढियौ विवख। प्रथमी किम मोग बळ पवख॥

× × ×

लार दूढ़ मारथा लागो। म पड गयो लारोडे भागो।
वीरा लोवडि लाज वढाई। वोलो बूट बेहचर बाई।।
निल्लज पूठ पलै मां नाखो। धरियो क्रोध सगतमन धाखो।
कहियो देवल राज न करसो। मूरख धरे चौतिया मरसो।।

× × ×

दूढ हुता आप दे रूठ हुई सुरराय।
कर जोडे प्रसतुत कर, पडियो वीसो पाय।।

बालक राजा वीसा ने 98 वर्ष तक राज्य किया ऐसा 'सोढायण' का मत है। उसके बाद राणा तेजसी पाट बैठा। 'सोढायण' के अनुसार तेजसी और कान्हा दोनों भाई थे— तेज कान वीस तणा कहिय गजकवार' जब कि 'नणसी री ख्यात' के अनुसार तेजसी वीसावत के 12 पुत्रों में से चापा और कान्हा भी थे। 'सोढायण' के अनुसार तो राणा तेजसी का पुत्र कूपा और कूपा का पुत्र चापा हुआ।

यह विशेष उल्लेखनीय है कि उमरकोट के राणा चापा के पुत्र गागा और हापा में से कविया चिमनजी ने पाटवी गागा का वर्णन न कर उसके अनुज हापा से पृथक हुई उप शाखा को ही अपना वर्ण्य विषय बनाया क्योंकि हापा का पुत्र रूपा और पौत्र नबा था। नबा के वंशज आज भी नबा सोढा कहलाते हैं। प्रसिद्ध पूर्व पुरुष नबा का उत्तराधिकारी सोढा वरसी हुआ और वैरसी के चार पुत्र थे, पचायण देवसी रायसिंह और बाका। पाटवी पुत्र पचायण के उत्तराधिकारी क्रमश भाखरसी सूरदास रायसिंह और जगमाल हुए। इसी जगमाल और उसके वंशजों पर सोढायण' की कथावस्तु आगे बढती है। सोढायण के प्रारम्भ में ग्रंथकर्ता ने स्वयं लिख दिया था—

अथ सोढ जगमालजी री सोढायण ग्रन्थ लिखत"।

सोढा जगमालजी ने गोपानेर (वर्तमान गाधियार जो उमरकोट से 35 कोस पश्चिम की तरफ बसा है) पर अपना आधिपत्य स्थापित किया। उसका छोटा भाई गजसिंह भी बहुत पराक्रमी था। उस समय सिंध के सराई जाति के बलोच लुटेरों ने साठ घुडसवारों सहित गायों को घेर लिया। इसकी सूचना पाकर सोढा गजसिंह ने पीछा किया और जूझता हुआ वीरगति प्राप्त कर गया।

जगमाल सोढा ने जब उक्त वृत्तांत सुना तो ईसरदास नामक प्रधान को बुलाया और उसे वासासर (साचोर तहसील) गाँव तक भेज कर लुटेरों का पता लगवाया और उन्हें वीरत्वपूर्ण युद्ध करने हेतु पुन धाट चलने को उद्यत किया। बलोच मदान्धता में लौट आये और कापडीखान, धुरीखान आदि के नेतृत्व में सत्तामकोट के निकट आ पहुँचे।

ससामकोट (उमरकोट से लगभग 40 कोस पश्चिमोत्तर म बसा हुआ कस्बा) के पास आने पर अपशकुन हुए तो बलोच वहाँ से निकट ही भोरीला नामक गाँव में सोढा शिवराज के इलाके म जा पहुँचे। शिवराज शार्दूल सोढा वहाँ बलोचो से जूझता हुआ काम आया। यह खबर सुनकर ईसरदास सोढा दल बल सहित वहाँ जा पहुँचा जिसके साथ सोढो के सभी प्रमुख पक्षा के व्यक्ति और अन्य शाखाओ के क्षत्रिय भी थे। भयकर युद्ध हुआ जिसमे सोढा जगमाल ने बलोच नेता कापडीखान के साथ ऐसी टक्कर ली कि लुटेरो के पाँव उखड गये। इस प्रकार वीर जगमाल सोढा ने अपने अनुज गजसिंह का वैर लेकर अपने क्षेत्र की गायो को भी छुड़ा लिया। क्षात्र धर्म को उज्ज्वल करने वाले वीर जगमाल सोढा और उसके बन्धुओ के शौर्य एव गौरवमय आत्मोत्सर्ग का कीर्तिमान ही सोढायण' की कथावस्तु का अन्तिम अश है। अत ऐसे अनछुए प्रसग जो अद्यावधि इतिहासकारो की जानकारी म नही आ पाए हैं उनका *आधार सोढायण' में विद्यमान है। इस दृष्टि से सोढा जैसी शौर्य एव औदार्य से अभिमडित क्षत्रिय शाखा के सम्बन्ध मे एकमात्र प्रामाणिक एव महत्वपूर्ण ग्रन्थ कविया* चिमनजी कृत सोढायण है इसमे कोई सन्देह नही।